सम्पादकीय

मनुष्य माँ के पेट में रहता है नौ महीने तक, कोई दुकान तो चलाता नहीं है, फिर भी जीवित रहता है। हाथ-पैर भी इस लायक नहीं रहता है कि भोजन कर ले, फिर भी जीवित रहता है। श्वास लेने का भी उपाय नहीं होता है, फिर भी जीवित रहता है। नौ महीने माँ के पेट में, कैसे जीवित रहता है? मनुष्य की मर्जी क्या थी? किसकी मर्जी से जीवित रहा? गर्भ से बाहर होते ही मनुष्य जिसने इसके पहले साँस नहीं ली थी माँ के पेट में तो माँ के श्वास से ही काम चलता था- लेकिन जैसे ही माँ से बाहर होने का अवसर आया, तत्क्षण साँस ली किसने सिखाया? किसने मनुष्य को जीवन की समस्त प्रक्रिया दी है? कौन जब मनुष्य थक जाता है तो उसको सुला देता है? और कौन जब उसकी नींद पूरी हो जाती है तो उसको उठा देता है? कौन चलाता है इन चाँद-सूर्यों को? कौन इन वृक्षों को हरा रखता है? कौन खिलाता है फूल अनन्त-अनन्त रंगों के और गन्धों के?

इतने विराट का आयोजन जिस स्त्रोत से चल रहा है, एक मनुष्य की छोटी-सी जिन्दगी उसके सहारे ना चल सकेगी? थोड़ा सोचिए, थोड़ा ध्याान करिए। अगर इस विराट के आयोजन को मनुष्य चलते हुए देख रहा है, कहीं तो कोई व्यवधान नहीं है, सब सुन्दर चल तहा है, सुन्दरतम चल रहा है; सब बेझिझक चल रहा है। मनुष्य छोटा से एक अंश है इस जगत का, मनुष्य को यह भ्रान्ति कब से आ गयी गयी कि उसे स्वयं अपना जिम्मा अपने ऊपर लेना पड़ेगा? इसी भ्रान्ति में मनुष्य ने अपने जीवन के सारे कष्ट, असफलताएँ और विषाद उत्पन्न कर लिए हैं।

आइए ऐसे समय में जब मनुष्य 'नियन्ता' बनने को आतुर है तब 'प्रायोगिक रहस्यवाद' के मार्ग से भी मनुष्य और जगत् के व्यावहारिक सम्बन्ध को शोध दृष्टि प्रदान किया जाए।

(प्रबुद्ध मिश्र)

About the Triveni Sewa Samiti-

Triveni Sewa Samiti is registered under the Societies Act, 1860 (Act No.21) under no. 1796 dated 29/03/2008. The Society is also registered in Income Tax department. Any donation given in favour of the society is Tax Free under section 80G (5) (VI) 0f the Income Tax Act 1961. Society is committed to upgrade the intellectual values in society and in this process intellectuals, research-scholars and public in general are requested to the upliftment of human value on different levels of society related to the compliant of different matters on humanities. The research journal श्रीप्रभु pratibha is published by pratibha prakashan (publishing section of the Triveni Sewa Samiti).

The present office bearers of society are as follows- Mr. T.P. Mishra (chairman), Adv.Vinay Dwivedi (vice-chairman), Dr. Prabuddha Mishra (secretary), Smt. Ruchi Mishra (treasurer), Mr. Taran Tiwari & Mr. Raghvendr Verma (members), Adv. R.S.Tripathi (Legal-Adviser)

(Media In charge) Adv. Ashok Pandey (09451322636)

(Computer Composer) Mr. Shrawan Shukla (09450309552)

Patronage and Guidance-

Prof. D.N. Dwivedi, Prof. D.N. Tiwari, Prof. A.P. Gakhhar, Dr. R.S. Dubey, Dr. C.D. Pandey, Dr. S.C. Dubey, Dr. Pawan Kumar, Dr. Alok Kumar, Dr. Sateesh Tiwari, Dr. Chhaya Soni, Dr. Vikas.C. Verma, Dr. Atul Mishra, Dr. Kamlesh C. Pandey, Dr. Shambhavi Shukla.

ISSN-0974-522X
R.N.I.-UPHIN /2008/30056
ISRA Journal Impact Factor-2.397
UGC Approved journal SL No. - 47966

श्रीप्रभु

pratibhā

Research Journal of Humanities

Intellectual effort on social values

A peer reviewed (Refereed) journal

Year-9, Volume-3, Part-36
July - September, 2017

Editor– Prabuddha Mishra
Co-editor– Pratyush Pandey
Pratibha Tiwari

ISSN-0974-522X
R.N.I.-UPHIN /2008/30056
ISRA Journal Impact Factor-2.397
UGC Approved journal SL No. - 47966

श्रीप्रभु pratibha

Refereed Research Journal of Humanities

Year-9, Volume-3, Part-36
July - September, 2017

Contents

- **'किरातार्जुनीयम्' की द्रौपदी : एक आकलन**
  सविता ओझा एवं अलका त्रिपाठी 05-07
- **बाणभट्ट के साहित्य में पर्यावरण चेतना : वर्तमान परिप्रेक्ष्य**
  रूचि बरनवाल 08-09
- **दुरूह नहीं हिन्दी में मात्राओं का बोध**
  आभा 10-14
- **मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री विमर्श**
  ललिता सिंह 15-20
- **अधिनीतिशास्त्रीय चिन्तन की सामान्य रूपरेखा**
  अभिषेक उपाध्याय 21-25
- **गीता के लोक संग्रह का आदर्शः नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों के समसामयिक प्रासंगिकता के परिप्रेक्ष्य में**
  इन्दु प्रकाश सिंह 26-28
- **हथकरघा की दशा**
  पंकज कुमार राय 29-35
- **नैषधियचरित के आधार पर तत्कालीन राजनैतिक जीवन एवं प्रशासनिक प्रणाली**
  मधु सिंह 36-41
- **तुगलक शासकों की नीतियों का पर्यावरणीय अध्ययन**
  अनीता शुक्ला 42-44

- **सामाजिक न्याय की अवधारणा : डॉ0 अम्बेडकर की दृष्टिकोण से**
  अंजना 45-50
- **अर्थशास्त्र, नैतिक मूल्य एवं श्रीमद्भगवदगीता**
  महेन्द्र त्रिपाठी 51-57
- **सार्क और भारत : सहयोग और चुनौतियाँ**
  आशीष धर त्रिपाठी 58-63
- **भारतीय संस्कृति में परिवर्द्धित होते जीवन मूल्य : एक समीक्षा**
  ज्योत्स्ना पाण्डेय 64-68
- **हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों द्वारा ई–पुस्तकालय में प्रयोग किये जाने वाले सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के ज्ञान का अध्ययन**
  तुषार रञ्जन 69-72
- **ई-लर्निंग : गुण एवं दोष**
  हेमलता पन्त एवं चेतन प्रकाश तिवारी 73-74
- **बाल विकास के क्षेत्र में व्यक्तित्व विकास का तुलनात्मक अध्ययन**
  रेनू रानी 75-78
- **शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि पर सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन**
  अजय प्रकाश तिवारी 79-88
- **शिक्षण, अधिगम और मूल्यांकन में नवाचार**
  अरूणा श्रीवास्तव 89-94
- **रागों का उद्भव और विकास**
  शुचि तिवारी एवं विनीता बिहारी 95-102
- **The Study of Village: Regarding Non-Physical Parameters**
  Anshuman Upadhyay 103-105
- **The Role of Biological Sciences in Socio-Economic Development**
  Danish Zaheer & Swatantra Kumar 106-109
- **Parsi Ethos and Ethnic Anxiety in Rohinton Mistry's *Such A Long Journey***
  Jyoti Sharma & Arun Kumar Joshi 110-113
- **The effect of meditation on mental health & emotional intelligence**
  Shyam Sunder Pal 114-118

- **Terrorism versus Tourism**
  Suman Rai 119-120
- **Corporate Social Responsibility in Coal Mining Region And Rural Development in Dhanbad Region**
  Randhir Kumar 121-127
- **Innovative Rural Marketing in Present Global Scenario**
  Subarna Sarkar 128-134
- **The rallies of Seemanchal in Bihar election: through my own eyes**
  Ashish Vats & Pankaj Kumar Jha 135-141
- **Modernisation of Tourism in Jaipur**
  Pankaj Oswal & Jeetendra Singh Meena 142-148
- **Environmental Values & Ethics and the Gandhian Philosophy of Resource Management**
  Akhilesh Kumar Pandey 149-152
- **Army Deployed in Operational Areas**
  Abhishek Tripathi & Guljar Singh Rana 153-160

All the visions, thoughts and opinions published in श्रीप्रभु pratibha are of contributors. The acceptance of the Editor is not mandatory.

श्रीप्रभु pratibha

Research Journal of Humanities

INDIVIDUAL / INSTITUTIONAL MEMBERSHIP FORM

Kindly get me registered in the Pratibha Prakashan, Triveni Sewa Samiti Allahabad. I accept all the rules and regulations of the research journal श्रीप्रभु pratibha. The necessary details of mine/institution are as follows:-

Name_____

Designation_____

Subject/Department _____

Name of the Institution _____

_____

Contact No. (Personal) _____

(Institution) _____

E- Mail _____

Membership Fees (Cash) _____

Receiver _____

D. D. No. _____

Name of the Bank & Branch _____

Life Membership Fees is 3050/= payable in favour of Triveni Sewa Samiti Allahabad, D. D. or Through Cash Transfer.

Kindly send us the Research Journal on following Address –

_____

_____

_____

_____

_____

Signature

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-05-07
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

'किरातार्जुनीयम्' की द्रौपदी : एक आकलन

सविता ओझा एवं अलका त्रिपाठी

प्रस्तुत शोध पत्र में 'किरातार्जुनीयम्' के पात्रों में द्रौपदी के चरित्र को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसमें यह दिखाया गया है कि महिला पात्र केवल सौंदर्य की ही नहीं अपितु सशक्तता की भी प्रतिनिधि हो सकती है। शीर्षक को सम्यक् रूप से विश्लेषित करने के लिए द्रौपदी के राजनैतिक भूमिका को मूलतः उकेरा गया है। द्रौपदी के तर्क, बुद्धिमत्ता, ज्ञान, और पाण्डित्य, को कथा वस्तुओं के माध्यम से शीर्षक को व्याख्यायित किया गया है।

विश्व साहित्य में संस्कृत साहित्य का विशेष स्थान है। वैदिक और लौकिक संस्कृत साहित्य के भेद से संस्कृत साहित्य के दो रूप हैं। वैदिक के अन्तर्गत वेद, पुराण इत्यादि आते हैं जबकि लौकिक संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत काव्य एवं महाकाव्य की गणना की जाती है- *सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः।* [1]

कवेवृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा। नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु।। [2]

संस्कृत महाकाव्यों के इतिहास में कालिदासोत्तर परम्परा के प्रतिनिधि तीन महाकाव्यों को 'बृहत्त्रयी' कहकर प्रतिष्ठित किया गया है। जिस में *भारविकृत-किरातार्जुनीयम्, माघकृत-शिशुपालवधम* तथा *श्रीहर्षकृत् नैषधीयचरितम्* को समाहित किया गया है। इन तीनों महाकाव्यों का कथानक महाभारत पर अवलम्बित है।

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की संक्षिप्त विषय वस्तु- यह महाकवि भारवि विरचित प्रख्यात महाकाव्य है। इसका कथानक 'महाभारत' पर आधारित है। इन्द्र व शिव को प्रसन्न करने के लिए की गयी अर्जुन की तपश्चर्या ही इस महाकाव्य का वर्ण्य विषय है जिसे कवि ने 18 सर्गो में विस्तार से लिखा है। संस्कृत साहित्य के पंचमहाकाव्यों में भी 'किरातार्जुनीयम्' की गणना होती है।

द्रौपदी का जन्म- एक बार राजा द्रुपद ने गुरू द्रोणाचार्य का अपमान कर दिया था। गुरू द्रोणाचार्य इस अपमान को भूल नहीं पाये। इसलिए जब कौरवों और पांडवों ने शिक्षा समाप्ति के पश्चात गुरू से दक्षिणा मांगने के लिए कहा तो उन्होंने राजा द्रुपद को बंदी बनाकर अपने समक्ष प्रस्तुत करने को कहा। कौरवों के असफल रहने पर पाण्डवों ने द्रुपद को बंदी बनाकर द्रोणाचार्य के समक्ष प्रस्तुत किया। द्रोणाचार्य ने अपने अपमान का बदला लेते हुए द्रुपद का आधा राज्य स्वयं के पास रख लिया और शेष राज्य द्रुपद को देकर उन्हें मुक्त कर दिया। गुरू द्रोण से पराजित होने के उपरान्त महाराज द्रुपद अत्यन्त लज्जित हुए और उन्हें किसी प्रकार से नीचा दिखाने का उपाय सोचने लगे। इसी चिन्ता में वे कल्याणी नगरी के याज तथा उपयाज नामक महान कर्मकांडी ब्राह्मण भाइयों से मिले। राजा द्रुपद ने उनकी सेवा कर उन्हें प्रसन्न कर लिया एवं उनसे द्रोणाचार्य से प्रतिशोध का उपाय पूछा। उनके पूछने पर बड़े भाई याज ने कहा, *इसके लिए आप एक विशाल यज्ञ का आयोजन करके अग्निदेव को प्रसन्न कीजिए जिससे कि वे आपको महान बलशाली पुत्र का वरदान देंगे।* महाराज ने याज और उपयाज से उनके कथनानुसार यज्ञ करवाया। उनके यज्ञ से प्रसन्न होकर अग्निदेव ने उन्हे एक ऐसा पुत्र दिया जो सम्पूर्ण आयुध एवं कवच कुण्डल से

युक्त था। उसके पश्चात् उस यज्ञ कुण्ड से एक कन्या उत्पन्न हुई जिसके नेत्र खिले हुए कमल के समान देदीप्यमान थे, भौंहे चन्द्रमा के समान वक्र थी तथा उसका वर्ण श्यामल था। बालक का नाम धृष्टद्युम्न एवं बालिका का नाम कृष्णा रखा गया जो कि राजा द्रुपद की बेटी होने के कारण द्रौपदी कहलायी। यज्ञ की अग्नि से उत्पन्न होने के कारण यज्ञसेनी भी कही गयी। द्रौपदी को इन्द्र की पत्नी शची का अवतार भी कहा गया है।

जिस काल में यह मान्यता अति प्रचलित थी कि विवाहिता स्त्री का संरक्षण 'पति' द्वारा होता है ऐसे कालवधि में पाँच पतियों की पत्नी का भरी सभा में ऐसा अपमान! यज्ञाग्नि से आविर्भूत कन्या के प्रति मर्यादा का ऐसा अतिक्रमण! ऐसी स्त्री की पीड़ा का दंश उसके हृदय को प्रतिक्षण कितना उद्वेलित करता होगा? महाकवि भारवि ने सभवतः इस गर्विता स्त्री की इसी पीड़ा को अनुभूत करते हुए अपने महाकाव्य के प्रथम सर्ग में ही इसे उद्घाटित करने का प्रयास किया है। द्रौपदी का चरित्र अनोखा है विश्व इतिहास में उस जैसी कोई दूसरी स्त्री नहीं हुई। द्रौपदी का अनंत संताप उसका सम्बल था। संघर्षो में वह अकेली रही। द्रुपद की बेटी, धृष्टद्युम्न की बहन, पांच राजाओं की पत्नी पर फिर भी अकेली। द्रौपदी के बुद्धिमत्ता, तर्क, ज्ञान और पाण्डित्य के आगे महाभारत के सभी पात्र विवश दिखते हैं। जब भी वह प्रश्न करती है पूरी सभा निरूत्तर हो जाती है।

बुद्धिमत्ता- जब गुप्तचर द्वारा द्रौपदी को ज्ञात होता है कि दुर्योधन राज कार्य अच्छी तरह चला रहा है। उसने प्रजा के लिए अनेक कार्य योजनाएं तैयार की हैं साथ ही प्रजा भी उनके कार्य से संतुष्ट है। तब उसने अनुभव किया कि हमारे अकर्मण्य पति अभी तक उसका प्रतिकार भी नहीं कर सके। अतएव उसने युधिष्ठिर के क्रोध को उत्तेजित करने वाली बाते कहना आरंभ किया। *भवाद्वशेषु प्रमदाजनोदितं भवत्यविक्षेप इवानुशासनम्।*

तथाऽपि वक्तुं व्यवसाययन्ति मां निरस्तनारी समयादुराधाय।। [3]

भरत आदि पूर्व वंशजों के महान पराक्रम की याद दिलाकर द्रौपदी युधिष्ठिर को लज्जित करना चाहती है। कहां थे वह लोग और कहां हो तुम कि इतने बड़े साम्राज्य को अपने ही हाथों से नष्ट कर दिया। *अखण्डमाखण्डलतुल्य धाममिश्चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंशजैः।*

त्वयाऽऽत्महस्तेन मही मदच्युता मतङ्गजेन स्त्रगिवाजवर्जिता।। [4]

तर्क- द्रौपदी युधिष्ठिर को धिक्कारती है और तर्क देती है कि स्त्री के अपहरण के समान ही राजलक्ष्मी का अपहरण भी हानिकारक है। आपके समान निर्लज्ज ऐसा कोई दूसरा राजा मेरी दृष्टि मे नहीं है, जो अपनी पत्नी की भांति अपनी राजलक्ष्मी का अपहरण करने दे रहा है। *भवन्तमेतर्हि मनस्विगर्हिते विवर्त्तमानं नरदेव! वर्त्मनि।*

कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः शमीतरूं शुष्कमिवाग्निरूच्छिखः।। [5]

वह भाइयों की दुर्दशा याद दिलाकर युधिष्ठिर को समझाती है कि जो शक्तिमान होते हैं उनके लिए सर्वदा अपना कार्य करना ही कल्याणकारी है, समय अथवा प्रतिज्ञा की रक्षा कायरों के लिए उचित है- *न समय परिरक्षणं क्षमं ते निकृतपरेषु परेषु भूरिधाम्नः।* [6]

ज्ञान- 'किरातार्जुनीयम्' की द्रौपदी महाज्ञानी है। वह शांतचित्त युधिष्ठिर को अपनी ज्ञान भरे शब्दों से उत्तेजित करने का प्रयास करती है वह कहती है- हे राजन्! शान्ति को त्यागकर आप उस तेज को शत्रुओं के विनाशार्थ पुनः प्राप्त करें तथा प्रसन्न हों। निःस्पृह मुनि लोग शत्रुओं के कामादि मनोविकारों को तिरस्कृत करके शांति के द्वारा सिद्धि की प्राप्ति करते हैं *विहाय शान्तिं नृप धाम तत्पुनः प्रसीदसंधेहि वधाय विद्विषाम्।*

व्रजन्ति शत्रूनवधूय निःस्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः।।[7]

वह समझाती है कि आप जैसा तेजस्वी और यश को ही जीवन का उद्देश्य मानने वाला भी यदि शत्रुओं द्वारा प्राप्त दुर्दशा को सहन करता है तो साधारण मनुष्य के लिए क्या कहा जाय। अतएव पराक्रम करना ही आपका धर्म है।

पाण्डित्य- द्रौपदी कहती है कि **मानियों की विपदा, उनकी मानहानि बुरी है।**

द्विषन्निमित्ता यदियं दशा ततः समूलयुन्मूलयतीव में मनः।
परैरपर्यासितवीर्यसम्पदां पराभवोऽप्युत्सवः एव मानिनाम्।।[8]

वह युधिष्ठिर को समझाती है कि नीचता पर उतारू शत्रुओं के रहते हुए आप जैसे परम तेजस्वी के लिए तेरह वर्ष की अवधि की रक्षा की बात सोचना अनुचित है, क्योंकि विजय के अभिलाषी राजा अपने शत्रुओं के साथ किसी न किसी बहाने से संधि आदि को भंग ही कर देते हैं- *न समयपरिरक्षणं क्षमं ते निकृतिपरेषु परेषु भूरिधामनः।*
अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि।।[9]

निष्कर्ष- महाभारत आज भी उतना ही प्रासंगिक और उपयोगी है। वहीं समस्याएं और चुनौतियां हमारे सामने हैं। राजसत्ता के भीतर होने वाला षडयन्त्र हो या राज सत्ता का मद। आज भी द्रौपदियों का अपमान हो रहा है। अपने अपमान की आग में तपती द्रौपदी कौरवों के दर्प को कुचलने का प्रण लेती है। युद्ध के लिए पाण्डवों के पौरूष को ललकारती है। उस वक्त द्रौपदी नारी मुक्ति आंदोलन की नींव बन जाती है। जीवन के रणभूमि में अकेली खड़ी द्रौपदी ने अपने पतियों को हमेशा अधर्म के खिलाफ युद्ध के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार द्रौपदी का चरित्र अन्यतम है। इसीलिए पञ्चकन्यायों में द्रौपदी का नाम भी युक्त है। द्रौपदी की उक्ति **शठे शाठ्य समाचरेत** का उद्घोष करती हुई आज की स्त्रियों के प्रति होते अत्याचार का नैयायिक मार्ग प्रशस्त करती प्रतीत होती है।

सन्दर्भ-

1. उपाध्याय बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010, साहित्य दर्पण 6/315.
2. उपाध्याय बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010, साहित्य दर्पण 6/317.
3. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/28.
4. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/29.
5. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/32.
6. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/45.
7. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/42.
8. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/41.
9. मालवीय डॉ. सुधाकर, प्रकाशक -चौखम्बा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2009 किरातार्जुनीयम् 1/45.

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. उपाध्याय डॉ. रामजी एवं मिश्र रामगोपाल, संस्कृत के महाकवि और काव्य, चौखम्बा, वाराणसी, 1995.
2. उपाध्याय डॉ. रामजी संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, प्रकाशक-चौखम्बा विद्याभवन,वाराणसी, 1993.
3. राय विनय कुमार, संस्कृत साहित्य का नवीन इतिहास, प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1991.
4. उपाध्याय आचार्य बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास, प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010.
5. व्यास डॉ. भोलाशंकर, संस्कृत कवि दर्शन, प्रकाशक- चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2004.

डॉ0 सविता ओझा, एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
अलका त्रिपाठी, शोध छात्रा
संस्कृत विभाग, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-08-09
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

बाणभट्ट के साहित्य में पर्यावरण चेतना : वर्तमान परिप्रेक्ष्य

रूचि बरनवाल

महाकवि बाणभट्ट प्रकृति के चितेरे कवि हैं। संस्कृत साहित्य में पर्यावरण को ''प्रकृति चित्रण'' के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। कवि ने अपनी रचनाओं में पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं संचेतना को प्रस्तुत किया है, जो कि आज के युग में प्रासंगिक है। प्रकृति के विविध अंगों तथा नियमों के सूक्ष्म ज्ञाता मनीषियों ने प्राचीन संस्कृत साहित्य में पर्यावरण की भौतिक-जैविक-सांस्कृतिक विशेषताओं का यथार्थ चित्रण किया है।

बाणभट्ट की कृतियों के अध्ययन से विदित होता है कि उनकी कृतियाँ पर्यावरण संचेतना की पर्याय है। बाणभट्ट ने प्राकृतिक कारकों का जैसा सजीव वर्णन मानवीय प्रसंगों से जोड़कर अपनी कृतियों में किया, वह अद्भुत है। इनकी मुख्यतः तीन रचनाएँ मानी गयी हैं- *चण्डीशतकम्, हर्षचरितम् तथा कादम्बरी। चण्डीशतक पर्यावरण से सम्बन्धित गौण कार्य है जबकि हर्षचरित एवं कादम्बरी प्रकृति-चित्रण, पर्यावरण प्रदूषण कारण एवं निवारण के उपयोग की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।*

महाकवि बाणभट्ट ने 'चण्डीशतक' नामक स्त्रोत काव्य में महिषासुर का देवी द्वारा संहार करवाया है क्योंकि वह अपने आतंक से पर्यावरण के घटक तत्त्वों को प्रभावित कर रहा था। देवी द्वारा दैत्य का संहार करते ही सभी प्राकृतिक तत्त्व- पृथिवी, जल, तेज, वायु, आदि अपने स्वाभाविक अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। प्रकृति में विकार होगा तो उसका प्रभाव सभी पर दृष्टिगोचर होता है। अतएव बाणभट्ट ने विकार रहित प्रकृतिस्वरूपा देवी की स्तुति की है। देवी चण्डी ने प्राकृतिक घटकों और उनके अधिष्ठाता देवताओं को भयमुक्त कर स्वास्थ्य लाभ करवाया जो वर्तमान के मानव को पर्यावरण प्रदूषणकर्ता के विरुद्ध कठोर कानून बनाने पर जोर देता है।

हर्षचरित में बाणभट्ट ने सरस्वती द्वारा शिव की अष्टमूर्तियों का ध्यान करते हुए आठ फूल अर्पित करवाए हैं जो पर्यावरण के आठ घटक तत्त्व- पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, वनस्पति, पशु-पक्षी तथा यजमान हैं। प्राकृतिक तत्व संयमित एवं संतुलित रहेंगे तो पर्यावरण प्रदूषण की समस्या जड़मूल से समाप्त हो जाएगी। पृथिवी के शुद्धीकरण हेतु आश्रम की कुटिया को साफ करने तथा गोबर से लीपने का वर्णन किया गया है। आणविक विकिरण से बचाव के लिए गोबर रक्षा कवच का कार्य करता है।

महाराज प्रभाकरवर्धन द्वारा सूर्योपासना करने, वनों के संरक्षण हेतु स्वतंत्र वनपालों द्वारा लकड़ी काटने वालों के कुठार छीनने तथा हर्ष के पिता की मृत्यु से विह्वल महारानी यशोमती जो स्वयं सती होने जा रही है इनका भी भवन के पादपों, पशु-पक्षियों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व को लेकर चिन्तित होना मानव मन में पर्यावरण के प्रति संचेतना की भावना को उत्पन्न करता है। इस दृष्टि से हर्षचरित में विन्ध्याटवी ग्राम, ग्रामों के वृक्षों, औषधीय पौधों, यज्ञ व उसके प्रभाव का महाकवि ने सजीव चित्र प्रस्तुत किये हैं।

बाणभट्ट की प्रसिद्ध रचना कादम्बरी में भी पर्यावरण के घटक तत्त्वों पर अत्यधिक प्रकाश डाला गया है। कादम्बरी में पीपल आदि वनस्पतियों की पूजा करने, पीपल तथा नीम आदि वृक्षों के तत्वों को औषधीय गुणवत्ता के कारण गर्भावस्था कें समय विलासवती के कक्ष में बाँधकर प्रदूषण मुक्त करने का वर्णन प्राप्त होता है। अन्तःकरण की शुद्धि के लिए आयुर्वेद में पंचगव्य का विशिष्ट महत्व है। पंचगव्य के सेवन से शरीर, मन, और अन्तःकरण के विकार समाप्त हो जाते हैं।

प्रकृति के पंचमहाभूत, पृथ्वी, जल, तेज, वायु तथा आकाश मानव जीवन के लिए आवश्यक है। पंच महाभूतों का शुद्धीकरण स्वच्छ वातावरण का निर्माण करता है। बाणभट्ट ने विन्ध्याटवी, पम्पासरोवर, अच्छोद सरोवर, शून्याटवी, शाल्मली तरू, अगस्त्याश्रम, जाबालि आश्रम का वर्णन करते हुए ऋतु चक्र के निर्माण हेतु यज्ञ की महत्ता का दिग्दर्शन करवाया है, जिसे वर्तमान का मानव भी स्वीकार करने लगा है। यज्ञ पर्यावरण शुद्धि के प्रतीक हैं।

पाश्चात्य देशों की यांत्रिक प्रगति की अंधी दौड़ और अतिभोगवादी विकास से क्षुब्ध होकर भारत के प्रख्यात मनीषी **डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन्** ने कहा था– *मानव अन्तरिक्ष में उड़ना तो सीख लिया किन्तु मनुष्य की तरह पृथ्वी पर जीना उसे नहीं आया।* पर्यावरण चेतना को जन-जन तक पहुंचाने के लिए ही समस्त विश्व में प्रतिवर्ष 5 जून का दिन 'पर्यावरण दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मानव अपनी 'मन-वचन-कायिक' वृत्तियों को अहिंसक बनाकर पर्यावरण संतुलन में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से बचने के लिए सर्वप्रथम पर्यावरण विज्ञान के अध्ययन की अनिवार्यता की गई है। 'पर्यावरण शिक्षा' पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं समझ को विकसित करने की प्रक्रिया है। जैसा कि **ए0बी0 सक्सेना** ने Environmental Education में लिखा है- "Environmental education is a process to promote the awareness & understanding of the environment, its relationship with man & his activites it is also aimed at developing responsible action necessary for preservation, conservation & improvement of the environment & its components. For this three concepts of enviromental education flow 'about the environment' 'from the enviroment' & 'For the environment'.

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में पर्यावरण के लिए प्रयत्न करें तो सारा विश्व तनाव-मुक्त हो सकता है और यहाँ सुख और शान्ति की अमृत वर्षा हो सकती हे। बाणभट्ट की पर्यावरण संचेतना आज के मानव को प्राकृतिक तत्वों में सन्तुलन स्थापित करने की प्रेरणा प्रदान करता है। पर्यावरण के प्रति चेतना जाग्रत करना तथा पर्यावरण संरक्षण में बाणभट्ट का अविस्मरणीय योगदान है।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. दवे दया, वेदों में पर्यावरण, पृष्ठ-11, 18.
2. यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानंऽधर्मस्य तदात्म्हानं सृजाभ्याम्।। भगवद्गीता द्वितीय अध्याय।
3. पाठक पण्डित जगन्नाथ, हर्षचरितम्, प्रथम उच्छ्वास, पृष्ठ-35.
4. शर्मा विश्वनाथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-162.

रूचि बरनवाल
शोधच्छात्रा, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
गंगानाथ झा परिसर, इलाहाबाद, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-10-14
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

दुरूह नहीं हिन्दी में मात्राओं का बोध

आभा

प्रस्तुत शोध पत्र में गीत प्रविधि द्वारा हिन्दी भाषा में मात्राओं के शिक्षण एवं परंपरागत तरीके से हिन्दी भाषा में मात्राओं के शिक्षण का बालकों की उपलब्धि पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। सांख्यिकीय परिणामों के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्राओं का शिक्षण विद्यार्थियों की उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

राष्ट्र के पुनर्निर्माण के कार्य में भाषा की शिक्षा का विशेष महत्व है। भाषा के माध्यम से विद्यार्थी ज्ञान विज्ञान के अनेकानेक विषयों का अध्ययन करता है। यदि छात्र का अधिकार भाषा पर नहीं होता तो वह ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी प्रगति नहीं कर पाता। भाषा ही हमारे चिन्तन का आधार है। जिस प्रकार इस सृष्टि का निर्माता विधाता है, उसी प्रकार मानव भी अपनी सृष्टि का निर्माण करता है। मनुष्य अपनी आकांक्षाओं, वृत्तियों तथा मनोगत भावों का प्रकटीकरण भाव मुद्राओं, संकेतों तथा भाषा द्वारा करता है।

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपने विचारों एवं भावों को प्रकट करता है। व्यक्ति समाज से ही भाषा सीखता है और भाषा द्वारा ही वह समाज से सम्बन्ध स्थापित करता है। अतएव सामाजिक सहयोग का आधार भाषा ही है।

परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि भारत जैसे देश में हिन्दी भाषा को वह सम्मान नहीं मिलता, जो वास्तव में एक राष्ट्र भाषा को मिलना चाहिए। इस विरोधाभास की स्थिति में हिन्दी भाषा निरन्तर संघर्ष कर रही है। परिणामतः हिन्दी भाषा शिक्षण में ऐसी समस्याएं देखने को मिलती है जिनका तत्काल निवारण करना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता– प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्ती ने वर्तमान समय में हिन्दी भाषा में मात्राओं के ज्ञान की विद्यार्थियों में कमी को महसूस किया। बालक पूर्व प्राथमिक स्तर से पढ़ता हुआ उच्च शिक्षा तक ग्रहण कर लेता है लेकिन भाषा ज्ञान के नाम पर स्थिति जस की तस रहती है। क्योंकि वर्तमान में रटन्त पद्धति पर जोर दिया जाता है। जबकि आवश्यक है कि बालक खेल-खेल में मात्राओं का ज्ञान सीखे। जिससे बालक को मानक भाषा का ज्ञान हो सके। अतः बालक खेल-खेल में मात्राओं का ज्ञान प्राप्त कर सके। इसके लिए शोधकर्ती ने यह अध्ययन आवश्यक माना।

शोध उद्देश्य– कक्षा एक के विद्यार्थियों की हिन्दी भाषा में मात्राओं के बोध का अध्ययन करना।

परिकल्पना– कक्षा एक के विद्यार्थियों की मात्राओं के बोध में परम्परागत व गीत प्रविधि से सीखने में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रतिदर्श का चयन– प्रतिदर्श किसी अध्ययन के जन समुदाय का एक चयनित अंश होता है। **मिलर** ने यह भी संकेत किया है कि किसी प्रतिदर्श के लिए यह परमावश्यक है कि जिस समुदाय से यह लिया गया है उसका यथा सम्भव प्रतिनिधित्व करता हो। इसमें एक ही विद्यालय के यादृच्छिकृत विधि से 30 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

शोध प्रक्रिया- प्रस्तुत शोध कार्य के लिए **प्रयोगात्मक विधि** का चयन किया है। इसमें एक प्राथमिक विद्यालय के कक्षा 1 के 30 बालकों का चयन पूर्व परीक्षा में प्राप्त अंकों के आधार पर किया गया जिसमें 15 नियंत्रित तथा 15 प्रयोगात्मक समूह में रखे गए। नियंत्रित समूह को परम्परागत तरीके से मात्राओं का ज्ञान कराया गया तथा प्रयोगात्मक समूह को मात्राओं से सम्बन्धित गीतों के माध्यम से शिक्षण किया गया। प्रत्येक मात्रा से सम्बन्धित गीतों द्वारा प्रत्येक दिन एक कालांश का शिक्षण 15 दिन तक किया गया कुछ मात्राओं से सम्बन्धित गीत दिए गए-

(आ - ा) - राम बाजा बजा, काका कागज़ ला .....
(इ - ि) - हिरन चलकर आया, डाकिया किताब लाया .....
(ई - ी) - मछली जल की रानी, कहती नई कहानी .....
(उ - ु) - सुधा सुराही लाएगी, गुड़िया ससुराल जाएगी .....
(ऊ - ू) - सूरज चमका, चूहा कूदा .....
(ऋ - ृ) - ऋषि के पास था एक मृग, वह चरता था हरे-हरे तृण .....
(ए - े) - केला खाओ, सेहत बनाओ .....
(ऐ - ै) - बैल आए हल चलाए, सैनिक चलते-चलते आए .....
(ओ - ो) - चोर मचाए शोर, नाचता हुआ देखो मोर .....
(औ - ौ) - कौआ आया कौआ आया, फौजी खिलौने .....

परीक्षण हेतु शोधकर्ती द्वारा बनाई गई परीक्षण प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। शोध कार्य में मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण का प्रयोग किया गया है। सार्थकता का स्तर ज्ञात करने के लिए स्वतन्त्रता के स्तर 0.05 एवं 0.01 का प्रयोग किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या- सारणी संख्या-1

नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह की प्रयोग से पूर्व प्राप्त अंकों के मध्यमान एवं मानक विचलन की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलनS.D.	t- मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	8.00	2.39	1.438	0.05
प्रयोगात्मक	15	6.93	1.61		

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि प्रयोगात्मक एवं नियन्त्रित समूह की शैक्षणिक उपलब्धि समान है। सार्थकता देखने के लिए निकाले गए टी का मान 1.438 है जो टी सारणी में स्वतन्त्रता के अंश 28 पर 0.05 विश्वास के स्तर पर निर्धारित मान 2.05 से कम है। अतः समूहों में सार्थक अंतर नही है।

सारणी संख्या-2

'आ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रविधि द्वारा शिक्षण की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	6	2.13	4.77	
प्रयोगात्मक	15	10	2.45		

सारणी संख्या 2 में आ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 6 एवं 10 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 4.77 है जो

सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-3

'इ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	5	2.13	5.96	0.01
प्रयोगात्मक	15	10	2.45		

सारणी संख्या 3 में इ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 5 एवं 10 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 5.96 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-4

'ई' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t- मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	5.53	1.543	4.40	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.67	2.30		

सारणी संख्या 4 में ई की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 5.53 एवं 8.67 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 4.40 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-5 'उ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलनS.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	6	1.751	6.33	0.01
प्रयोगात्मक	15	10.4	2.052		

सारणी संख्या 5 में उ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 6 एवं 10.4 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 6.33 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-6

'ऊ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	6.20	1.42	3.796	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.93	1.65		

सारणी संख्या 6 में ऊ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक

समूह का मध्यमान 6.20 एवं 8.93 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 3.796 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-7

'ऋ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t- मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	07	1.50	5.19	0.01
प्रयोगात्मक	15	10.4	2.052		

सारणी संख्या 7 में ऋ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 7 एवं 10.4 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 5.19 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-8

'ए' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t- मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	6	2.13	3.30	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.67	2.30		

सारणी संख्या 8 में ए की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 6 एवं 8.67 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 3.30 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-9

'ऐ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	5.53	1.54	5.84	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.93	1.65		

सारणी संख्या 9 में ऐ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 5.53 एवं 8.93 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 5.84 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-10 'ओ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	छात्रों की संख्या=N	मध्यमानM	मानक विचलन S.D.	t-मान	सार्थकता का स्तर
नियंत्रित	15	5.46	2.01	4.	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.53	1.99	20	

सारणी संख्या 10 में आ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 5.46 एवं 8.53 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 4.20 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

सारणी संख्या-11

'औ' की मात्रा के बोध में परम्परागत शिक्षण व गति प्रवधि की तुलना

समूह	**छात्रों की संख्या**=N	**मध्यमान**M	**मानक विचलन**S.D.	t-**मान**	**सार्थकता का स्तर**
नियंत्रित	15	7	1.50	2.	0.01
प्रयोगात्मक	15	8.67	2.30	35	

सारणी संख्या 11 में औ की मात्रा के बोध का परम्परागत व गीत प्रविधि द्वारा प्राप्त माध्यमान व मानव विचलन द्वारा तुलना की गई है जिसमें नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह का मध्यमान 7 एवं 8.67 है और दोनों मध्यमानों से प्राप्त टी का मान 2.35 है जो सार्थकता के स्तर 0.01 के मूल्य 2.76 से कही अधिक है। जिससे स्पष्ट होता है कि गीत प्रविधि द्वारा मात्रा का शिक्षण अधिक प्रभावशाली है।

इस संदर्भ में शिक्षकों हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं-

- शिक्षक को हिन्दी भाषा में मात्रा का ज्ञान विद्यार्थियों के मध्य सरल एवं तार्किक ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए।
- शिक्षक को अध्यापन कार्य इस तरीके से करना चाहिए ताकि विद्यार्थी गीत प्रविधि से ज्ञान प्राप्त कर सके तथा उसका दैनिक जीवन में प्रयोग कर सके।
- शिक्षक को प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों को भाषा के अन्य प्रकरण की खेल-खेल में सिखाने चाहिए।
- शिक्षक प्राथमिक स्तर पर भाषा को रटाने की अपेक्षा उसकी वैज्ञानिकता को बनाए रखते हुए बालकों को गीत प्रविधि से सीखने के लिए प्रोत्साहित करें।

सहायक ग्रन्थ-

- सिंह परमजीत, फनी हिन्दी सारंग, प्रीत पब्लिकेशन दिल्ली।
- पाण्डेय रामशकल, नूतन हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
- मैदीरत्ता उर्मिला, हमारा इन्द्रधनुष, जीवन बुक्स इन्टरनेशनल प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
- सिंह अरूण कुमार, मनोविज्ञान समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ।
- कौशिक जयनारायण, हिन्दी शिक्षण।
- त्यागी गुरसरन दास, भारत में शिक्षा का विकास।
- शर्मा आर0ए0, शिक्षा अनुसन्धान।

कु0 आभा
शोध छात्रा, शिक्षा विभाग
एन0 ए0 एस0 कॉलिज मेरठ, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-15-20
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री विमर्श

ललिता सिंह

मैत्रेयी पुष्पा ने सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड को अपने सृजन को कथानक के रूप में चयनित किया। प्रस्तुत लेख में उनके इस साहित्यिक सत्य को दर्शाने का प्रयास किया गया है कि समाज सृजन में स्त्री का कोई सहयोग है या नहीं। जहाँ तक शोध कर्त्री ने अनुभव किया कि स्त्री का मांसल सौन्दर्य पुरुष के लिए मात्र भोग विलास का उपादान है इस सच्चाई को इसी रूप में मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में चित्रित किया।

स्त्री का आत्मसंघर्ष निरन्तरता में प्रत्येक युग में विद्यमान रहा है। परम्परागत दृष्टि से स्त्री के प्रति व्यवस्था का व्यवहार निश्चित मानदंडो, आदर्शों के नियत आचारों से संचालित होता रहा है जिसमें स्त्री को तय कर दी गई भूमिका के अनुसार जीना पड़ता है। जिसके निर्धारण का अधिकार शताब्दियों से पुरुष ने अपने पास सुरक्षित रखा है। समय के बदलते परिप्रेक्ष्य में, बदलते सामाजिक सन्दर्भो में अपनी अधीनस्थ की भूमिका, शोषण, असमानता से मुक्ति के प्रयत्न एवं दोहरे मानदंडों के बीच बदलती सामाजिक भूमिका के बावजूद स्त्री के मानक नहीं बदले हैं। स्त्री, पुरुष और व्यवस्था से स्त्री समस्या जटिलतर होती गयी है। *स्त्री होना और मनुष्य होना परस्पर अपवर्जक है*[1]

आज का स्त्री विमर्श, नारीवाद के सीमित दायरे से निकलकर व्यापक धरातल पर आ गया है। 17वीं शताब्दी में प्रचलित शब्द 'नारीवाद' बदनाम था, पुरुष से घृणा करने के लिए, घर परिवार को तोड़ने, अंतर्वस्त्र जलाने जैसे कारनामों के लिए। इसके पीछे वे शक्तियाँ हैं जो स्त्री मुक्ति को समाज की संरचना के लिए चुनौती मानती है। भारत के बदलते समाज में पुरुषों के साथ बराबरी का जीवन जीने की चेष्टा स्त्री के प्रति हिंसा का मूल कारण है। "स्त्री विमर्श" में समानता, अपने जीवन पर नियंत्रण, काम करने की स्वतंत्रता, असमाजिक, तत्त्वों से सुरक्षा जैसे विषयों पर बल दिया गया है। इसके साथ स्त्री पुरुष दोनों के लिए न्यायसंगत समाज निर्माण के प्रयास भी सम्मिलित है। हिन्दी साहित्य में हम जिस नारी चेतना का प्रस्फुटन देखते हैं वह आकस्मिक नहीं अपितु क्रमिक रूप से विकसित हुई है। हिन्दी साहित्य में यह जागृति औपन्यासिक परिदृश्य में अपनी पूरी सार्थकता के साथ परिलक्षित होती है। स्त्री अधिकारों के लिए प्रारम्भिक प्रयास करने वालों में सबसे पहला नाम **मेरी वाल्स्टॉन क्राफ्ट** का आता है, पेशे से अध्यापिका मेरी ने कई उपन्यासों और स्त्री शिक्षा पर कई पुस्तको का सृजन किया। किन्तु 1792 में स्त्री विमर्श के सन्दर्भ में आई उनकी पुस्तक 'स्त्री अधिकारों का औचित्य साधन' इग्लैण्ड, अमेरिका, फ्रांस सहित पूरे यूरोप को झकझोर कर रख दिया। **सीमोन द बोउवार** की पुस्तक 'दि सेकेण्ड सेक्स' विश्व भर के नारियों के विविध अयामों को प्रस्तुत करते हुए, स्त्री की स्थिति में, आमूल-चूल परिर्वतन को बतलाती है। नारी मुक्ति के इस प्रमुख ग्रन्थ का सूत्र वाक्य है *औरत जन्म से औरत नहीं होती उसे औरत बनाया जाता है*[2]

20वीं शताब्दी के अन्त में लिखे जाने वाले उपन्यासों में नारी चेतना को ज्योतिष जोशी के इस वाक्य के माध्यम से देखा जा सकता है- *इन उपन्यासों का महत्व इस बात में*

नहीं है कि यहाँ स्त्री के संघर्ष को नयी जमीन मिली और वे समाज को ललकार उठी बल्कि इस बात में है कि जीवन का सम्पूर्ण जगत मुखरित हो उठा है।[4] 'स्त्री विमर्श' स्त्री के जीवन के अनछुए अनजाने पीड़ा जगत के उद्‌घाटन के अवसर उपलब्ध कराता है परन्तु उसका उद्देश्य साहित्य एवं जीवन में स्त्री के दोयम दर्जे की स्थिति पर आँसू बहाने और यथा स्थिति बनाए रखने के स्थान पर उन कारको की खोज से है जो स्त्री की इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। 'स्त्री विमर्श' स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है *यह स्वयं चेती हुए स्त्री के पाए हुए स्वाधिकार है जहाँ उसे अपने खिलाफ होने वाले हर गैर वाजिब सुलूक से खुद निपटना है।*

नये रचनाकारों में इधर दो दशको में मैत्रेयी पुष्पा का नाम कथा साहित्य लेखन में उभरा है जिनका सम्पूर्ण दृष्टिकोण 'स्त्री विमर्श' को रूपायित करता है। मैत्रेयी पुष्पा की शिक्षा-दीक्षा बुन्देलखण्ड में हुयी। सम्भवतः इसीलिए उन्होंने अपने साहित्य सृजन के लिए बुन्देलखण्ड की धरती को ही चुना। इस क्षेत्र में शोषक एवं शोषित वर्ग की दो समान्तर धाराएँ चलती रही है। सामन्तवादी एवं शासक की व्यवस्था में नारी की असहाय स्थिति को उन्होंने नजदीक से देखा व परखा है। जहाँ की मिट्टी में ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विद्रूपता एवं ऊँचाई कण-कण में व्याप्त है। स्त्री की अहमियत एवं उसकी अस्मिता समाज में क्या रही होगी यह सब कुछ नारी चरित्रों के जीवन के घटनाक्रम को चित्रित करती हुई दिखाई पड़ती है। बुन्देलखण्ड के सम्पूर्ण अंचल में मानो मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के पात्र बिखरे पड़े हैं। झाँसी, महोबा, हमीरपुर, ग्वालियर, आगरा, सागर, ओरछा, टीकमगढ़, नौगाँव जैसे ऐतिहासिक स्थानों से मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के स्त्री चरित्र सदैव सम्बद्ध दिखाई देते हैं। मैत्रेयी पुष्पा भारत की ऐसी महिला हैं जिन्होंने अपनी कहानियों में हर कोण से गाँव की स्त्रियों की कहानी लिखी है। समाज ने उसे जिस साँचें में रखा है वह खाचे उन्होंने दिखाएं हैं। उनके उपन्यासों में 90 फीसदी पात्र वास्तविक जिन्दगी से होते हैं। उन्हें बनाने में सिर्फ 10 फीसदी कल्पना शामिल होती है।

मैत्रेयी पुष्पा का नवीनतम उपन्यास 'विजन' पुरुष सत्ता-संरचना में नारी की जिस अधोगति का वृतान्त रचता है उससे यह भ्रम दूर हो जाता है कि अभिजात समाज की सभी स्त्रियाँ 'स्वयंवरा' है। 'स्वयंवरा' होने की चाह में चहकती डूबती डाक्टर नेहा और डाक्टर आभा किस तरह पुरुष-सत्ता द्वारा व्यक्तित्व विहीन कर दी जाती है। इस तथ्य का उद्‌घाटन मैत्रेयी पुष्पा ने चिकित्सीय पेशे की पृष्ठभूमि में गहरी संलग्नता के साथ किया है। 'विजन' के माध्यम से मैत्रेयी स्त्री विमर्श से जुड़ी इस सर्व-स्वीकृत मान्यता को भी प्रश्नों के घेरे में खड़ा करती है। उच्च शिक्षा व आर्थिक स्वावलम्बन स्त्री-मुक्ति को सुनिश्चित करता है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था किस षडयन्त्रकारी ढंग से स्त्री की शिक्षा-दीक्षा को भी अपनी हित रक्षा के साधन में तब्दील कर लेता है, यह तथ्य अत्यन्त बेबाकी के साथ 'विजन' के कथ्य में विन्यस्त हुआ है। *नेहा के पति अजय को पढ़ने जाना है, इसलिए नेहा को रेजीडेंस छोड़कर शरण आई सेंटर जाना होगा।*[5] नेहा के भरपूर चाहत के कारण यह फैसला कुछ दिनों के लिए स्थगित तो हुआ, लेकिन बदला नहीं *क्योंकि डॉक्टर नेहा के सामने अब कोई विकल्प नहीं था, सिवा इसके कि वह छुट्टी लेकर आगरा चली जाए क्योंकि शरण आई सेंटर के हित में एक योग्य डॉक्टर का होना जरूरी था।*[6] स्वयं से कमतर अयोग्य डॉक्टर पति के कैरियर में सीढ़ी बनी नेहा का यह स्वगत प्रश्न अनुत्तरित रह जाता है *अपने जीवन में मैं कहाँ हूँ* क्योंकि वह

पिता के घर भी अकेली और पति के घर भी अकेली। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री अस्मिता के तुलना में स्त्री-नियति की टकराहट से मैत्रेयी पुष्पा जिस स्त्री व्यक्तित्व की रचना करती है वह भारतीय पारम्परिक समाज में अपनी अस्मिता की तलाश करती उस स्त्री की संघर्ष-गाथा है जिसे उच्च शिक्षा और अच्छे कैरियर के बावजूद अभी भी स्त्री नियति से मुक्त होना है। उपन्यास या कहानियों आदि में स्त्रियों के चरित्र का जितना अच्छा चित्रण स्त्री लेखकों के द्वारा होता है, वैसा पुरुष लेखकों द्वारा नहीं होता। इसमें कोई संदेह नहीं है। नारी हृदय का जैसा अच्छा ज्ञान नारी को हो सकता है वैसा पुरुष के लिए असम्भव है। हमारा समाज पुरुष प्रधान रहा है इसलिए यहाँ नारी सर्वत्र बन्धनयुक्त है। उसका जीवन कई समस्याओं से घिरा है। उन समस्याओं के निवारण एवं अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए नारी अनवरत संर्धषशील है। वास्तव में एक नारी के हृदय को नारी ही पहचान सकती है। नारी लेखिकाओं ने उपन्यासों का केन्द्र बिन्दु बनाकर उनकी समस्याओं का निराकरण करना चाहा है।

मैत्रेयी पुष्पा ने नारी विशेषकर ग्रामीण नारी के दुःख-दर्द को, उसकी संवेदना को प्रत्येक रूप में जाना है एवं अपने कथा-साहित्य व उपन्यास-साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। नारी जीवन की यन्त्रणाओं से रक्तरंजित उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में नारी संवेदना के प्रति सोचने को विवश किया है। **बेतवा बहती रही** में एक ऐसी उर्वशी की कहानी है जिसने आजीवन सामाजिक रीति-रिवाजों व कुप्रथाओं के चलते कष्टों को भोगा है तथा पुरुष समाज द्वारा स्त्री पर होने वाले अत्याचारो का अंकन किया है। पर औपन्यासिक विजन और यर्थाथ की गहरी समझ की दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व नहीं है। दरअसल उपन्यासकार के रूप में मैत्रेयी पुष्पा की पहचान उनके **इदन्नम** (1994) नामक उपन्यास से निर्मित हुई इस उपन्यास में एक विजन है जो लेखिका के बुन्देलखण्डी जीवन के प्रामाणिक और अन्तरंग अनुभव, पहाड़ी अंचल की धरती और बीहड़ संवेदना से सम्पन्न है। अपने पूर्ववर्ती उपन्यासों में मैत्रेयी ने बुन्देलखण्ड की अहीर कन्याओं की करुण नियति तथा जो किसी न किसी रूप में नारी मात्र की नियति कथा है, पर 'इदन्नम' में यह कथा करुणा की सीमा का अतिक्रमण करती हुयी 'जुझारू' हो गयी है। 'इदन्नम' की मन्दाकनी वास्तविक अर्थो में एक जुझारू युवती है जो केवल परिवार और समाज द्वारा स्त्री के लिए निर्मित बन्धनों को ही नहीं तोड़ती, वरन् उस शोषण के विरुद्ध भी तनकर खड़ी होती है। जो आज के नेताओं और माफिया ठेकेदारों द्वारा आदिवासियों और अन्य ग्रामीणों पर कहर के रूप में बरपा जा रहा है।

मैत्रयी पुष्पा बुन्देलखण्ड के परिवेश और ग्रामीण समाज को उसके खुरदुरे यथार्थ के साथ वैसी ही खुरदुरी भाषा के सहारे, प्रस्तुत करती हैं। चाहे मन्दाकनी की 'बऊ जी' हो या उसके ममहर परिवार के अक्खड़ किसान, सभी अपने मौलिक, जीवन्त रूप में प्रस्तुत हैं। मन्दाकनी की माँ प्रेमा और उसकी भाभी कुसुमा की व्यथा नारी की परम्परागत नियति है, जो पर्याप्त संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत की गयी है। राजनीतिक नेताओं और माफिया ठेकेदारों के चरित्र भी उपन्यास में पर्याप्त विश्वसनीयता के साथ अंकित है ।

इदन्नमम के बाद मैत्रेयी पुष्पा के **चाक** (1997) **झूलानट** (1999) और **अल्मा कबूतरी** (2000) नामक उपन्यास प्रकाशित हुए है। चाक में और झूलानट में भी खेती,

किसानी से जुड़े जाटों का ही चित्रण किया गया है और आज की बदली हुई परिस्थितियों में यह चित्रण पर्याप्त विश्वसनीय भी है, पर इन दोनों ही उपन्यासों का केन्द्रीय विषय ग्रामीण परिवेश में उभरती नयी चेतना है 'चाक' में जाट समाज में नैतिक संहिताओं की रूढ़ियों में जकड़ी पुरानी पीढ़ी की क्रुरता भरी हठ का जिसके तहत नारी संहिता का उल्लंघन करने वाली स्त्री से जीने का अधिकार छीन लेना, एक बहुत मामूली बात है, चित्रण किया गया है। इस समाज में किसी स्त्री की हत्या कर दिए जाने पर भी एक हल्की सी सुगबुगाहट के अतिरिक्त कोई विशेष हलचल नहीं होती इसके प्रतिरोध में कोई खड़ा नहीं होता। इस क्रूर परिवेश में मैत्रेयी पुष्पा ने नारी नियति का जो चित्रण प्रस्तुत किया है उसमें एक चौकाने वाली ताजगी है। इस समाज में न केवल पिछड़ी जाति की स्त्री, वरन् दलित समाज की स्त्री भी प्रेम करने के अधिकार से वंचित है। इस 'अपराध' के लिए यदि रेशम की हत्या की जाती है तो गुलबन्दी भी जिन्दा जला दी जाती है। कोई पुरुष इस अमानवीय कृत्य के विरोध में खड़ा होने की हिम्मत नहीं जुटा पाता। इसके विरोध में खड़ी होती है 'सारंग' जो बहुत पढ़ी-लिखी तो नहीं है, पर जिसमें संकल्प की गजब की दृढ़ता है और उसके संकल्प को सान देता है श्रीधर प्रजापति। श्रीधर अपने आदर्श और प्रेम के चाक पर सारंग का नया चरित्र गढ़ता है। सारंग में अन्याय से लड़ने, आततायियों का मुकाबला करने, नारी अधिकारों के लिए जान दे देने तक की हिम्मत और दृढ़ता है। इसके साथ ही उसमें गहरी संवेदनशीलता, विवेक और संगठन क्षमता भी है। पर यह सब उसमें कच्चे उपादान की तरह है। श्रीधर इस कच्चे उपादान को सही रूप देने के लिए कुम्भकार का काम करता है। और सारंग नारी-संहिता की समाप्त मान्यताओं को चुनौती देती हुई न केवल श्रीधर से देह सम्बन्ध स्थापित करती है बल्कि पुरुष सत्ता को चुनौती देने के लिए ही ग्राम पंचायत के चुनाव में प्रधान पद के लिए खड़ी भी हो जाती है। पति से लेकर गाँव का सारा पुरुष समाज उसका विरोध करता है, पर वह अपने खुद के निर्मित नारी संगठन के बल पर पुरुष सत्ता को चुनौती देने का साहस भरा कदम उठाती है। इससे यह विचार उभरता है कि जब तक सत्ता स्त्री के हाथ में नहीं आती, पुरुष समाज द्वारा उसका शोषण और उस पर होने वाला अत्याचार समाप्त नहीं हो सकता।

झूलानट का विषय भी जाट समाज की एक पारिवारिक स्थिति है। जिसमें सास-बहू, माँ-बेटे, पति-पत्नी और देवर-भाभी के सम्बन्धों की कहानी एक खास अन्दाज में कही गयी है। उपन्यास में माँ और पत्नीवत भौजाई के सम्बन्धों के पाट पिसते एक भोले जाट युवक का मानसिक उद्वेग ही उपन्यास में प्रमुख है। सास-बहू के सम्बन्धों के चित्रण के साथ साथ शीलों के रूप में एक जाट युवती के परम्परागत मूल्यों को चुनौती देने, स्त्री संहिता को नकारने और विद्रोह की मुद्रा में तनकर खड़े होने का चित्रण किया गया है शीलो में सारंग की ही तरह अद्भुत जिजीविषा, अपना भाग्य स्वयं लिखने का संकल्प और समाज से अकेले ही लोहा लेने की क्षमता है।

इन उपन्यासों की तुलना में 'अल्मा कबूतरी' एक नयी और सशक्त रचना है। भारतीय समाज इतना विशाल और वैविध्यपूर्ण है कि सजग और संवेदनशील उपन्यासकार के लिए कथ्य के अभाव में चमत्कारपूर्ण शिल्प और अचेतन-अवचेतन की भूल भुलैया में भटकने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैत्रेयी पुष्पा ने इस तथ्य को अपने इस नये

उपन्यास द्वारा सिद्ध कर दिया है। भारत में आज भी कुछ ऐसी अभागी जनजातियाँ है जो आजादी का अर्थ नहीं जानती। उनके पास न अपनी जमीन है न ठिकाने का घर बार। औपनिवेशिक शासन ने इन्हे 'जरामयपेशा' जाति घोषित कर न केवल तथाकथित 'सभ्य समाज' की नजरों में उपेक्षा और घृणा का पात्र वरन् पुलिस के अत्याचार का सबसे नरम चारा भी बना दिया था। यद्यपि देश के आजाद होने के बाद इन जातियों को समान नागरिकता का अधिकार प्राप्त हो गया है, पर जीविकोपार्जन का कोई सम्मानजनक साधन न उपलब्ध होनें के कारण इनके पुरुष अपराधकर्म और स्त्रियाँ देह-व्यापार के लिए विवश होती है। भारत की सत्तर वर्षो की आजादी ने भी इनकी नयी पीढ़ी को सम्मानजनक जीवन का कोई विकल्प नहीं दिया है। मैत्रेयी पुष्पा ने अल्मा कबूतरी में इस कटु यथार्थ को गहरी संवेदना और जबरदस्त सर्जनात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। इसके पहले रांगेय राघव ने 'कब तक पुकारूँ' में इस जनजाति के एक विशेष समुदाय नटो, के जीवन का चित्रण किया था। मैत्रेयी पुष्पा ने अल्मा कबूतरी में मुख्यतः बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बसने वाली कबूतरा जाति के जीवन को उपन्यास का विषय बनाया है। जो अपनी वंश परम्परा रानी पद्मिनी और झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की अंगरक्षिका झलकारी से जोड़ती है और उनका अपमान, विवशता और पीड़ा भरी जिन्दगी को जीवन्त पात्रों के अद्भुत कथा संसार में बदल देता है। इसके साथ ही लेखिका ने समानान्तर 'सभ्य समाज' से जिन्हे वे 'कज्जा' कहकर पुकारते है, उनके टकराव, संघर्ष और पराजय को भी अत्यन्त विश्वसनीय और मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है। 'कज्जा' और 'कबूतरा' समाज की मुठभेड़ और द्वन्द्व ही अल्मा कबूतरी का केन्द्रीय विषय है। भूरी, उसके बेटे राम सिंह और उसकी बेटी अल्मा की कहानी इसी टकराहट की कहानी है। जिसमें सभ्य समाज से संघर्ष करने और अपना सब कुछ दाँव पर लगा देने के बावजूद लहूलुहान कबूतरा ही होते हैं। इसका कारण यह है कि पूरी व्यवस्था ही अपनी पूरी शक्ति के साथ उनके विरोध में खड़ी है। भूरी 'कज्जा' समाज से टक्कर लेती है। वह शरीर सौदा करके भी अपने बेटे को पढ़ा लिखा कर उसे इस योग्य बनाना चाहती है कि वह समाज में सम्मान की जिन्दगी जी सके। पर ऐसा नहीं हो पाता वो 'कबूतरा' बनकर ही अभिशप्त है। वह धीरे धीरे अपनी संघर्ष क्षमता खो कर पुलिस का दलाल बन जाता है और अन्त में डाकू बेटराम के नाम पर पुलिस द्वारा प्रयोजित मुठभेड़ में मार डाला जाता है। एक 'कबूतरा' के 'सभ्य' बनने की कोशिश का यह अंजाम दिखाकर लेखिका ने यथार्थ को उसके नग्नतम रुप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

समाज की दृष्टि से देखे तो बलात्कार ही मात्र ऐसा अपराध है जिसमें समाज की दृष्टि बलात्कारी के स्थान पर बलात्कार की शिकार स्त्री की ओर टिकती है, स्त्री दोषी भी ठहराई जाती है, सामाजिक लांछना, अपमान स्त्री के हिस्से में आता है। बलात्कार का प्रश्न अब यद्यपि सौ पर्दो में छिपाने का विषय नहीं रह गया है, रिपोर्ट की जा रही है, प्रकरण सामने आ रहे है परन्तु समाज की मानसिकता में अधिक फर्क नहीं आया है। *सब कुछ लुट जाने का अहसास जब-तब स्त्री को दिया जाता रहा है।*

बदलाव की उम्मीद के साथ मैत्रेयी पुष्पा का नया उपन्यास 'फरिश्ते निकले' (2014) इस उपन्यास में स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार तथा उनके शोषण का चित्रण बेला बहू के माध्यम से रेखंकित किया गया है। जोरावर ने बेला को पीछे से अपनी बाहों में

जकड़ कर ऐसे दबाया जैसे दम निकाल देगा बेला का छुई मुई स्वभाव पल भर में छूमंतर हो गया उसकी विना इच्छा के यह हमला? वह हाथापाई पर आ गई पर जोरावर छः फिट का पहलवान जैसा अदमी, बेला को धरती पर पटक दिया, वह बेतुकी जल्दी मचाने लगा जिससे बेला के कपड़े फट गये। जोरावर ने मनमाने तरीके से बेला को क्षत विक्षत कर डाला मगर न किसी को कुछ सुनाई दिया न दिखाई *आदमी की एक जिंस यह भी है, बेला को पहला अनुभव हुआ।* 'बेला' को जमीन से हाथ पकड़कर उठाने लगा जाते-जाते समझा गया *आदत डाल ले हमारी। जैसे द्रोपदी ने डाल ली थी पाँचों पाण्डवो की आदत। अरे धर्म की किताबों में लिखी है यह बात आदमी भागवत का पाठ बिठाता है ऐसी कितनी ही कथाएँ बाँची जाती है तूने क्या सुनी नहीं होगी रानी द्रोपदी की कथा? वह तो राजा की बेटी थी और तू?*

बेला को आगे-आगे धकेल रही है पौराणिक काल की सती नारियाँ वे ही हाथों में ताकत और वजूद में दुस्साहस का विगुल फूक रही है। चुपचाप, वेआवाज, कट्टियॉ भर केरासीन का छिड़काव कर दिया उस दीवानखाने में जहाँ पाँचों भाई शयन और सपनों में डूबे हुए थे। *मैं द्रोपदी! इस युग की याज्ञसेनी..... माचिस की तीली जला दी देखने लायक नजारा था तेल के छिड़काव पर अग्नि बेल बनती हुई पलंगो और दीवारों पर चढ़ने लगी। धरती दावानल की ज्वाला में अदृश्य.... हाहाकार कौन मचाता? नशे की रस्सियों में पाँचों भाई बंधे पड़े थे जल गये। राख ..खाक हो गए। गाँव के बीचो बीच हुआ धुएँ का समायोजन।*

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बदलते परिवेश के परिप्रेक्ष्य में नारी के लेखन में मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण परिवेश में व्याप्त तथ्यों का अपनी सोच तथा संवेदना से तादाम्य स्थापित कर उसे मार्मिक प्रस्तुति दी है। संवेदना की गहन वीथियों में उनकी बौद्धिकता का आलोक प्रायः छिटक पड़ता है। समाज में व्याप्त छद्म का आदर्श, दिखाऊ, नैतिकता, समाज के किसी भी क्षेत्र में अस्तित्ववान दोहरे मापदण्ड मैत्रेयी पुष्पा की तर्क प्रवण चेतना को झकझोर कर संवेदना की तेजाबी धारायें प्रान्वित करने के लिए उनकी लेखनी को विवश करते हैं। नारी जीवन के यथार्थ की सूक्ष्म पड़ताल कर मैत्रेयी ने उसे अपने लेखनी के माध्यम से लोकार्पित किया है।

संदर्भ ग्रथ-

1. कस्तवार रेखा, स्त्री चिंतन की चुनौतियॉ, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2016, दूसरा संस्करण, पृ0 सं0- 24.
2. परवीन फरहत, आजकल, आजकल प्रकाशन नई दिल्ली 2014 पृष्ठ संख्या- 24.
3. परवीन फरहत, आजकल, आजकल प्रकाशन नई दिल्ली 2014 पृष्ठ संख्या- 24.
4. पुष्पा मैत्रेयी, विजन, वाणी प्रकाशन 2002 पृष्ठ संख्या- 109
5. पुष्पा मैत्रेयी, विजन, वाणी प्रकाशन 2002 पृष्ठ संख्या- 14
6. पुष्पा मैत्रेयी, विजन, वाणी प्रकाशन 2002 पृष्ठ संख्या- 142.
7. कस्तवार रेखा, स्त्री चिंतन की चुनौतियॉ, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2016, दूसरा संस्करण, पृ0 सं0- 213.
8. पुष्पा मैत्रेयी, फरिश्ते निकले, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2014 पृष्ठ, संख्या- 63.
9. पुष्पा मैत्रेयी, फरिश्ते निकले, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2014 पृष्ठ, संख्या- 83.

ललिता सिंह,
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उ0 प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-21-25
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

अधिनीतिशास्त्रीय चिन्तन की सामान्य रूपरेखा

अभिषेक उपाध्याय

अधिनीतिशास्त्र (Metaethics) को विश्लेषणात्मक एवं आलोचनात्मक नीतिशास्त्र भी कहते हैं, जिससे अधिनीतिशास्त्र की मूल प्रकृति का आभास होता है। हम अपने दैनिक जीवन में ऐसे अनेक वाक्यों का प्रयोग करते हैं जिन्हें हम ''नैतिक कथन'' अथवा ''नैतिक निर्णय'' कहते हैं। उदाहरणार्थ, हम कहते हैं कि ''वचन पालन करना उचित है'', ''झूठ बोलना अनुचित है'', ''वह अच्छा व्यक्ति है'', जीवों पर दया करना हमारा कर्त्तव्य है, ''संसार में सुख ही एकमात्र स्वतः शुभ (Itself Good) है'' और ''दुःख एक मात्र स्वतः अशुभ (Itself Evil) है'' इत्यादि। अधिनीतिशास्त्र का मुख्य उद्देश्य इन कथनों एवं इन कथनों में प्रयुक्त नैतिक शब्दों अथवा नैतिक प्रत्ययों का विश्लेषण, स्पष्टीकरण एवं प्रमाणीकरण करना है। किसी भी शास्त्र में अर्थ एवं औचित्य का स्पष्टीकरण अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है, और नीतिशास्त्र भी इसका अपवाद नहीं है। वास्तव में अर्थ और औचित्य के महत्त्व की हम किसी भी शास्त्रीय विवेचन में अवहेलना नहीं कर सकते हैं। अर्थ-विश्लेषण और औचित्य-निर्धारण ज्ञान सम्बन्धी कार्य होते हैं, इन्हें नीतिशास्त्र के अनुरूप जीवन-यापन के साथ मिलाकर नहीं देखा जाना चाहिये। वस्तुतः नैतिकता संबंधी अर्थ-विश्लेषण और औचित्य निर्धारण को मानकीय नीतिशास्त्र की परिधि में रखना उचित प्रतीत नहीं होता है। यही कारण है कि इन विषयों का अध्ययन नीतिशास्त्र के अन्तर्गत ही एक पृथक् विधा के रूप में अधिनीतिशास्त्र में किया जाता है।

नैतिक दर्शन की एक व्यवस्थित एवं स्वतंत्र विधा के रूप में अधिनीतिशास्त्र का उदय तथा विकास बीसवीं शताब्दी में ही हुआ है। किन्तु नैतिक भाषा के विश्लेषण से संबंधित अधिनीतिशास्त्र की मूल समस्या का पूर्वाभास हमें दो महान अनुभववादी ब्रिटिश दार्शनिकों **जार्ज बर्कले एवं डेविड ह्यूम** की कृतियों में प्राप्त होता है। इन दोनों ही दार्शनिकों ने अपनी अनुभववादी विचारधारा के अनुरूप नैतिक भाषा के प्रयोजन की चर्चा की है। उदाहरणार्थ, 1710ई0 में प्रकाशित अपनी पुस्तक **ए ट्रिटाइज़ कन्सर्निंग दि प्रिंसिपल्स आफ ह्यूमन नालेज** की प्रस्तावना में भाषा के उद्देश्यों की चर्चा करते हुये बर्कले ने कहा है कि *अपनी भावनाओं एवं विचारों को अभिव्यक्त करना तथा दूसरों तक पहुँचाना और उन व्यक्तियों में उन्हीं भावनाओं को जागृत करना, उन्हें कोई कार्य करने अथवा न करने के लिये प्रेरित करना इत्यादि भाषा के मुख्य उद्देश्य हैं।* यहाँ बर्कले ने भाषा के उद्देश्य के बारे में जो कथन किया है, उससे क्रमशः संज्ञानवाद, संवेगवाद एवं परामर्शवाद के संकेत मिलते हैं। 'शुभ' शब्द के स्पष्टीकरण में बर्कले ने स्वयं नैतिक भाषा को संवेगात्मक माना है। इसी प्रकार 1739-40ई0 में प्रकाशित अपनी प्रसिद्ध कृति ***ए ट्रिटाइज आफ ह्यूमन नेचर*** के दूसरे और तीसरे भाग में डेविड ह्यूम ने दो मुख्य अधिनैतिक सिद्धान्तों, व्यक्तिनिष्ठवाद एवं संवेगवाद का मूलतः समर्थन किया है। किन्तु बीसवीं शताब्दी के पूर्व नैतिक दर्शन की स्वतंत्र विधा के रूप में अधिनीतिशास्त्र का उदय नहीं हो सका क्योंकि तब तक दार्शनिकों ने नैतिक भाषा के अर्थ, स्वरूप एवं औचित्य के विश्लेषण की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया था।

बीसवीं शताब्दी में अधिनीतिशास्त्र के उद्भव का श्रेय जी0ई0 मूर को दिया जाता है। जिन्होंने 1903ई0 में प्रकाशित अपनी पुस्तक ***प्रिंसिपिया एथिका*** में सर्वप्रथम शुभ, उचित, कर्त्तव्य आदि नैतिक प्रत्ययों के अर्थ के विषय में प्रश्न उठाकर नैतिक दर्शन की सर्वथा एक नवीन विधा का सूत्रपात किया। मूर से पूर्व परम्परागत नीतिशास्त्र के सम्मुख ''हमारा कर्त्तव्य क्या है, हमारे कौन-कौन से कर्म उचित या अनुचित है, स्वतः शुभ क्या है, कौन सी वस्तुयें स्वतः शुभ हैं, इत्यादि मानकीय नीतिशास्त्र से संबंधित प्रमुख प्रश्न थे। किन्तु मूर ने सर्वप्रथम अधिनीतिशास्त्र संबंधी प्रश्न उठाया कि शुभ, उचित आदि नैतिक शब्दों का मूल अर्थ क्या है? और इनकी परिभाषा किस प्रकार संभव है? इसके साथ ही शुभ की परिभाषा को उन्होंने नीतिशास्त्र का मूल प्रश्न भी माना है। नीतिशास्त्र के इस मूल प्रश्न के महत्व को स्पष्ट करते हुये अपनी पुस्तक प्रिंसिपिया एथिका में वे कहते हैं कि *शुभ क्या है और अशुभ क्या है? यह हमारा प्रथम प्रश्न है। इस प्रश्न के विवेचन को मैं नीतिशास्त्र की संज्ञा देता हूँ, क्योंकि इस विज्ञान में उक्त प्रश्न पर अवश्य विचार किया जाना चाहिये। हम केवल यही नहीं पूछना चाहते कि कौन सी वस्तु अथवा वस्तुयें शुभ हैं अपितु हम यह भी पूछना चाहते हैं कि शुभ की परिभाषा कैसे दी जा सकती है। इस प्रश्न का संबंध केवल नीतिशास्त्र से है। यह वह प्रश्न है जिसकी ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये क्योंकि यह प्रश्न अर्थात् शुभ की परिभाषा का प्रश्न, सम्पूर्ण नीतिशास्त्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न है।*[1] नैतिक शब्दों के अर्थ और स्वरूप के विषय में मूर के उपर्युक्त विचार से यह स्पष्ट है कि वे इन शब्दों के विश्लेषण से संबंधित अधिनीतिशास्त्र की समस्या को सर्वाधिक महत्वपूर्ण नीतिशास्त्रीय समस्या मानते हैं। मूर के विचारों से मूल प्रेरणा ग्रहण करके बीसवीं शताब्दी के अनेक दार्शनिकों ने अधिनीतिशास्त्र के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। यही कारण है कि मूर को अधिनीतिशास्त्र का जनक माना जाता है।

मूर के अतिरिक्त बीसवीं शताब्दी के द्वितीय एवं तृतीय दशक में तार्किक प्रत्यक्षवाद एवं भाषा विश्लेषण संबंधी विचारधारा के उदय के फलस्वरूप अधिनीतिशास्त्र का समुचित विकास हुआ। इन दोनों विचारधाराओं के कारण पाश्चात्य दर्शन में महान क्रान्ति हुयी है, जिसका दर्शन की लगभग सभी विधाओं पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। फलस्वरूप दर्शन में जीव-जगत्-आत्मा-ईश्वर आदि का स्थान भाषा ने ले लिया और भाषा विश्लेषण अथवा स्पष्टीकरण ही दर्शन का प्रमुख कार्य माना गया। इस नवीन विचारधारा को दर्शन में ''विश्लेषणवादी विचारधारा'' अथवा ''विश्लेषणात्मक दर्शन'' कहा गया है। इस विचारधारा ने नीतिशास्त्र की विषयवस्तु एवं क्षेत्र को पूरी तरह बदल कर रख दिया। जिसके परिणामस्वरूप अधिनीतिशास्त्र का उदय हुआ। तार्किक प्रत्यक्षवाद एवं भाषा दर्शन के प्रभाव में **ए0जे0 एयर** ने तो अधिनीतिशास्त्र को ही सम्पूर्ण नैतिक दर्शन मान लिया। अपनी पुस्तक ***फिलासफिकल एसेज*** में एयर ने लिखा है *नैतिक दर्शन के लिये प्रश्न यह नहीं है कि कोई कर्म उचित है या अनुचित, अपितु प्रश्न यह है कि किसी कर्म को उचित या अनुचित कहने का अर्थ क्या है।*[2] यहाँ स्पष्ट है कि एयर अधिनीतिशास्त्र को ही सम्पूर्ण नैतिक दर्शन मानते हैं। इसी प्रकार ***आर0 एम0 हेयर*** नीतिशास्त्र की परिभाषा करते हुये कहते हैं कि *नीतिशास्त्र नैतिक शब्दों के तार्किक गुणों का अध्ययन है।*[3] किन्तु अधिनीतिशास्त्र के संबंध में इन दार्शनिकों का मत अपूर्ण एवं एकांगी है। अधिनीतिशास्त्र का कार्य मानकीय नीतिशास्त्र के निर्णयों का विश्लेषण करना है ताकि उन्हें भलीभांति समझा जा सके। इसका अर्थ यह हुआ

कि अधिनीतिशास्त्र मानकीय नीतिशास्त्र को समझने का एक साधन है। वस्तुतः मानकीय नीतिशास्त्र के निर्णयों, प्रत्ययों अथवा सिद्धान्तों के अभाव में अधिनीतिशास्त्र की आवश्यकता ही समाप्त हो जाती है। इस दृष्टि से अधिनीतिशास्त्र का अस्तित्त्व एवं उसकी सार्थकता मानकीय नीतिशास्त्र पर आश्रित है। ऐसी स्थिति में अधिनीतिशास्त्र को ही स्वतः में साध्य या सम्पूर्ण नैतिक दर्शन मान लेना किसी भूल से कम नहीं होगा। वास्तव में अधिनीतिशास्त्र स्वतः साध्य तथा सम्पूर्ण नैतिक दर्शन न होकर नैतिक दर्शन की एक महत्वपूर्ण विधा है जिसकी सहायता से हम नैतिक भाषा का अर्थ एवं स्वरूप समझने का प्रयास करते हैं।

अधिनीतिशास्त्र के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये उसकी विषयवस्तु अथवा उसके सम्मुख उपस्थित मुख्य समस्याओं पर प्रकाश डालना अनिवार्य है। अधिनीतिशास्त्र के सम्मुख सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या नैतिक निर्णयों एवं नैतिक शब्दों के अर्थ से संबंधित है। अर्थात् जब हम नैतिक शब्दों अथवा निर्णयों का प्रयोग करते हैं तो हम इनके द्वारा क्या कहना चाहते हैं? जब हम विभिन्न प्रसंगों एवं परिस्थितियों में शुभ-अशुभ, उचित-अनुचित, कर्त्तव्य आदि का प्रयोग करते हैं तो हम इनका क्या अर्थ ग्रहण करते है और ये अन्य निर्नैतिक शब्दों से किस प्रकार भिन्न अर्थ रखते हैं। अर्थ के स्पष्टीकरण में यह बताना भी अनिवार्य है कि उपर्युक्त नैतिक शब्दों का जब हम निर्नैतिक प्रसंगों में प्रयोग करते हैं तो यह नैतिक प्रसंगों में किये गये प्रयोग से किस प्रकार भिन्न है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर अधिनीतिशास्त्र की भूमिका एवं विषयवस्तु का निर्माण करता है।

नैतिक कथनों अथवा निर्णयों के संबंध में दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इनका स्वरूप क्या है? अर्थात् ये कथन तथ्यात्मक कथनों की भाँति वर्णनात्मक एवं संज्ञानात्मक होते हैं अथवा ये कथन संवेगात्मक कथनों के समान मुख्यतः अवर्णनात्मक एवं असंज्ञानात्मक होते हैं। हम अपने दैनिक जीवन में शुभ, उचित आदि जिन नैतिक प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं वे सामान्यतः बहुत ही सरल प्रतीत होते हैं। सामान्य जन यह दावा करते हैं कि वह इन शब्दों का अर्थ भली-भाँति जानते हैं। किन्तु दार्शनिक दृष्टिकोण से इन नैतिक शब्दों का विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि इनका कोई भी स्पष्ट निश्चित एवं सर्वस्वीकार्य अर्थ बताना लगभग असंभव है। उदाहरणार्थ, हम अच्छा (Good) शब्द का प्रयोग मनुष्य तथा उसके चरित्र के लिये भी करते हैं और भौतिक वस्तुओं के लिये भी; अर्थात् हम कहते हैं कि **वह अच्छा मनुष्य है** अथवा **उस व्यक्ति का चरित्र अच्छा है।** साथ ही हम यह भी कहते हैं कि **यह एक अच्छी कार है**, अथवा **वह अच्छा घर है।** स्पष्ट है कि प्रथम दो कथनों में 'अच्छा' शब्द का प्रयोग नैतिक अर्थ में हुआ है जबकि अन्तिम दो कथनों में इस शब्द का प्रयोग निर्नैतिक अर्थ में हुआ है। इसी प्रकार का प्रयोग अन्य नैतिक शब्दों के सन्दर्भ में भी किया जाता है। अधिनीतिशास्त्र ही हमें यह बताने का प्रयास करता है कि इन दोनों प्रयोगों में नैतिक शब्दों के अर्थों में क्या मौलिक एवं आधारभूत अन्तर होता है। साथ ही साथ अधिनीतिशास्त्र ही यह भी बताने का प्रयास करता है कि, क्या नैतिक निर्णय केवल हमारी व्यक्तिगत इच्छाओं को अभिव्यक्त करने वाले व्यक्तिनिष्ठ निर्णय हैं अथवा वस्तुनिष्ठ निर्णय हैं? इन सभी प्रश्नों तथा ऐसे ही अन्य अनेक प्रश्नों का उत्तर नैतिक निर्णयों के स्वरूप के स्पष्टीकरण एवं विश्लेषण के माध्यम से प्राप्त होता है। इन निर्णयों के स्वरूप का विश्लेषण करते हुये अधिनीतिशास्त्री हमें यह बताता है कि हमारे

व्यावहारिक जीवन में इनका वास्तविक उपयोग और कार्य क्या है? और हम इनका प्रयोग किस उद्देश्य के लिये करते हैं? यद्यपि नैतिक निर्णयों के स्वरूप एवं उद्देश्य के विषय में दार्शनिक एकमत नहीं हैं तथापि इस मतभेद की पृष्ठभूमि में ही अधिनीतिशास्त्र की विषयवस्तु का सृजन होता है।

अधिनीतिशास्त्र की एक अन्य महत्त्वपूर्ण समस्या नैतिक निर्णयों के प्रमाणीकरण अथवा औचित्य के स्पष्टीकरण से संबंधित है। इसके अन्तर्गत जिन प्रमुख प्रश्नों पर विचार किया जाता है वे इस प्रकार हैं- *क्या नैतिक निर्णयों को अन्य प्रतिज्ञप्तियों की भांति वैध अथवा अवैध सिद्ध किया जा सकता है? क्या नैतिक निर्णय के सन्दर्भ में हम तर्क अथवा युक्तियाँ प्रस्तुत कर सकते हैं? यदि इन निर्णयों के सन्दर्भ में हम युक्तियाँ दे सकते हैं तो उन युक्तियों का स्वरूप क्या होगा? क्या ये तर्क तथ्यात्मक निर्णयों के सन्दर्भ में प्रयुक्त तर्कों के समान होते हैं अथवा पृथक्? यदि ये तर्क भिन्न हैं तो वो कौन से तत्त्व हैं जो इन तर्कों को तथ्यात्मक निर्णयों के सन्दर्भ में दिये जाने वाले तर्कों से पृथक् करते हैं? क्या आगमनात्मक एवं निगमनात्मक तर्कों द्वारा नैतिक निर्णयों का प्रमाणीकरण संभव है? यदि नहीं तो किस प्रकार के विशेष तर्कों द्वारा इनका प्रमाणीकरण संभव है? क्या वस्तुनिष्ठ तथ्यात्मक नैतिक ज्ञान संभव है?* इत्यादि प्रश्नों का अधिनीतिशास्त्र समुचित उत्तर देने का प्रयास करता है।

अधिनीतिशास्त्र के लिये एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि नैतिकता की अवधारणा अन्य निर्नैतिक अवधारणाओं से किस प्रकार पृथक् है? सामान्यतः नैतिकता को आध्यात्मिकता, धर्म, स्वर्ग-नरक, पाप-पुण्य इत्यादि विषयों के साथ मिला दिया जाता है, परिणामस्वरूप नैतिकता के संबंध में ऐसे निष्कर्ष निकाल लिये जाते हैं जो स्वयं नैतिकता की परिधि के बाहर होते हैं। उदाहरणार्थ, नैतिकता के सन्दर्भ में बात करते हुये किसी का यह कहना कि 'मनुष्य के जीवन का परमशुभ आत्मसाक्षात्कार, ईश्वरप्राप्ति अथवा स्वर्गप्राप्ति है' या फिर यह कहना कि 'मनुष्य के जीवन का परमशुभ इहलौकिक सुख प्राप्ति है' इत्यादि, नैतिकता की अवधारणा के अनुकूल नहीं है। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि नैतिकता की अवधारणा का सूक्ष्म विश्लेषण हो और नैतिक दृष्टिकोण को अन्य दृष्टिकोणों से पृथक् करके उसके वास्तविक स्वरूप को समझा जाय। किन्तु इस प्रकार के विश्लेषण एवं स्पष्टीकरण से नैतिक नियमों, सिद्धान्तों अथवा मूल्यों का निर्धारण नहीं किया जा सकता अपितु इससे मात्र नैतिक निर्णयों एवं नैतिक प्रत्ययों का ही स्पष्टीकरण होता है। ऐसा स्पष्टीकरण कोई नीतिज्ञ अथवा उपदेशक नहीं कर सकता, अपितु एक दार्शनिक ही कर सकता है। यही कार्य अधिनीतिशास्त्र करता है।

अधिनीतिशास्त्र की एक महत्त्वपूर्ण विषयवस्तु नैतिक मनोविज्ञान का अध्ययन है। यह स्पष्ट है कि नीतिशास्त्र का मनोविज्ञान के साथ गहरा संबंध है। मनुष्य के द्वारा अनेकानेक प्रकार की क्रियायें सम्पादित की जाती हैं, किन्तु उसकी सभी क्रियाओं को नैतिक परिधि में शामिल नहीं किया जाता है। उदाहरणार्थ, मनुष्य अहर्निश साँस लेता है, प्रतिदिन नींद लेता है, भोजन करता है इत्यादि किन्तु हम इन दैनिक क्रियाकलापों के आधार न तो उसकी प्रशंसा करते हैं ओर न ही भर्त्सना। किन्तु ऐसे अनेक कर्म हैं जिनके आधार पर हम या तो उसकी प्रशंसा करते हैं या निंदा। अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि कर्म की वह कौन सी सामान्य या विशिष्ट योग्यता है जिसके कारण उसका कर्ता या तो प्रशंसा प्राप्त करता है या निंदा। निश्चय ही कर्म की यह विशिष्टता एक विशेष प्रकार की मनोवैज्ञानिक

पृष्ठभूमि पर आधारित है, जो किसी कर्म को नैतिक परिधि में लेकर आती है। अतः नैतिक परिधि में आने वाले कर्मों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि तथा उत्पत्ति की सही-सही जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक है। इस संबंध में अधिनीतिशास्त्र के अन्तर्गत इच्छा, संकल्प, स्वतंत्र संकल्पन, उत्प्रेरक, अभिप्राय इत्यादि मनोवैज्ञानिक व्यापार विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, और इनका विश्लेषण अधिनीतिशास्त्र का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता है। संक्षेप में अधिनीतिशास्त्र के निम्नलिखित उद्देश्यों को रेखांकित किया जा सकता है।

(i) अधिनीतिशास्त्र का उद्देश्य नैतिक सिद्धान्तों अथवा आदर्शों की स्थापना करना नहीं हैं, अपितु नैतिक निर्णयों अथवा प्रत्ययों का विश्लेषण एवं स्पष्टीकरण है। इसलिये इसे विश्लेषणात्मक नीतिशास्त्र भी कहा जाता है।

(ii) अधिनीतिशास्त्र ऐसी विधियों की खोज करता है, जिसके आधार पर नैतिक निर्णयों को उचित-अनुचित अथवा वैध-अवैध सिद्ध किया जा सके।

(iii) अधिनीतिशास्त्र का उद्देश्य, शुभ, उचित, कर्त्तव्य आदि मूल नैतिक प्रत्ययों की परिभाषा देना है, जिससे इनके अर्थ का स्पष्टीकरण किया जा सके। अर्थात् इन शब्दों के प्रयोग द्वारा हम क्या कहना चाहते हैं, उसका स्पष्टीकरण किया जा सके।

(iv) अधिनीतिशास्त्र नैतिक निर्णयों के सन्दर्भ में प्रयुक्त तर्कों की भी परीक्षा करता है, जिसके द्वारा नैतिक निर्णयों को उचित या अनुचित सिद्ध किया जाता है। अधिनीतिशास्त्र ऐसे तर्कों का स्वरूप एवं अन्य विज्ञानों में प्रयुक्त तर्कों से अन्तर को भी स्पष्ट करता है।

(v) अधिनीतिशास्त्र नैतिक निर्णयों का अन्य निर्नैतिक निर्णयों से अन्तर भी स्पष्ट करता है। इस प्रकार अधिनीतिशास्त्र का मूल उद्देश्य आदर्शमूलक नीतिशास्त्र के क्षेत्र में आने वाले नैतिक सिद्धान्तों अथवा नैतिक निर्णयों का आलोचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। आदर्शमूलक अथवा मानकीय नीतिशास्त्र जिन विषयों और समस्याओं को अछूता छोड़ देता है, अधिनीतिशास्त्र उन्हीं को अपने क्षेत्र के अन्तर्गत लेता है। इसका कार्य नैतिक सिद्धान्तों का खण्डन-मण्डन अथवा प्रतिपादन नहीं है, अपितु नैतिक निर्णयों अथवा प्रत्ययों का स्पष्टीकरण करना है।

सहायक ग्रन्थ-

1- मूर जी0ई0, प्रिंसिपिया एथिका पृ0 35.
2- फिलासफिकल एसेज पृ0 235.
3- हेयर आर0एम0, फ्रीडम एण्ड रीज़न, पृ0 97.

डॉ0 अभिषेक उपाध्याय
पी0-एच्0 डी0, दर्शनशास्त्र
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-26-28
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

गीता के लोक संग्रह का आदर्शः नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों के समसामयिक प्रासंगिकता के परिप्रेक्ष्य में

इन्दु प्रकाश सिंह

प्रस्तुत विषय के सम्यक् मीमांसा के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि गीता कर्म-अकर्म के निर्णयार्थ कर्म के वाह्यफल पर ध्यान न देकर, कर्ता की शुद्ध-बुद्धि को ही प्रधानता देने का आग्रह करती है। इस तथ्य को नैतिक एवं सामाजिक पक्ष के माध्यम से विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

नैतिक पक्ष- स्थितप्रज्ञ की बुद्धि और उसका बर्ताव ही नीतिशास्त्र का आधार है। आचरण की एक विधि के रूप में निष्काम कर्म को स्वीकार करके; मानव आचरण में परिवर्तन हो सकता है। पुनश्च, प्रश्न उठता है कि स्थितप्रज्ञ या निष्काम कर्मयोगी समाज में जो व्यवहार करता है, उसका मूल या बीज तत्त्व क्या है? इस प्रश्न का समाधान दो दृष्टियों से किया जा सकता है। **प्रथम** *कर्ता की बुद्धि को प्रधान मानकर और* **द्वितीय** *उसके बाह्य व्यवहार से।* इनमें से मात्र दूसरी ही दृष्टि से विचार करें, तो ज्ञात होगा कि *निष्काम कर्मयोगी जो जो व्यवहार करता है, वे प्रायः सब लोगों के हित के लिए ही होते हैं।*

गीता में दो बार ऐसा प्रसंग उद्धृत है कि परम ज्ञानी सत्पुरूष ''**सर्वभूत हितेरताः**''[1] प्राणिमात्र के कल्याण में निमग्न रहते हैं और महाभारत में भी कई स्थानों पर ऐसा प्रसंग आया है। निष्काम कर्मयोगी अहिंसा इत्यादि जिन नियमों का पालन करते हैं, वही धर्म या सदाचार का उदाहरण है। इन अहिंसा आदि नियमों का प्रयोजन अथवा इस धर्म का लक्षण बतलाते हुए महाभारत में धर्म का बाह्य उपयोग दिखलाने वाले ऐसे अनेक वचन हैं-**''अहिंसा सत्यंवचनं सर्वभूतहितं परम''**[2] -अहिंसा और सत्यभाषण, ये नीति धर्म प्राणिमात्र के हित के लिए हैं। **''धारणाद्धर्ममित्याहुः''**[3] -जगत का धारण करने से धर्म है। **''धर्मं हि श्रेय इत्याहुः''**[4] -कल्याण ही धर्म है। **''प्रभवार्थाय भूतानां धर्म प्रवचनं कृतम्''**[5] -लोगों के अभ्युदय के लिए ही धर्म-अधर्मशास्त्र बना है। **''लोकयात्रार्थमेवेह धर्मस्य नियमः कृतः। उभयत्र सुखोदर्कः**[6] -धर्म अधर्म के नियम इस लिए रचे गये हैं कि उनसे लोक व्यवहार चले; और दोनों लोकों में कल्याण हो। इसी परिप्रेक्ष्य में व्यक्त है कि *धर्म-अधर्म सम्बन्धी नैतिक समस्या के समाधान हेतु ज्ञानी पुरूष को लोक व्यवहार, नीतिधर्म और अपना कल्याण- इन बाह्य बातों का तारतम्य से विचार करे* ***''लोकयात्रा च द्रष्टव्या बाह्य नीति'***

गीता कर्म-अकर्म के निर्णयार्थ कर्म के बाह्यफल पर ध्यान न देकर, कर्ता की शुद्ध-बुद्धि को ही प्रधानता देने का आग्रह करती है। इस पर कुछ लोगों का मिथ्या आक्षेप है कि यदि कर्मफल को न देखकर मात्र शुद्ध-बुद्धि पर ही ध्यान दिया जाय, तो मानना होगा कि शुद्ध-बुद्धि वाला मनुष्य कोई भी बुरा कार्य कर सकता है, और वह तर्क प्रस्तुत कर देगा कि मैं शुद्ध-बुद्धि से प्रेरित होकर कार्य कर रहा हूँ, परिणाम क्या होगा, मेरा इससे कोई उत्तरदायित्त्व नहीं है। इसी को आवरण एवं दृष्टान्त बनाकर कोई व्यक्ति पाप कर्म को मूर्तरूप दे सकता है। वह बुरे कर्म करने के लिए स्वतन्त्र हो जायेगा।

उपरोक्त आक्षेप दुराग्रहपूर्ण एवं सतही हैं। सत्य तो यह है कि प्राणिमात्र में समबुद्धि होते ही परोपकार करना तो निष्काम कर्मयोगी के शरीर का स्वभाव बन जाता है। स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि कोरे जड़ कर्मों में ही नीति तत्व नहीं है; अपितु कर्ता की बुद्धि पर वह पूर्णतः अवलम्बित है। गीता में इसे और स्पष्ट करते हुए 18वें अध्याय में कहा गया है कि- इस आध्यात्मिक सिद्धान्त को ठीक से न समझकर

यदि कोई स्वच्छन्दता करने लगे, तो उस पुरूष को तामसी या राक्षसी बुद्धि वाला कहा गया है- **अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरूषम्। मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तमासमुच्यते।।**

उपरोक्त तथ्यों का सांगोपांग अनुशीलन के अनन्तर स्पष्ट है कि स्थितप्रज्ञ कर्मयोगी के आचरण को आधार बना कर नैतिक आचरण के मानदण्ड के रूप में उसे समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया जा सकता है। यदि निष्काम कर्म को आचरण की एक विधि के रूप में स्वीकार कर लिया जाय तो समाज में लोकसंग्रह स्वतः हो जायेगा। स्थितप्रज्ञ योगी का प्रत्येक चरण समाज के धारण, पोषण एवं संरक्षण के लिए ही होता है। फिर पापकर्म, दुःख, अशुभ, आदि स्वतः निष्प्रभावी हो जायेंगे। किन्तु यहां यह भी स्पष्ट करना समीचीन है कि इस परमध्येय के पूर्णतया सिद्ध होने तक प्रतीक्षा न करके, जितना हो सके उतना ही निष्काम बुद्धि को अपने आचरण में उतारने का प्रयास करें। इसी विधि से बुद्धि शुद्ध होती चली जायेगी और अंत में पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो जायेगी।

सामाजिक पक्ष- गीता के नीति तत्त्व चातुर्वण्यरूपी समाज व्यवस्था पर ही अवलंबित हैं। इस तथ्य की जानकारी महाभारतकार के भी ध्यान में पूर्णतया आ चुकी थी, कि अहिंसादि नीति-धर्मों की व्याप्ति केवल चातुर्वण्य के लिये ही नहीं है। अपितु ये धर्म मनुष्य मात्र के लिए एक समान हैं। इसीलिए महाभारत में स्पष्ट रीति से कहा गया है कि, *चातुर्वण्य के बाहर जिन अनार्य लोगों में ये धर्म प्रचलित हैं, उन लोगों की भी राजा को इन सामान्य कर्मों के अनुसार ही करना चाहिए।*

अस्तु, गीता में कही गयी नीति की उपपत्ति चातुर्वण्य सरीखी किसी एक विशिष्ट समाज व्यवस्था पर अवलंबित नहीं है, अपितु सर्वसामान्य आध्यात्मिक ज्ञान के आधार पर ही उसका प्रतिपादन किया गया है। गीता के नीतिधर्म का सामाजिक पक्ष इसी बात पर बल देता है कि जो कर्त्तव्य कर्म शास्त्रतः प्राप्त हो उसे निष्काम और आत्मौपम्य बुद्धि से करना चाहिए; और सभी देशों के लिए यह एक समान उपयोगी है। पुनश्च, यद्यपि आत्मौपम्य दृष्टि का और निष्काम कर्म के आचरण का यह सामान्य सामाजिक नीति धर्म सिद्ध हो गया, तथापि इस बात को भी स्पष्ट विचार कर लेना आवश्यक है कि यह नीति जिन कर्मों के लिए उपयोगी होता है, वे कर्म इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति को कैसे प्राप्त होते हैं? इस प्रश्न के सम्यक् समाधान के परिप्रेक्ष्य में ही उस समय में उपयुक्त होने वाले सहज उदाहरण के दृष्टि से गीता में चातुर्वण्य का उल्लेख किया गया है और साथ-साथ गुणकर्म-विभाग के अनुसार उस समाज व्यवस्था की संक्षेप में उपपत्ति भी बतलाई गई है। परन्तु इस तथ्य पर भी ध्यान देना चाहिए कि वह चातुर्वण्य-व्यवस्था ही गीता का मुख्य भाग नहीं है। सारे गीताशास्त्र का व्यापक सिद्धान्त यही है कि यदि कहीं चातुर्वण्य-व्यवस्था प्रचलित न हो अथवा वह किसी निम्न दशा में हो; तो वहां भी तत्कालीन प्रचलित समाज व्यवस्था के अनुसार समाज के धारण पोषण के लिए जो काम अपने हिस्से आये, उन्हें लोकसंग्रह के लिए धैर्य एवं उत्साह से तथा निष्काम बुद्धि से कर्त्तव्य समझकर करते रहना चाहिए; क्योंकि मनुष्य का जन्म उसी कार्य के निमित्त हुआ है न कि मात्र सुखोपभोग के लिए।

कुछ विद्वान आक्षेप आरोपित करते हैं कि गीता का नीतिधर्म केवल चातुर्वर्ण्य मूलक है; चाहे हिंदुओं का समाज हो या म्लेच्छो का, चाहे प्राचीन हो या अर्वाचीन, पूर्वी हो या पश्चिमी यदि उस समाज में चातुर्वर्ण्य व्यवस्था प्रचलित हो, तो उस व्यवस्था के अनुसार, या दूसरी समाज व्यवस्था संचरित हो तो उस व्यवस्था के अनुसार जो काम समाज द्वारा व्यक्ति विशेष को आवंटित या निर्धारित हो उसे हम अपनी रूचि के अनुरूप कर्त्तव्य समझकर एक बार स्वीकृत कर लें, वही अपना स्वधर्म हो जाता है; और गीता इस बात पर बल देती है कि किसी भी कारण से इस धर्म को ऐन मौके पर छोड़ देना

और दूसरे कार्यों में लग जाना, सामाजिक धर्म एवं सर्वभूतहित या लोकसंग्रह की दृष्टि से निंदनीय है। यही तात्पर्य **'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'** का है।

वस्तुतः गीता का मुख्य उद्देश्य यह बतलाना नहीं है कि समाज-धारणा हेतु कैसी व्यवस्था होनी चाहिए? अपितु गीता का यहां तात्पर्य मात्र इतना है कि समाज व्यवस्था या समाज की संरचना चाहे जैसी हो, उसमें जो यथाधिकार कर्म तुम्हारे हिस्से पड़ जाय, उन्हें उत्साहपूर्वक सम्पन्न करके सर्वभूत हितरूपी आत्मश्रेय की सिद्धि करो। इस तरह से कर्त्तव्य मान कर गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ पुरूष जो कर्म किया करते हैं स्वभाव से ही या अपने कर्म की प्रकृति से ही सम्पूर्ण प्रकृति के हितोत्पादक या लोक कल्याणकारक हुआ करते हैं। प्रसंगतः विचारणीय है कि गीता प्रतिवादित इस कर्म योग में और पाश्चात्य आधिभौतिक कर्म मार्ग में यह एक गम्भीर भेद है कि गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ के मन मे यह अभिमान बुद्धि रहती ही नहीं कि मैं अपने कर्मों के द्वारा लोक कल्याण करता हूँ, वरन् उनके देहस्वभाव मे ही साम्य बुद्धि आ जाती है; और इसी कारण से वे लोग अपने समय की समाज-व्यवस्था के अनुसार केवल कर्तव्य समझकर जो जो कर्म किया करते हैं वे सब स्वभावतः लोककल्याण कारक हुआ करते हैं। जबकि आधुनिक पाश्चात्य नीतिशास्त्रकार संसार को सुखमय मानकर कहा करते हैं कि इस संसार में सब लोगों को सुख की प्राप्ति करा देने के लिए लोक कल्याण का कार्य करना चाहिए। प्रायः सभी पाश्चात्य विचारकों के मन में यह बात समायी रहती है कि स्वयं अपना का सब लोगों का सांसारिक सुख ही मनुष्य का इस संसार में परम साध्य है- चाहे वह सुख के साधनों को अधिक करने से मिले या दुःखों को कम करने से मिले। इसी कारण से उनके विचारों एवे ग्रन्थों में गीता के निष्काम कर्मयोग का यह उपदेश कहीं भी नहीं पाया जाता कि यद्यपि संसार दुःखमय है, तथापि उसे अपरिहार्य समझकर केवल लोकसंग्रह के लिए ही संसार के कर्म करते रहना चाहिए। सभी कर्म-मार्गी है तो सही, परन्तु शुद्ध नीति की दृष्टि से देखने पर उनमें यही भेद ज्ञात होता है कि पाश्चात्य कर्मयोगी सुखेच्छक या दुःखनिवारणेच्छुक होते हैं- कुछ भी कहा जाय परन्तु 'इच्छुक' अर्थात 'सकाम' अवश्य ही हैं। जबकि गीता का कर्मयोगी हमेशा ही फलाशा का त्याग करने वाले निष्कामी होते हैं। इसी बात को यदि दूसरे शब्दों में व्यक्त करें तो कहा जा सकता है कि गीता का कर्मयोगी सात्विक है, और पाश्चात्य कर्मयोगी राजस है।

केवल कर्त्तव्य समझकर परमेश्वरार्पण बुद्धि से सब कर्मों को करते रहने का और उसके द्वारा परमेश्वर के भजन या उपासना को मृत्युपर्यन्त जारी रखने का जो गीता-प्रतिपादित ज्ञानयुक्त प्रवृत्ति मार्ग या कर्मयोग है इसे ही स्वधर्म कहते हैं। अस्तु, समाज कार्य व्यापार का आदर्श लोक कल्याण ही होना चाहिए और यह तभी शक्य है जब हम अपने स्वधर्म का पालन निष्काम भाव से करते रहें।

सहायक ग्रन्थ-

1. कालिदास, अभिज्ञान शाकुन्तलम्।
2. महात्मा गाँधी, अनासक्ति योग।
3. वेदान्ती प्रो0 सन्त शरण, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद् का चुनाव घोषणापत्र।
4. जौहरी जे0 सी0 एवं जौहरी सीमा आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त।
5. ईशावास्योपनिषद्।
6. तिलक बाल गंगाधर, गीता रहस्य।

डॉ0 इन्दु प्रकाश सिंह
असिसटैण्ट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग
राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-29-35
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

हथकरघा की दशा

पंकज कुमार राय

हथकरघा उद्योग भारत के प्राचीन उद्योगों में से एक है। भारतीय अर्थव्यवस्था में इसकी महत्त्वपूर्ण स्थिति थी। इस उद्योग की व्यापकता, क्षमता और उपयोगिता के कारण यह उद्योग स्वव्यवसाय में एक स्रोत के रूप में जाना जाता था। ब्रिटिश काल में इस उद्योग में ह्रास देखने को मिलता है। स्वतंत्रता के बाद इस उद्योग के क्रमिक विकास के अवसर उपलब्ध हुए। यह उद्योग आज लगभग एक करोड़ बुनकरों को रोजगार प्रदान करता है तथा देश के कपड़ा उद्योग में इसका लगभग 23 प्रतिशत योगदान है। इस उद्योग में तकनीकी सुधार लाने के लिए आधुनिक उत्पादन, कार्य-कुशलता तथा साज-सज्जा बढ़ाने के लिए एवं इसके महत्व पर जोर देने के लिए केंद्र एवं राज्य सरकारें कई योजनाएं आरंभ की। इसके लिए हथकरघा उद्योग को अच्छे सूत की पर्याप्त आपूर्ति, कुशल उत्पाद कार्यक्रम, विशेष प्रकार का प्रशिक्षण कार्यक्रम, क्रियाशील सहकारी उद्योगों से बुनकरों की सहायता का प्रयास, बाजार का विस्तारीकरण आधुनिकी तकनीकी तथा गुणवत्ता की मानक तय किए गए। किंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो हथकरघा उद्योग में दिन-प्रतिदिन गिरावट हो रही है। कच्चे माल यथा सूत इत्यादि की महंगाई, मजदूरों का पारिश्रमिक तथा हथकरघा मालिक का लाभ इत्यादि ऐसे कारक हैं, जो लोगों को इस उद्योग से दूरी बनाने को प्रेरित कर रहे हैं। साथ ही मशीन एवं कारखानों से बने कपड़े हथकरघा से बने कपड़े की अपेक्षा सस्ते एवं आकर्षक हैं। वैश्वीकरण के इस दौर में इस उद्योग पर अधिक प्रभाव पड़ा है। इस कारण हथकरघा उद्योग में लगे लोग अपने व्यवसाय को बंद करने पर मजबूर हैं तथा जीवकोपार्जन हेतु महानगरों के लिए पलायन कर रहें हैं।

भारत को अक्सर अध्यात्म में लीन देश कहा जाता है। बौद्ध धर्म का संदेश पूर्व तक ले जाने वाली रंग-बिरंगी और छपी हुई प्रार्थना ध्वजाओं के कपड़ों और मंदिरों में पत्थर की मूर्तियों पर लिपटे तथा राजाओं के कंधों पर पड़े रेशमी कपड़ों, जिन पर सुनहरे धागे से श्लोक काढ़े जाते थे, में पवित्रता का तत्त्व निहित होता था। वधू की साड़ी के किनारों पर लंबे और प्रसन्न वैवाहिक जीवन के आशीर्वाद बुने जाते थे और ओडिशा की हथकरघा से बनी इकत साड़ियों के पल्लों पर महाकाव्य या सामान्य भजनों के शब्द काढ़ दिए जाते थे। भारत में किसी भी मौके पर आशीर्वाद पवित्र ही होता है। अपनी पहली कमाई से अपनी मां के लिए हाथ से बुनी साड़ी खरीदने वाला युवक भी कृतज्ञता और सम्मान के कारण अपना पवित्र पारंपरिक कर्तव्य ही निभा रहा होता है।

किसी समुदाय की संस्कृति और विशिष्टता के अनुसार पहने जाने वाले बुनियादी वस्त्रों के अलावा ज्यादातर किस्म के हाथ से बुने या सजावटी कपड़ों का कोई विशेष अर्थ या उद्देश्य होता है। यही बात भारतीय कपड़ों को इतना विशेष और सार्थक बनाती है। दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका और दक्षिण एशिया में कुछ जातीय समुदाय विशेष अवसरों पर अब भी ऐसे कपड़े बनाते और इस्तेमाल करते हैं, लेकिन उतने व्यापक स्तर पर नहीं, जितना भारत में होता है। इसके महत्त्वपूर्ण उदाहरण पूर्वोत्तर राज्यों में तरह-तरह की शॉलों में दिखते हैं, जिनकी बुनावट और शैली बता देती है कि पहनने वाला किस समुदाय से है

और उसका सामाजिक स्तर क्या है? इसी प्रकार भारत में हथकरघे पर बुना गया कोई भी कपड़ा किसी विशेष क्षेत्र से संबंधित हो सकता है।

भारत में मुगलों के आने से पहले परिधान आमतौर पर बिना सिले होते थे और ओढ़ने के लिए बनाए जाते थे। हथकरघों पर बुने अलग-अलग लंबाई के कपड़ों से ही पुरुषों के लिए लुंगियां, धोतियां, वेष्टियां, अंगवस्त्रम्, पगड़ियां, अंगरखे और शॉल तथा महिलाओं के लिए साड़ियां, लुंगियां, गांठदार चोलियां, ओढ़नी, दुपट्टे तथा शॉल बने। मुगल बादशाह अपने साथ कई हुनर वाले कारीगर लाए, जिनमें दर्जी भी शामिल थे। फारसी शेरवानी, पायजामों, सलवारों, कुर्तों, शरारों और घेरदार लहंगों ने बनारस से महीन बुनाई वाले रेशमी कपड़े और बंगाल से बारीक मलमल की मांग बढ़ा दी, जिन्हें 14वीं और 15वीं शताब्दी में भारत तथा यूरोप के दरबारियों के लिए पूरी कारीगरी के साथ सिला जाता था। बाद में भारत में अंग्रेजों का शासन होने के बाद मैनचेस्टर और लंकाशायर की कपड़ा मिलों में मशीनों के आने के कारण औपनिवेशिक साम्राज्य ने अन्याय भरे करों और दूसरे अत्याचारों के जरिये भारतीय हथकरघा बुनकरों को खत्म करना शुरू कर दिया। जो सबसे बेहतर थे, वे बच गए और जो सबसे खराब थे और मिल के कपड़े से मुकाबला नहीं करते थे, वे भी बच गए। उनमें रोजमर्रा के इस्तेमाल के लिए बेहद सादा बहुउद्देश्यीय दुपट्टे बनाने वाले भी थे, जिसे ओढ़नी, तौलिये, कमर की पेटी, पगड़ी, आधी लुंगी, चादर, कवर आदि के तौर पर भी इस्तेमाल कर लिया जाता था। कुछ रस्मी परंपराएं बच गईं, जैसे चिड़ियों के छापे वाला गहरे लाल रंग का हाथ से बुना अंगवस्त्र, जिसे कर्नाटक के तिगालरू आदिवासी गाल छिदवाने के कार्यक्रमों के दौरान अथवा अपने उत्सवों में आग पर चलने के दौरान धर्मराज (युधिष्ठिर) की पूजा करते समय पहनते है।

निरंतरता– निरंतरता ने ही पहले तो कपड़े की किस्म और शैली को पवित्रता तथा अर्थ देकर, दूसरे पहनने वाले व्यक्ति में पहचान तथा समुदाय, क्षेत्र अथवा धर्म से लगाव की भावना जगाकर और तीसरे, स्थिरता सुनिश्चित करने वाली जाति व्यवस्था की निरंतरता के जरिये भारत में हथकरघे की परंपरा को जीवित रखा है। इसने बुनकरों को अपने चिर-परिचित पेशे में बांधकर और परेशान रखा है, जो खानदानी पेशे में ही रहे हैं और अपेक्षाकृत ऊंचे कहलाने वाले दूसरे पेशों में आजादी के साथ नहीं जा सके हैं। शोषण करने वाले व्यापारियों की करतूतों तथा उसके कारण आई सामाजिक विषमता का ही नतीजा है कि दक्षिण भारत में विजयनगर तथा बहमनी साम्राज्यों के काल में मंदिरों तथा शासकों की आर्थिक सहायता करने वाले धनी और ताकतवर बुनकरों के संघ बाद के समय में कभी नहीं दिखे। ब्रिटेन की कपड़ा मिलों में मशीनों के आविष्कार ने व्यापक तथा निरंतर चली आ रही परंपरा पर बड़ी चोट की।

ग्राहक समूह– आधी सहस्राब्दी पूर्व जब तन ढकना कपड़ों की रूप या आकृति से ज्यादा महत्व रखता था, उस समय हर कोई हाथ से बुने कपड़े ओढ़ा करता था। हथकरघा बुनकर सभी ग्राहक वर्गों को कपड़े देते थे। मुगलों के सिले हुए कपड़े आने के बाद दरबारी और उच्च वर्ग महंगे बुने कपड़ों की ओर बढ़ गया, जबकि निम्न वर्ग कुछ सिले हुए कपड़ों जैसे पायजामों, चोलियों और कुर्तों के साथ सामान्य कपड़े इस्तेमाल करता रहा।

आज शहरी मध्य वर्ग भारत की विविधता भरी वस्त्र विरासत से कटकर दूसरी संस्कृतियों की जीवनशैलियों से आयातित कपड़े पसंद कर रहा है। वैश्विक फैशन में हथकरघों का इस्तेमाल नहीं होता और आयातित सिंथेटिक कपड़ों की चमक अक्सर ग्राहकों को लुभा ले जाती है। कई स्थानीय समुदायों ने हथकरघे की कीमती विरासत को अपनी जीवंत परंपरा का हिस्सा बनाकर रखा है, लेकिन वे सुर्खियों से दूर ही रहे।

स्वतंत्र भारत में व्यवस्था- आज़ादी से पहले भारत में किसी भी प्रकार के कपड़ों का बाजार, की ताकतों के इशारे पर चलता था और उसमें तत्कालीन शासक के कुछ नियम भी लागू होते थे। सरकार द्वारा 1947 के बाद उपलब्ध कराई गई कल्याण, विकास एवं सहायता की व्यवस्था, महात्मा गांधी तथा राष्ट्रवादी खादी आंदोलन के प्रयासों से आरंभ हुई, जिसके बाद कमलादेवी चट्टोपाध्याय तथा उनके उपरांत पुपुल जयकर जैसे प्रभावशाली व्यक्तियों ने उसके ढांचागत पुनरुत्थान के प्रयास किए। किंतु स्वतंत्रता के बाद औद्योगीकरण मिल में बने कपड़े, सिंथेटिक कपड़े और पावरलूम लाया, जो कामकाजी तबके के लिए सस्ते और अधिक सुविधाजनक थे, जिससे बुनकरों की तादाद और भी कम हो गई।

1980 के दशक के मध्य में पावरलूम की जबरदस्त वृद्धि के बीच ग्राहकों को यह नहीं बताया गया कि अंतर का पता कैसे लगाया जाए अथवा अतिक्रमण पर काबू कैसे किया जाए। इससे हथकरघे समाप्त होते गए। निजी क्षेत्र के चमचमाते विज्ञापनों के आगे सरकारी एजेंसियों द्वारा हथकरघों का प्रोत्साहन फीका पड़ता गया। दुर्भाग्य से आरंभिक प्रतिबद्धता और उत्साह खत्म होता गया तथा यह काम सामाजिक एवं वाणिज्यिक काम करने वाले छोटे संगठनों, राज्य विपणन निकायों तथा सरकारी ढांचे के बीच बंटकर रह गया। सरकारी हस्तक्षेप अर्थपूर्ण था और लागू किया गया, लेकिन साथ ही वह कल्पनाशीलता से रहित था और नजरअंदाज करने वाला भी था।

यह तो स्वीकार करना ही होगा कि हथकरघों तथा खादी की संख्या चाहे कितनी भी कम हुई हो, लेकिन पिछले कुछ दशकों में दरबारी संरक्षण तथा दुनिया भर में मुक्त बाजार के अवसरों के अभाव के बावजूद सरकार के विभिन्न प्रकार के हस्तक्षेपों ने ही उन्हें जीवित रखा। सरकार की **विश्वकर्मा योजना** और 70 तथा 80 के दशकों में देश भर में सरकार द्वारा आयोजित सैकड़ों हैंडलूम प्रदर्शनियां इसके उदाहरण हैं। पिछले दो दशकों में धीरे-धीरे ही सही एक बार फिर बाजार की शक्तियां काम करने लगी है। इससे हथकरघों की स्थिति सुधरी है क्योंकि उन्हें प्रभावी विपणन मंचों तथा फैशन उद्योग के तत्वों से जोड़ा गया है और भारतीय बुनकरी को मान्यता देने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है।

हथकरघा पुनरुत्थान- हथकरघा क्षेत्र में नई जान फूंकने के लिए प्रशासनिक व्यवस्थाओं को अपने तरीकों की तुरंत समीक्षा करनी होगी। इसे खत्म होता, दया का पात्र क्षेत्र मानने के बजाय असीमित संभावनाओं वाला क्षेत्र माना जाना चाहिए। विकास के लिए मौजूदा योजनाओं के स्थान पर अधिक यथार्थवादी प्रारूप लागू किए जाने चाहिए। शिल्पियों को मुद्रा ऋण प्राप्त करने, स्टार्ट अप एवं स्किल इंडिया कार्यक्रमों के अंतर्गत सहायता पाने में मार्गदर्शन करने के लिए अनौपचारिक, मुख्यतया स्वरोजगार प्राप्त क्षेत्र का लचीला दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है। बैंकरों को इस क्षेत्र का पर्याप्त ध्यान रखने वाला बनाने के लिए प्रशिक्षण देने तथा जागरूक बनाए जाने की आवश्यकता है। मनरेगा कार्यक्रम से

बुनकरों को कोई लाभ नहीं हो रहा और न ही उसमें खोए हुए हुनर दोबारा सिखाए जा रहे है। कौशल, हथकरघा तथा मनरेगा संभालने वाले अधिकारियों के बीच बेहतर तालमेल होगा तो बिना मतलब के काम करने से बचा जा सकेगा।

वाजिब कीमत पर बढ़िया धागा प्राप्त करने में परेशानी और जूट, जैविक कपास तथा लिनेन जैसे वैकल्पिक धागों की जानकारी की कमी को दूर करना होगा। इस क्षेत्र में कपड़ा उद्योग तथा फैशन डिजाइनर पहल कर सकते हैं और हथकरघे पर बुने जाने के लिए माकूल नए कपड़े तैयार कर सकते हैं, जो फैशन उद्योग की जरूरतों के मुताबिक हों। दो वर्ष का गंभीर कामकाज अफरा-तफरी में आयोजित किए गए फैशन शो तथा प्रोत्साहन के कार्यक्रमों से बेहतर नतीजे दे देगा।

प्राकृतिक रंगाई (डाइंग) में प्रशिक्षण देने, उसे पुनर्जीवित करने तथा उसका प्रयोग करने पर प्रोत्साहन दिया जाए तो पर्यावरण के प्रदूषण को कम करने में बहुत मदद मिलेगी और दुनिया भर में यह स्वीकार्य भी हो जाएगा। प्राकृतिक डाइंग से निकले पदार्थ मिट्टी के लिए हानिकारक नहीं होते। प्राकृतिक रंग भविष्य के लिए संपदा हो सकते हैं, क्योकि भारत में अब भी प्राकृतिक डाइंग का ज्ञान भरा पड़ा है।

बांस, अनन्नास और केले के रेशों में अंतरराष्ट्रीय तकनीकी सहयोग से पहाड़ों तथा तटवर्ती क्षेत्रों से बहुपयोगी प्राकृतिक रेशों के प्रयोग का विकास किया जा सकता है। ऐसा नया कच्चा माल बुनकरों को एक बार फिर हथकरघा क्षेत्र में नए जैविक संसाधन तैयार करने के लिए आकर्षित कर सकता है।

एमेजॉन, फ्लिपकार्ट और नए इंडियामार्ट जैसे ऑनलाइन दिग्गजों के कारण शिल्प और हथकरघा क्षेत्र में विपणन के अवसर तेजी से बढ़ रहे हैं। कई छोटी निजी संस्थाएं भी हैं, जो सीमित ग्राहकों को अनूठी हथकरघा सामग्री ऑनलाइन बेच रही हैं। बुनकरों को इन बाजारों के फायदे और नुकसान समझने की जरूरत आपूर्ति करने के लिए खुद को तैयार कर सकें। अपने काम का प्रदर्शन करने के लिए शिल्पी खुद भी फेसबुक खाते खोल रहे हैं और वेबसाइट भी बना रहे हैं।

सरकार के साथ खुली, पारदर्शी और ईमानदारी भरी साझेदारी के साथ काम करने के लिए गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) के क्षेत्र का पर्याप्त इस्तेमाल नहीं किया गया है। इस अनछुए संसाधन का विकास किया जाना चाहिए। अपने कार्यस्थल पर सर्वश्रेष्ठ कामकाजी तरीके अपनाने वाले एनजीओ से गठबंधन के विशेष प्रयास करने से वास्तविक यथार्थ पर आधारित अधिक प्रभावी कार्यक्रम तैयार करने में सहायता मिल सकती है।

आगे का रास्ता ढूंढने के लिए बड़े कौशल सर्वेक्षण कार्यक्रम की आवश्यकता है। इसमें बुनकर समुदायों में मौजूदा हुनर को मापना तथा उनकी मौजूदा आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का पता लगाना शामिल होगा। इससे उनकी क्षमताओं को संस्थागत तरीके से विकसित करने की योजना बनाने में मदद मिलेगी। फोटोग्राफी, अकाउंटिंग, शो-विंडो प्रस्तुति, प्रदर्शनी में प्रस्तुति, ऑनलाइन बिक्री के लिए अर्गोनॉमिक पैकेजिंग और तरीके जैसे नए हुनर जोड़ने से इस क्षेत्र के कौशल में अच्छी खासी बढ़ोतरी हो जाएगी।

कपड़ा मंत्रालय के तहत आने वाले हथकरघा उपायुक्त ऑफिस के वीवर्स सर्विस सेंटर्स हथकरघा बुनकरों के कौशल उन्नयन, क्षमता निर्माण और तकनीकी हस्तक्षेप में

निर्णायक भूमिका निभाते हैं जिससे उनकी उत्पादकता और आय में वृद्धि हो। केंद्र बुनकरों को डिजाइन इनपुट प्रदान करते हैं तथा उनके लिए बुनाई के दौरान, उससे पूर्व और उसके उपरांत विभिन्न विषयों जैसे वाइंडिंग, रैपिंग, साइजिंग, डाइंग, डॉबी जैकार्ड नुमैटिक वीविंग, डिजाइन मेकिंग (सीएडी) इत्यादि से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करते हैं। केंद्र विभिन्न व्यापार मेलों और कार्यक्रमों में बुनकरों को प्रायोजित करता है जिससे वे सीधे बाजार से जुड़ सकें।

मेगा हथकरघा क्लस्टर योजना भी विशिष्ट उत्पादों के लिए भौगोलिक स्थानों को चिह्नित करने, कौशल उन्नयन करने, डिजाइन इनपुट प्रदान करने, बुनियादी और स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार करने का कार्य कर रही है जिससे घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बाजार की बदलती मांगों को पूरा किया जा सके और हथकरघा उद्योग के लाखों बुनकरों का जीवन स्तर सुधारा जा सके।

वर्ष 2016 में राष्ट्रीय हथकरघा दिवस (7 अगस्त) के अवसर पर वस्त्र मंत्रालय और कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय ने कौशल विकास एवं हथकरघा उद्योग में उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। समझौते के अनुसार, दोनों मंत्रालय संयुक्त रूप से ज्ञान साझा करने, संसाधनों को अनुकूल बनाने और संस्थाओं के बीच तालमेल के माध्यम से हथकरघा बुनकरों के लिए कौशल विकास और उद्यमिता विकास जैसे विभिन्न कार्यक्रम संचालित करेंगे।

दूसरी ओर हस्तशिल्प को शहरी जीवन शैली के लिए अनुकूल और प्रासंगिक बनाया जा रहा है। भारतीय शिल्प विश्वव्यापी बाजार में प्रतिस्पर्धा कर सके, इसके लिए उसकी ब्रांडिंग की जानी चाहिए और ऐसे नए कारोबारी मॉडलों को विकसित किया जाना चाहिए जो सामाजिक एवं व्यावसायिक लक्ष्यों का मिश्रण कर सकें। इस संदर्भ में इंडिया हैंडलूम ब्रांड मार्केटिंग और ब्रांडिंग के लिहाज से एक महत्वपूर्ण पहल है। इसे वर्ष 2015 में 7 अगस्त को पहली बार राष्ट्रीय हथकरघा दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री द्वारा शुरू किया गया था। यह पहल उच्च गुणवत्ता वाले हस्तकरघा उत्पादों की ब्रांडिंग इस प्रकार कर रही है कि इनमें कोई खामी नहीं है और ये पर्यावरण के लिहाज से भी उत्तम हैं। इन उत्पादों के कच्चे माल, अलंकरण, वीविंग डिजाइन और दूसरे गुणवत्ता मानक उच्च स्तर के हैं और इनके उत्पादन में सामाजिक एवं पर्यावरणीय नियमों का अनुपालन किया जाता है।

वैसे यहां एक चिंतनीय बात पर भी विचार किया जाना चाहिए। वह यह कि इस क्षेत्र के कारीगरों को व्यावसायिक मार्गदर्शन नहीं मिल पाता। इससे उनके उत्पादों के डिजाइन उपभोक्ताओं की पसंद और प्राथमिकताओं से मेल नहीं खाते। इसके लिए राष्ट्रीय फैशन प्रौद्योगिकी संस्थान (निफ्ट) ने अपने पाठ्यक्रम में क्राफ्ट क्लस्टर इनीशिएटिव को एकीकृत किया है जिससे उसके विद्यार्थियों को देश के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के बुनकरों के साथ काम करने का मौका मिलता है। इसका एक लाभ यह भी होता है कि विद्यार्थियों को इस क्षेत्र की चुनौतियों को समझने में मदद मिलती है और वे बुनकरों और कारीगर समुदाय के लाभ के लिए नए डिजाइन, तकनीक और सामग्री को पेश कर पाते हैं। बदले में बुनकरों और कारीगरों के लिए भी आधुनिक बाजार की चुनौतियों को समझना आसान होता है। जैसे चेन्नई स्थित निफ्ट केरल के कोझिकोड क्लस्टर (वडाकरा, कोयलांदी और

कोझिकोड) के साथ काम कर रहा है। यह क्लस्टर दो दशक पुराने शिल्प- हथकरघा बुनाई और उरु के लिए प्रसिद्ध है। यहां के हथकरघा क्षेत्र में लगभग 30 सहकारी समितियां हैं और बेपोर हस्तशिल्प क्षेत्र में विशेष स्थान रखता है। बेपोर में उरु नामक परंपरागत नावों के लकड़ी के मॉडल बनाने वाले कारीगर बड़ी संख्या में रहते हैं।

हथकरघा क्षेत्र की कल्याणकारी योजनाएं- हथकरघा बुनकरों का विस्तार देश के सुदूर जनजातीय/आदिवासी क्षेत्रों तक फैला हुआ है। इस वजह से इनका सामाजिक सुरक्षा जीवन और अधिक जटिल होता है। भारत सरकार द्वारा हथकरघा के बुनकरों की सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न कल्याणकारी योजनाएं चलायी जा रही हैं जिनमें से मुख्य योजनाएं निम्नलिखित हैं:

महात्मा गांधी बुनकर बीमा योजना (एमजीबीबीवाई)- इसका मुख्य उद्देश्य हथकरघा क्षेत्र के बुनकरों को बीमा सुरक्षा प्रदान करना है। इस योजना के अंतर्गत बीमित बुनकर को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होंगे- **क.** प्राकृतिक मृत्यु पर 60,000 रुपये **ख.** दुर्घटनावश मृत्यु पर 1,50,000 रुपये **ग.** दुर्घटनावश स्थायी विकलांगता पर 1,50,000 रुपये **घ.** दुर्घटनावश आंशिक विकलांगता पर 75,000 रुपये।

स्वास्थ्य बीमा योजना (एचआईएस) - 12वीं पंचवर्षीय योजना में आर्थिक मामलों संबंधी मंत्रिमंडल समिति (सीसीईए) ने श्रम एवं रोजगार मंत्रालय की राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आरएसबीवाई) के पैटर्न पर स्वास्थ्य बीमा योजना को मंजूरी दी है। यह योजना अब स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय देख रहा है। स्वास्थ्य एंव परिवार कल्याण मंत्रालय ने 29 मार्च, 2016 को हथकरघा बुनकरों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के लाभ पहुंचाने के संदर्भ में एक विस्तृत अनुदेश जारी किया जिसके तहत अस्पताल में भर्ती रोगी को 30,000 रुपये की बीमा सुरक्षा का प्रावधान है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आरएसबीवाई) अभी देश के 19 राज्यों में कार्यान्वित है। इन राज्यों में असम, बिहार, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, केरल, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल शामिल हैं।

मंत्रिमंडल के निर्णय के अनुसार स्वास्थ्य बीमा योजना (एचआईएस) का क्रियान्वयन तमिलनाडु में (जहां पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना कार्यान्वित नहीं है) राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के स्वरूप पर किया गया, जिसके अंतर्गत अस्पताल में भर्ती हुए रोगी को 30,000 रुपये और बाह्य रोगी के लिए 7500 रुपये की भारत सरकार की सहायता का प्रावधान है।

वैश्विक व्यापार में भारतीय वस्त्रोद्योग : भ्रम व यथार्थ- प्राचीन भारत में प्रारंभ से ही कृषि के साथ-साथ कुटीर उद्योगों को भी प्रश्रय दिया गया था। तभी तो भारत शेष विश्व के साथ व्यापार करके सोने की चिड़िया बन सका था। कोई भी देश कभी भी मात्र कृषि के बल पर विश्व की आर्थिक शक्ति नहीं बन सकता। भारत के बारे में ये सभी बातें कि भारत कृषि प्रधान देश है, भ्रमकारी एवं उपनिवेशिक मानसिकता को बल प्रदान करने वाली है। ऋग्वेद से लेकर अंग्रेजों के आने के पूर्व तक भारत कृषि के साथ-साथ उद्योग प्रधान व्यवस्था भी था, भारत में अनेकानेक प्रकार की जातियों का अभ्युदय और उनका विकास उनके कौशल का प्रतीक है। इन्हीं के कौशल से भारत का विश्व व्यापार में 18वीं

सदी तक 34 प्रतिशत सहभाग था जो कि उस समय सर्वाधिक था। अंग्रेजों ने आकर इस व्यवस्था को खत्म कर दिया और भारत पर कृषि प्रधान देश का तमगा लगा दिया, जो कि आज भी प्रचलित है। भारत के वस्त्रोद्योग को सबसे ज्यादा हानि अंग्रेजों ने पहुंचाई, क्योंकि भारत के वस्त्रोद्योग पनप नहीं सकता था। मार्क्स ने इस विषय पर बहुत ही ध्यानाकर्षक बात 10 जून, 1853 को लिखे लेख में लिखी हैं- *यूरोप इन्हें भारत से प्राप्त करता है, बदले में उसे अपना सोना-चांदी भेजता है।* यानी भारत का वस्त्र इतना उच्च कोटि का होता था कि इसका व्यापार अपने पैसे से न होकर सोने-चांदी से होता था। यही कारण था कि संपूर्ण यूरोप का सोना-चांदी भारत खिंचकर चला आया था, और ऐसा सदियों से हो रहा था। यही बात यूरोप वासियों को भारत की ओर खींचकर लाई। मार्क्स 26 जून, 1853 के लेख में पुनः लिखते हैं कि *17वीं सदी के अन्तिम चरण और 18वीं सदी के अधिकांश काल में इंग्लैण्ड के उद्योगपति कह रहे थे कि भारत के सूती और रेशमी वस्त्रों का आयात उन्हें तबाह किए डाल रहा है, अतः पार्लियामेंट को इस मामले में हस्तक्षेप करना चाहिए।* फलतः इंग्लैण्ड में यह कानून बनाया गया कि जो व्यक्ति भारत के कपड़े को अपने पास रखेगा या बेचेगा उसे 200 पौंड जुर्माना भरना होगा। विलियम तृतीय, जार्ज पंचम, जार्ज द्वितीय, जार्ज तृतीय सदृश अनेक शासकों के जमाने में ऐसे कानून बनाए गए जिससे भारत का माल इंग्लैण्ड में बिकना बंद हो गया।

इस प्रकार से परतंत्रता के काल में प्रत्यक्ष रूप से और स्वतंत्रता के बाद अप्रत्यक्ष रखने के लिए संघर्षरत ही रहा। जिस उद्योग के बल पर भारत सोने की चिड़िया बना और जिसके वैशिष्ट्य ने संपूर्ण यूरोप को भयभीत कर दिया था, वही उद्योग आज अपने स्वर्णिम दिनों की वापसी की बाट जोह रहा है। यद्यपि भारत सरकार द्वारा कुछ प्रयास अवश्य किए जा रहे हैं, किंतु वैश्विक नीतियों के चलते ये सब कितने सार्थक हो पाएंगे यह तो आने वाला समय ही बतायेगा।

संभावनाएं अपरिमित हैं और समस्याएं भी बहुत हो सकती हैं। किंतु चुनौती रचनाशील तथा प्रेरणास्पद है क्योंकि इससे भारत की बहुस्तरीय विरासत, विभिन्न प्रकार के अनूठे कौशलों, बाकी दुनिया में समाप्त हो चुकी तकनीकों और प्रक्रियाओं को जीवित रखने में मदद मिलेगी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इससे बुनकर समुदाय को वास्तविक आर्थिक सशक्तीकरण के साथ सार्थक आजीविका हासिल होगी।

सहायक ग्रंथ-

1. वेंकटरमन के.एस., द हैंडलूम इंडस्ट्री इन साउथ इंडिया।
2. दास नागेश सी., डेवेलपमेंट ऑफ हैंडलूम इंडस्ट्री : ऑर्गनाइजेशन, प्रोडक्शन, मार्केटिंग।
3. सेठ मीरा रिपोर्ट।
4. उत्तर प्रदेश डेवलपमेंट रिपोर्ट, एकेडमिक फाउंडेशन, अंडर एरेंजमेंट विथ : प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।
5. योजना, अक्टूबर, 2016, पेज 10, 25-31, 65-66.
6. कार्लमार्क्स, द न्यूयॉर्क ट्रिब्यून, 10 जून, 1853.
7. मार्क्स एंड एंजेल्स, ऑन कोलोनियलिज्म, मास्को, 1978.
8. धर्मपाल, भारत का चित्र, मानस एवं काल, पुनरुत्थान ट्रस्ट, अहमदाबाद, 2007, पेज 81.

पंकज कुमार राय
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग,
दी.द.उ. विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उ0 प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-36-41
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

नैषधियचरित के आधार पर तत्कालीन राजनैतिक जीवन एवं प्रशासनिक प्रणाली

मधु सिंह

गहड़वाल वंश के राजनैतिक जीवन को समझने में सहायक अनेक समकालीन ऐतिहासिक साक्ष्य है, जो नैषधीयचरित के अध्ययन से प्राप्त जानकारी के पूरक तथा प्रमाणक है। इनमें फरिश्ता का इतिहास ग्रन्थ 'कामिल-उक्त तवारीख' लक्ष्मीधर कृत 'कृत्यकल्पतरू' तथा विभिन्न समकालीन शासकों के शासनकाल से सम्बन्धित अभिलेख प्रमुख हैं। उत्तरी भारत के गाहड़वाल वंश के समकालीन शासक वशों में जेजाक भुक्ति के चंदेल, बंगाल के सेन, महिष्मती के कल्चुरी, गुजरात के चालुक्य, दिल्ली के चौहान राजाओं का वंश है। इसके अतिरिक्त गाहड़वाल वंश से सम्बंधित इतिहास की जानकारी देने वाले अनेक साधन है। जो नैषधीयचरित से प्राप्त जानकारी के पूरक हैं।

अधीतकाल की राजनैतिक प्रणाली परम्परागत तौर पर राजतंत्रात्मक थी। राजा की दैवी उत्पत्ति पर विश्वास किया जाता था[1] वह राज्य की समस्त शक्तियों तथा अधिकारों का अन्तिम आधिष्ठान था। किन्तु नैषधीयचरित से एक ऐसी जानकारी प्राप्त होती है। जिसे गाहड़वाल वंशी शासन अपने समसामायिक रूढ़ शासन प्रणाली से भिन्न प्रतीत होता है।

प्रो0 जे0 एस0 नेगी के मतानुसार *नैषधीयचरितम् में धर्मशास्त्र के अनेक ग्रन्थों पर विधिवत अधिकारिक जानकारी रखने वाले राजाओं की चर्चा तो है। किन्तु इसमें कौटिल्य के महान ग्रन्थ अर्थशास्त्र और उसके आदर्शों की कोई चर्चा नही है।*[2] किन्तु ऐसा नहीं है। अर्थशास्त्र ग्रंथ की चर्चा तो इसमें प्राप्त नहीं होती किन्तु इसके विचार प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं। कहा गया है *राजा 'विवारद्कृ' अर्थात् विवार से न्याय को देखने वाले तथा 'चारदृक' अर्थात् गुप्तचरों के माध्यम से राष्ट्र की सारी गतिविधियों पर निगाह रखने वाले थे।*[3] *अर्थात उनका राज्य गतानुगतिक्ता का विरोधी तथा विकासशील था।* **अर्थशास्त्र**[4] *पहला ऐसा राजनैतिक ग्रंथ था जिसने यहा प्रावधान किया कि जहाँ पर धर्म विधान और राजा द्वारा विवेक से लिये गये विधान के बीच विरोध होगा वहाँ राजा द्वारा बनाया गया विधान ही प्रभावी होगा।* छठीं- शताब्दी ई0 के एक अन्य महान लेखक **भारवि** ने अपने कृति 'किरातर्जुनीयम' में राजा को ''गुप्तचररूपी नेत्रों वाला'' **चारदृक** कहा है।[5] *गुप्तचर शासन का इतना महत्त्वपूर्ण वर्ग था। कि क्षत्रियों के निर्णय लेने में उनकी सूचनायें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती थी।*[6] *अतएव उनकी नियुक्ति के विषय में यह प्रावधान था कि इतकर्म करने वाले को स्थिरबुद्धि वाला तथा मन को निग्रह करने वाला होना चाहिये।*[7] इस तरह के गुणों से सम्पन्न दूत के बारे में किरातर्जुनीयम में कहा गया है कि *उसे राजा को गलत सूचनायें नहीं देनी चाहिये और राजा को भी अपने दूत की सूचना को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये। राजाओं और दूतों के अनुकूल आचरण करने पर ही शासन की सारी सम्पत्तिया फलीभूत होती हैं।*[8] गाहड़वाल वंशी शासक गुप्तचरों की सूचना पर विधिवत् ध्यान देते थे और उसके आधार पर निर्णय लेते थे। समकालीन ग्रंथ **मनसोल्लास** में कहा गया है कि *वही प्रभु (राजा) है व जिसमें कार्य करने की अपनी योग्यता हो जिसकी योग्यताओं का उल्लंघन न होता हो। और जो स्वयंशक्तिमान सम्राट हो।*[9] *सम्राट शक्तिशाली तो था, किन्तु वह निरंकुश नहीं था। वह प्रबुद्ध था।*[10] *उसने अपने शासन से अतिवृष्टि आदि ईतियों को हटा दिया था। राजा कल्पवृक्ष के समदानी भी था।*[11] *वह वैदिक धर्मानुयायी था और उसके राजदरबार में*

निरन्तर वेद पाठ होता रहता था।[12] *वह समय-समय पर यज्ञ-अनुष्ठान भी करता रहता था।*[13] *राजाओं को शस्त्र विद्या 'धनुर्वेद' के साथ-साथ वेद-वेदांग की शिक्षा भी दी जाती थी।*[14] *इस प्रकार वे धर्मानु प्राणित अतएव क्षमावान बने रहते थे।*[15] अपनी इसी विद्वता के बल पर गाहड़वाल वंश के अन्तिम शासक हरिश्चन्द्र तथा गोविन्द चन्द्र जैसे राजाओं ने विविध विद्या विचार वाचस्पति जैसी उपाधियाँ ग्रहण की।[16] विद्या विनम्रता और विनम्रता से लोक कल्याण की भावना आती है। ***महेश्वर सूरि*** *ने कहा है कि केवल वही शासक भूपाल है, जो सचमुच ही पृथ्वी की रक्षा करता है। अन्यायी शासक तो एक चोर या डाकू के समान है।*[17]

मानसोल्लास में यद्यपि 'आत्मायत्त' (राजा द्वारा सभी प्रकार से स्वशासित) राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली को सर्वश्रेष्ठ और मंत्रियों द्वारा नियंत्रित राज्य को सबसे हीन बताया गया है।[18] किन्तु यहाँ पर पुनः अर्थशास्त्र के उस विचार को पोषण (समर्थन) प्राप्त होता है, जिसमें राजा और मंत्रिमण्डल को एक रथ के दो पहिये बताया गया है। नैषधीयचरितम् में उल्लेख प्राप्त होता है कि राजा की सहायता के लिये एक मंत्रिमण्डल होता था।[19] राजा उनकी सलाह से कार्य करता था। उसके दरबार में कवियों तथा विद्वानों को भी आश्रय मिलता था।[20] इनसे भी राजकार्य में उचित सलाह ली जाती थी। प्रसिद्ध विद्वान लक्ष्मीधर राजा गोविन्दचन्द्र के मंत्रिमण्डल में सांधिविग्रहिक मंत्री था। उनकी प्रसिद्ध 'कृत्यकल्पतरू' न्याय-प्रक्रिया से सम्बन्धित महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

नैषधीयचरित में कहा गया है कि *उपाय के बिना जो प्रयोजन की सिद्धि करना चाहते हैं, उनकों उपहास-पात्रता ही सुलभ होती है, प्रयोजन नहीं।*[21] राजा का प्रयोजन राज्य को बनाये रखना तथा उसका विस्तार करना है और इसका साधन है- सेना। गाहड़वाल शासकों के पास एक सुगठित सेना थी। जयचन्द्र (1171-1194ई0) के बारे में **फरिश्ता** का विचार है कि *उसके पास एक विशाल सेना थी।*[22] *सेना चतुरंगिणी नर सैन्य, हयसैन्य, वाजिसैन्य, रथ सैन्य थी।*[23] *सामानों को ढोने के लिये खच्चर भी होते थे। श्वेत घोड़े उत्तम माने जाते थे।*[24] *इन्हें सिन्ध देश से मंगाया जाता था।*[25] *घोड़ों के मुँह में उन्हें कारगर ढंग से नियंत्रण में रखने के लिए, लगाम लगाई जाती थी।*[26] *घोड़े सेना के अग्रभाग में रखे जाते थे और उन्हें कई भागों में बाँट दिया जाता था।*[27] *घोड़े अपनी तीव्र गामिता के कारण ही सेना के अगले हिस्से में रखे जाते थे।*[28] *घुड़सवार भी सिंध देश के ही श्रेष्ठ तथा कुशल माने जाते थे।*[29] *कामिल-उत-तवारीख जयचन्द्र के काल के हाथियों की संख्या 700 बताता है।*[30] *सेना में घोड़े तथा हाथी के अतिरिक्त रथ तथा धनुर्धारी रहते थे।*[31] *धनुष बाण युद्ध के प्रमुख अस्त्र थे और निशाना चूक जाना धनुर्धारी के लिये लज्जा की बात मानी जाती थी।*[32] *धनुष 30 अंगुल से भी अधिक लम्बे होते थे।*[33] *युद्ध के अवसर पर योद्धा आत्म-सुरक्षा के लिये कवच धारण करता था।*[34] *युद्ध में प्रचंड योद्धा पग-पग पर मौजूद रहते थे।*[35] *लक्ष्मीधर के अनुसार सेनापति को ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय होना चाहिये।*[36] *यह सेनापति मुख्यतया सैनिक संगठन की देख-भाल करता था। सेना का प्रधान सेनापति राजा होता था, जो अधिकतर अवसरों पर सेना की अगुवाई करता था।*[37] *राजा घोड़े की सवारी करता था।*[38] *कभी-कभी वह रथ की भी सवारी करता था।*[39] *दुर्ग भी दुश्मन से सुरक्षा के साधन थे। दुर्ग के छः प्रकार के बताये गये हैं।*[40] *इतनी बड़ी सेना और साम्राज्य को बनाये रखने के लिये राजकीय कोष की आवश्यकता होती है, जिसके लिये अनेक साधनों से धन एकत्र किया जाता था। भू-राजस्व राज्य के आय का प्रमुख स्रोत था। इसके अतिरिक्त सामन्त नृपतियों ने राजा को समय-समय पर विभिन्न प्रकार के उपहार दिये। ये उपहार बहुमूल्य रत्न आदि तथा भिन्न-भिन्न राजाओं के प्रदेश में उत्पन्न होने वाली विशिष्ट वस्तुयें थी।*[41] *किसी उचित उत्तराधिकारी के अभाव में मृतक का धन*

राजा का हो जाता था।[42] *राजा दूसरे राजाओं पर आक्रमण करके भी अपने कोष में वृद्धि करता था।*[43] *इस प्रकार शासन को बनाये रखने हेतु आवश्यक कोष अनेक साधनों से जुटाया गया।*

कृषि उत्पाद राजस्व का प्रमुख स्रोत था। अतएव राजा खेती करने के साधनों पर विशेष बल देता था, ताकि अधिक उत्पादन से राजस्व में वृद्धि हो और राज्य की जनता सुखी व सम्पन्न है। **महाराज नल** *ने अपने साम्राज्य से अतिवृष्टि आदि ईतियों को हटा दिया था।*[44] राज्य की अधिकतर कृषि 'नदीमातृक' थी।[45] *'नदीमातृक' उसे कहते हैं जहाँ नदी के जल से खेती की जाती हो इसके अतिरिक्त शासन द्वारा सिंचाई के अन्य साधन उपलब्ध कराये जाते थे। जैसे जहाँ नदी का जल नहीं पहुँच पाता था, वहाँ पर तालाब खुदवाये जाते थे।*[46] जिसमें वर्षा का जल एकत्र करके सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराई जाती थी। कहीं-कहीं पर कुऐं खुदवाये जाते थे, जो पीने के पानी के साथ-साथ सिंचाई के लिये जल भी उपलब्ध कराते थे। लेकिन ऐसा नहीं था कि खेती योग्य सारी जमीन सिंचित रही हो। अब भी बहुत सी जमीन 'देवमातृक' या वर्षा पर आधारित रही होगी।

केन्द्रीय राजतंत्रात्मक शासन-व्यवस्था के अतिरिक्त स्थानीय प्रशासन भी प्रभावी था। **नीलकण्ठ शास्त्री** के शब्दों में *समाज का वास्तविक जीवन तो 'अन्य संगठनों में बनता था- मंदिरों में, मठों में, विहारों में, गाँवों में, जातीय संगठनों में, व्यापारियों की श्रणियों में- जो सबके सब राज्य से अलग- स्वतंत्र रूप में चलते थे और राजा के पास तभी जाते थे, जब वे आपस में लड़ने की स्थिति में ही जाते थे। उनका आपसी समन्वय नहीं हो पाता था और जब झगड़ों को शान्त करने के लिये वे कोई मध्यस्थ चाहते थे। जब तक बिना किसी संघर्ष के वे अपने क्रिया कलापों में रत रहते थे, तब तक राजा का सामाजिक जीवन में कोई भी हस्तक्षेप नहीं था।*[47] *शासन के अन्तर्गत अनेक सामन्त भी होते थे, जो समय-समय पर राजा के समक्ष उपस्थित होकर उसे प्रणाम करते थे और करदाता की अपनी उसके प्रति अधीनता को स्वीकार करते थे।*[48] स्मरणीय है कि **समुद्रगुप्त के प्रयाग प्रशस्ति** में भी *राजा के प्रति सामन्तों के इस तरह के कृत्यों का उल्लेख प्राप्त होता है।*[49] सामन्त राजा को बहुमूल्य उपहार भी देते थे,[50] जो प्रयाग प्रशस्ति के सामन्तों द्वारा 'सर्व-करदान' के उल्लेख से तुलनीय है। राजा इनमें से अधिकांश दान-सामग्री का पुनः उनमें वितरण कर देता था।[51] इसके अतिरिक्त और बहुत से लाभ सामन्तों को राजा से प्राप्त होता था। राजा राजकुमारों तथा सामन्त-नृपतियों को अस्त्र-शस्त्र संचालन की शिक्षा भी देता था।[52] सामन्तों का पद और प्रतिष्ठा के अनुसार वर्गीकरण भी किया जाता था। राजा के दरबार में जब अनेक सामन्त-नृपति एकत्र होते थे, तो उनके पद और प्रतिष्ठा के अनुसार बैठने के लिये सिंहासन दिया जाता था।[53] इस प्रकार सामन्तों के राज्य की सुरक्षा होती थी और राजा के भी सम्मान तथा प्रभाव क्षेत्र में विस्तार होता था। सामन्तों के अतिरिक्त ब्राह्मणों को भी अग्रहार-दान के रूप में अनेक करमुक्त गाँव दिये जाते थे, जो अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रहते थे। इस तरह के ढेर सारे अग्रहार-दान से सम्बन्धित अभिलेखों के रख-रखाव हेतु कई प्रकार के कर्मचारियों का वर्ग पनपा, जिसका उल्लेख उनके द्वारा लेखबद्ध किये गये अभिलेखों से प्राप्त होता है। जैसे- *गोविन्दचन्द्र के बनारस ग्राण्ट का लेखक करणिक वासुदेव, कमौली के चौथे दान-पत्र का लेखक करणिक ठाकुर सहदेव तथा कमौली के पाँचवे व छठे दान-पत्र का लेखक ठाकुर गागुक था। गोविन्द चन्द्र के ही सहेत-महेत प्लेट (विक्रम) संम्वत् 1186 में 27वीं पंक्ति में कायस्थ सुरादित्य का नाम प्राप्त होता*

है, जो सभी शास्त्रों में प्रवीण था।[54] इस तरह से दान-पत्र लेखकों के अनेक नाम मिलते हैं, जो विभिन्न जाति, धर्म तथा सम्प्रदाय के होते हुये भी एक वर्ग के रूप में विकसित हुए थे।

गोविन्दचन्द्र के सहेत-महेत लेख में *दान दिये गये कई गाँवों का उल्लेख तथा चोल राजा से सम्बन्धों की चर्चा है। लेख की उन्नीसवीं पंक्ति में बौद्ध श्रमण शाक्य-रक्षित तथा उसके शिष्य वागीश्वर रक्षित की चर्चा है, जो क्रमशः उत्कल (उड़ीसा) तथा चोल देश से सम्बन्धित थे।* लेख की तिथि विक्रम सम्वत 1186 ई0 सन् 1120-29 को सूचित करती है, जो चोल राजा विक्रम चोल के राज्य से सम्बन्धित है।

इससे प्रतीत होता है कि कन्नौज के गाहड़वाल राजाओं के तंजावुर के चोल राजाओं से मैत्री सम्बन्ध थे, जिनका साम्राज्य कुलोत्तुंग प्रथम तथा विक्रम चोल के समय में उत्तरी सरकार तक विस्तृत हो गया था। चोल राजाओं का दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ बड़े पैमाने पर व्यापार चलता था और बंगाल की खाड़ी को, उनके अधिपत्य के कारण चोलों की झील के रूप में जाना जाता था। ऐसी परिस्थिति में चोल राजाओं के साथ गाहड़वाल वंशीय राजाओं के शान्तिपूर्ण मधुर सम्बन्धों की चर्चा महत्त्वपूर्ण है। इसका महत्त्व तब और बढ़ जाता है, जब ध्यान कुण्डिनपुर के बाजार में सत्तू की मोहक सुगंध से आकर्षित होने वाले विदेशी व्यापारियों के नैषधीयचरित में प्राप्त उल्लेख की ओर जाता है। यह एक स्मरणीय तथ्य है कि *गुप्तोत्तर राजनीतिक विश्रृंखलता के उपरान्त जो सोने के सिक्के प्रायः लुप्तप्राय हो गये थे, वे अधीतकाल में पुनः प्रचलन में आये।* नैषधीयचरितम् में *प्रासादों के वैभवपूर्ण वर्णन, तत्कालीन लोगों की आभूषण प्रियता, खान-पान तथा दैनिक-जीवन के अन्य क्रिया कलाप धन-धान्य सम्पन्नता के परिचायक हैं।* इससे पता चलता है कि *गाहड़वाल वंश के शासन काल में व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार हुआ तथा विदेशी राजाओं से सम्बन्धों में मधुरता आई।*

'नैषधीयचरित' के रचयिता श्री हर्ष चूँकि जयचन्द्र के दरबारी कवि थे, इसलिये उनकी उपलब्धियों पर किंचित प्रकाश डालना अनुपयुक्त न होगा। जयचन्द्र के अभिलेखों में उसकी उपलब्धियों पर परम्परागत अतिरंजित वर्णन मिलता है, राजा की किसी विशेष उपलब्धि का वर्णन इनमें नहीं है। उसके समकालीन दक्षिण पूर्वी अथवा दक्षिण-पश्चिमी किसी शासक ने उस पर विजय नहीं पायी थी। चन्द्र-बरदायी के पृथ्वीराज रासो[55] से ज्ञात होता है कि *चाहमान (दिल्ली) के विरुद्ध जयचन्द्र ने पदमर्दि (जेजाक भुक्ति) की सहायता में युद्ध किया था।* इसका संकेत एक परवर्ती अभिलेख से भी होता है। 1183-84 ई0 का यह **अभिलेख मदनपुर** से प्राप्त हुआ था, जिसके अनुसार *परमर्दि पर पृथ्वीराज ने आक्रमण किया था।*[56] *जयचन्द्र के समकालीन कलचुरि शासक जयसिंह और विजय सिंह थे। जयसिंह को 'सम्राट' कहा गया है, जिसने कुन्तल, गुजरात और तुरूष्क के शासकों को पराजित किया था।*[57] *इन दोनों शासकों ने गाहड़वालों के विरुद्ध कोई अभियान नहीं किया और कहा जा सकता है कि गोविन्द चन्द्र द्वारा अधिगृहीत कलचुरि क्षेत्र पर जयचन्द्र का अधिकारी बना रहा। चालुक्य नरेश कुमारपाल की मृत्यु के बाद परमार नरेश और राजकुमार अपने खोये हुये साम्राज्य की पुनर्प्राप्ति के प्रयास में लगे हुये थे। बंगाल के सेन शासकों से भी संभवतः कोई युद्ध नहीं हुआ।* **बनारस कालेज अभिलेख और बोध गया अभिलेख** से प्रतीत होता है कि *जयचन्द्र अपने साम्राज्य की पूर्वी सीमा सेन शासकों से सुरक्षित रखने में पूर्णतः समर्थ रहा।*[58] समकालीन मुस्लिम इतिहासकारों और भारतीय साहित्यिक साक्ष्यों से प्रतीत होता है कि *जयचन्द्र बड़े भू-भाग पर शासन करने वाला, विशाल सेना वाला महान शासक था और 1193 ई0 में जब मुसलमान भारत आये तब वह*

कान्यकुब्ज और वाराणसी में शौर्य पूर्वक शासन कर रहा था। पृथ्वीराज रासो में वर्णित पृथ्वीराज और जयचन्द्र के परस्परिक संघर्षों और सम्बन्धों को अन्य साहित्यिक स्रोतों से पुष्ट नहीं किया जा सका है। गाहड़वाल अभिलेख भारतीय साहित्य और मुस्लिम इतिहासकार एक स्वर से जयचन्द्र की सैनिक क्षमता का उल्लेख करते हैं। पृथ्वीराज रासो के अनुसार *1193 ई0 में चन्दावर युद्ध में मुहम्मद गोरी से पराजित होने से पहले जयचन्द्र ने गोरी को एक से अधिक बार पराजित किया था।* इसकी पुष्टि **पुरूष परीक्षा और रम्भामंजरी नाटक** से भी होती है।[59] इसके विपरीत मुस्लिम इतिहासकार गोरी के गाहड़वालों विरूद्ध छोटे-मोटे संघर्षों का ही उल्लेख करते हैं। इनके अनुसार बड़ा और निर्णायक युद्ध चन्द्रावर का ही था, जिसमें जयचन्द्र की पराजय हुई थी।

गाहड़वाल काल के स्थापत्य के बारे में पुरातात्विक प्रमाणों के आभाव में निश्चय के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता, यद्यपि नैषधीयचरित सहित अन्य समकालीन साहित्यिक ग्रंथों में विस्तृत एवं संभवतः अतिरंजित वर्णन मिलता है। *जयचन्द्र की पराजय के बाद बनारस में जो 1000 मंदिर विनष्ट किये गये थे, उनमें से कुछ इस युग के भी हो सकते हैं।* परम्परा *जयचन्द्र को जौनपुर क्षेत्र में कुछ मंदिरों में निर्माण का श्रेय देती है, जो बाद में मस्जिदों के रूप में परिवर्तित कर दिये गये।*[60] गाहड़वालों के राज्य से संबंधित जिन प्रमुख सांस्कृतिक केन्द्रो का उल्लेख नैषधचरित में भी मिलता, उनमें *काशी, कुशिक (जिसे कान्यकुब्ज, कुशस्थल, गांधी नगर, महोदय और कन्नौज के नाम से भी जाना जाता है), उत्तर कोसल, (अयोध्या), प्रयाग, श्रावास्ती, पाण्डय देश, (केरल), महेन्द्रगिरि, (महानदी के दक्षिण का भाग) कांची, कंलिग (उड़ीसा), नेपाल, मिथिला (बिहार), कामरूप (असम), मगध* आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. नैषध 6/94
2. नेगी, जे0 एस0 सम इण्डोलॉजिकल स्टडीज, पेज 10, इलाहाबाद।
3. नैषध 1/13
4. सन्दर्भ- झा, द्विजेन्द्र नारायण, श्रीमाली, कृष्ण मोहन (सं0)
5. किरातर्जनीयम् 1/4 क्रियासु युक्तैर्नृप चार चक्षुषो न वचनीयाः प्रभवोडनु जीविभिः
   अतोडसि क्षन्तुमसाधु साधु वा हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।।
6. नैषध 4/116
7. नैषध 6/2
8. किरातार्जुनीयम 1/15, स किंसरग साधुन शास्ति योऽधिपं। हितान्न यः संृशगुर्त स किं प्रभुः।।
   सदानुकूलेसु हि कुर्वते रतिं । नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।।
9. मानसोल्लास 2/694. स्वयं सम्राटः यो राजा स्वाज्ञा चैव निरगेलः निजशक्तया समायुक्तः स प्रभुः प्रभुरूच्यते।।
10. नैषध0 1/11
11. नैषध0 1/15
12. नैषध0 2/102
13. नैषध0 3/25
14. नैषध0 10/1
15. नैषध0 3/36
16. हरिश्चन्द्र का मछलीशहर (जौनपुर) अभिलेख और गोविन्दचन्द्र का बंगाल एशियाटिक सोसायटी ग्राण्ट।
17. ज्ञानपंचमी कथा, 10/9
18. मानसोल्लास 6/282
19. नैषध0 18/3
20. नैषध0 1/17: 3/24
21. नैषध0 14/115
22. तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 138 और आगे।
23. नैषध0 12/66

24. नैषध0 10/3
25. नैषध0 1/64
26. नैषध0 1/63
27. नैषध0 1/68
28. नैषध0 1/69
29. नैषध0 1/71
30. इलियट और डावसन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया इज टोल्ड बॉय हर ओन हिस्टोरियन्स, तारीख-ए-यामिनी ए उत्वी, ताज-उल-मा-आथिर, हसन निजामी, कामिल-उत्त-तवारीख, इब्न अथीर, हबीब-उस-सियार, खोंडमीर, जमी-उत्त-तवारीख आदि से लिये गये उद्धरण।
31. नैषध0 1/61
32. नैषध0 1/93: 1/9
33. नैषध0 12/66
34. नैषध0 1/123
35. नैषध0 1/132
36. लक्ष्मीधर कृत्यकल्पतरू, राजधर्मकाण्ड, संपा0 के0ए0 रंगस्वामी आयंगर,गायकवाड़ ओरिण्टल सीरीज,बड़ौदा,1944,पृ 31-32
37. नैषध0 1/68
38. नैषध0 1/57
39. नैषध0 10/1
40. नैषध0 1/22
41. नैषध0 21/3
42. नैषध0 5/89
43. नैषध0 1/19
44. नैषध0 1/11
45. नैषध0 3/38
46. नैषध0 17/158
47. पी0 के0 गोडे स्मृति ग्रंथ, पृ 37/.
48. नैषध0 21/1
49. प्रयाग-प्रशस्ति 'आत्मनिवेदन, कन्योपायनदान, गुरूत्मदंक-स्वविषय-भुक्ति-शासन-याचना।'
50. नैषध0 21/3
51. नैषध0 21/4
52. नैषध0 21/5
53. नैषध0 10/67
54. इपीग्रैफिया इण्डिका, ग्रंथ ग्प पेज 20-26
55. पृथ्वीराज रासो, पृष्ठ 2507-2615
56. ऑक्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, 1904, पेज 55
57. इपीग्रैफिया इण्डिका, ग्रंथ-2, पृष्ठ 17-19
58. नियोगी, रोमा; द हिस्ट्री ऑफ दि गाहड़वाल डॉयनस्टी, 1959; कलकत्ता ओरियण्टल बुक एजेन्सी, कलकत्ता, पेज-105
59. पुरूष परीक्षा बम्बई, 1914 ई0 पृ0 146-47, रम्भामंजरी (बम्बई, 1899 ई0) प्रथम, पृ0-5
60. नियोगी, रोमा, द हिस्ट्री ऑफ दि गाहड़वाल डॉयनस्टी, 1959 कलकत्ता ओरियण्टल बुक एजेन्सी, कलकत्ता, पेज- 203

डॉ0 मधु सिंह
असिस्टैन्ट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
कमलेश यादव डिग्री कालेज, झूँसी, इलाहाबाद, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-42-44
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

तुगलक शासकों की नीतियों का पर्यावरणीय अध्ययन

अनीता शुक्ला

किसी देश राज्य या साम्राज्य की आर्थिक क्षमता उसके प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरणीय परिस्थिति से निर्धारित होती है। प्राकृतिक संसाधनों की कमी दूर करने के लिए कटिबद्ध राज्य एवं शासक विस्तारवादी एवं विकासवादी नीति अपनाते हैं। राज्य की जनता का जीवनयापन स्तर उसकी आर्थिक क्षमता पर निर्भर करता है।

पर्यावरण की सुरक्षा एवं पारिस्थितिकी संतुलन मानव जीवन के अस्तित्व को बनाये रखने हेतु अति आवश्यक है। मानव एवं प्रकृति एक दूसरे के अनुपूरक हैं। मानव जीवन के लिए शुद्ध वायु, जल एवं कृषि के लिए उपजाऊ भूमि आवश्यक है। इनके लिए वृक्षारोपण, जल संभरण, पशुपालन एवं प्रदूषण रहित जीवन शैली आवश्यक है।

तुगलक काल में आर्थिक नीतियों को कार्यान्वित करते समय पर्यावरण को एक सशक्त माध्यम बनाया गया। भारतवर्ष की तत्कालीन अर्थव्यवस्था में प्रकृति पर निर्भरता एक महत्त्वपूर्ण स्थिति थी। इसका प्रमुख कारण यह है कि भारत सदैव से ग्रामीण प्रधान देश रहा है।[1] ग्रामीण परिवेश होने के कारण अर्थव्यवस्था में कृषि की प्रधानता थी। तेरहवीं एवं चौदहवीं शताब्दी में गंगा का मैदानी भाग अधिकतर जंगल था और खेती के योग्य नहीं समझा जाता था।[2] अधिक वर्षा छाया, फल इत्यादि की दृष्टि से तुगलक काल में वनों के संरक्षण की एक सुनियोजित प्रक्रिया आरम्भ हुई। प्रथम सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक ने इस क्षेत्र मे शुरूआत किया। वास्तव में गयासुद्दीन का शासन इतना अल्पकाल (1320-25) तक रहा कि यह कोई नवीन परम्परा कायम न कर सका अतः वह नीति निर्धारक के रूप में जाना जायेगा।[3] एक प्रमुख उदाहरण से तुगलकों की उपलब्धियों को देखा जा सकता है लेकिन यहाँ दृष्टिकोण यह है कि असफलता में से सफलता किस प्रकार दूरगामी दृष्टि से उदित हुई जब दिल्ली से राजधानी का देवगिरि में स्थानांतरण कर जिसका नाम बदलकर दौलताबाद रख दिया।[4] इस नई कार्रवाई की तैयारी के लिए उसने सड़क के दोनों ओर पेड़ लगवाए एवं प्रत्येक दो कोस पर सराय बनवाए।[5] दिल्ली से दौलताबाद की दूरी 1500 किमी से अधिक था।[6] मुहम्मद तुगलक की इस योजना के क्रियान्वयन मे लगभग दो वर्ष (1327-28) लगे थे इस अवधि में दिल्ली से देवगिरि के बीच की सड़क बनवाई एवं जनता में सुविधा हेतु सराय बनवाये। आशय यह है कि सुल्तान को इस बात की जानकारी थी कि राजधानी परिवर्तन जैसी महत्वपूर्ण योजना के क्रियान्वयन में पर्यावरण रूपी बाधा न पड़े। यह तो न अपेक्षित था कि सड़क के दोनों किनारों पर लगाये गये वृक्ष रातों-रात इतने बड़े हो जाते कि यात्रियों को छाया देते लेकिन जब वे वृक्ष बड़े हुए तो निश्चित रूप से उनसे पर्यावरण संरक्षण में सहायता ही मिली। दौलताबाद की यात्रा एक मंहगी विफलता साबित हुई।[7] ये भी कहा जा सकता है कि इस योजना का त्वरित परिणाम जो भी हो पर सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक का यह कदम उसके पर्यावरणीय ज्ञान का द्योतक था।

योजना की असफलता से पर्यावरण संरक्षण हेतु किए गए कार्यों का महत्व कम नहीं हो जाता। इस कदम से दिल्ली के सुल्तान नहीं अपितु बहमनी सुल्तान लाभान्वित हुए जिन्होंने शीघ्र ही इस क्षेत्र में अपना शासन स्थापित किया।[8] इसके दूरगामी परिणाम पर्यावरण से जोड़कर देखे जा सकते हैं।

वनों के संरक्षण एवं विस्तार की प्रक्रिया में फिरोजशाह तुगलक ने सबसे अधिक योगदान दिया। उसे फलों के बाग लगवाने का काफी शौक था और माना जाता है कि उसने दिल्ली के आस-पास ऐसे 1200 बाग लगाए जिसमें अधिकांश बागों में काले और सफेद अंगूर तथा मेवे पैदा होते हैं। इससे सुल्तान को 180000 टंकों की आमदनी होती थी।[9] फिरोज तुगलक के ये कार्य आर्थिक समृद्धता प्रदान करने के साथ-साथ पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जाता है।[10]

मुहम्मद बिन तुगलक दिल्ली सल्तनत का प्रथम शासक था जिसने कृषि की उन्नति के लिए एक व्यवस्थित कृषि नीति एवं प्रणाली का प्रचलन किया।[11] मुहम्मद तुगलक ने कुएँ खोदने के लिए एवं बीज और हल खरीदने के लिए कृषि ऋण (सोंधार) प्रदान किए।[12] मुहम्मद बिन तुगलक का कुएँ, पोखर, तालाब खुदवाने का आदेश आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जल संभरण एवं संरक्षण का एक प्रमुख एवं अनुपम उदाहरण माना जाता है। मुहम्मद बिन तुगलक ने भूमि सुधार एवं कृषि विस्तार के लिए दीवान-ए-अमीर कोही नामक नया विभाग बनाया[13] *भारतीय इतिहास में पहली बार यह जाहिर हुआ कि खेती, खेती के तरीकों तथा खेती के साधनों को सुधारना भी सरकार के कर्तव्यों में आता है। खेती के सुधार पर न केवल बल दिया वरन् सरकारी खजाने से एक लम्बी रकम भी खर्च की इसके साथ खाली पड़ी हुई भूमि को भी जोत में लाकर कृषि की जाए।*[14] सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक विपरीत परिस्थितियों को भी कृषकों के लिए अनुकूल बनाना चाहता था साथ ही पर्यावरण संरक्षण एवं संर्वधन हेतु प्रयासरत था। इससे यह प्रतीत होता है कि मुहम्मद बिन तुगलक की पर्यावरण संरक्षण की नीति सर्वथा बुद्धिमत्तापूर्ण थी।[15] *फिरोजशाह ने खेतिहारों की उन्नति के लिए एक कदम और भी आगे बढ़ाया। उसने किसानों को सिंचाई की सुविधा बढ़ाने का भी प्रयत्न किया। उसने नहरें खुदवाई। निःसन्देह इन नहरों से उन नये नगरों की भी जलापूर्ति हो जाती थी, जिन्हें उसने बसाया था, परन्तु इसमें कोई शक नहीं कि इन नहरों ने कृषि के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया।*[16] फिरोजशाह ने नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्रों से हक-ए-शुर्व नामक सिंचाई कर उत्पादन का 1/10 भाग निश्चित किया।[17] तुगलक काल में नहरों का निर्माण बहुत व्यापक स्तर पर हुआ नहरों का निर्माण एक अन्य दृष्टिकोण से भी महत्त्वपूर्ण है कि इतिहास में पहली बार राज्य की ओर से सिंचाई की सुविधा देना राज्य का कर्तव्य माना गया।[18] प्राकृतिक वर्षा एवं नहरों के अलावा औषि सिंचाई का एक अन्य साधन कुएँ भी थे। फवायद-उल-फुवाद से ज्ञात होता है कि उस समय कच्चे एवं पक्के कुएँ विद्यमान थे।[19] कुएँ, पोखर एवं तालाबों का निर्माण जल संभरण एवं जल संरक्षण हेतु आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी अनुपम उदाहरण माना जायेगा। इन नीतियों का क्रियान्वयन यदि पूर्णतत्परता एवं ईमानदारी से किया गया होता तो पर्यावरण के दृष्टिकोण से अप्रत्याशित सफलता प्राप्त होती और पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम होता।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं पर बांधों द्वारा पानी रोक कर सिंचाई की आवश्यकता की पूर्ति की जाती थी।[20] संभवतः इनमें से कुछ बांधों का निर्माण राज्य एव कुछ बांध

स्थानीय लोगों द्वारा बना लिये जाते थे।[21] सिंचाई के लिए छोटे-छोटे बांधों का निर्माण किया जाना पर्यावरण संतुलन के दृष्टिकोण से एवं नदियों के जल संतुलन के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

आधुनिक समय में भारत की अधिकांश महत्वपूर्ण नदियों का जल प्रदूषित हो गया है। परन्तु तुगलक काल मे चौकी दौड़ाकों के कारण सुल्तान को दौलताबाद में (दिल्ली से 40 दिनों की दूरी पर) पीने के लिए नियमित रूप से गंगा जल मिलता रहता था।[22] ये साक्ष्य इस बात के पुख्ता सबूत हैं कि उस समय नदियां अत्यन्त ही स्वच्छ एवं निर्मल थीं। जबकि आज भारत में प्रमुख नदियाँ प्रदूषित हो चुकी हैं। इससे यह स्पष्ट है कि तुगलककालीन नदियाँ स्वच्छ, निर्मल एवं स्वतः प्रवाहमय थी।

इस प्रकार तुगलक शासकों को आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक नीतियों के क्रियान्वयन में पर्यावरण का कारक मूलरूप में समाहित प्रतीत होता है। उनके द्वारा किए भूमि सुधार कार्यक्रम एवं योजना तथा सिंचाई हेतु किए गए प्रयास पर्यावरण के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण एवं लाभप्रद थे।

इन योजनाओं एवं नीतियों का आकलन तात्कालिक रूप से आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक रूप से तो किया गया परन्तु पर्यावरणीय रूप से इनका आकलन नहीं किया गया जबकि यदि पर्यावरण के दृष्टिकोण से इनका आकलन किया जाए तो ये नीतियां एवं योजनाएं सफल एवं लाभप्रद प्रतीत होती हैं इनके दूरगामी परिणाम अत्यंत ही सफल माने जा सकते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. के.एम.अशरफ, लाइफ एण्ड कण्डीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, नई दिल्ली-1970, पृ0 113.
2. ए.के.सेन, पीपुल एण्ड पोलिटिक्स इन अर्ली मेडिवल इण्डिया, (1206-1398) कलकत्ता 1963, पृ0 119.
3. डब्ल्यू एच. मोरलैण्ड, मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, इलाहाबाद 1963 पृ, 61.
4. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलतक (1206-7520) पृ0 96.
5. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलतक (1206-1520) , नई दिल्ली, पृ0 96.
6. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत राजनीति समाज और संस्कृति 8वीं-17वीं सदी तक, नई दिल्ली (1206-7520) पृ0 105.
7. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलतक (1206-1526) , नई दिल्ली, पृ0 97.
8. पूर्वोक्त, पृ0 98.
9. शम्स शिराज अफीक, तारीख-ए-फिरोजशाही (वि-इण्डिका), पृ0 295-296, कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री, जिल्द एक-पृ0 53.
10. के0एम. अशरफ, हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, नई दिल्ली, 1990, पृ0 120.
11. तपनराय चौधरी इरफान हबीब(सं) कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जिल्द एक ओरिएण्ट लांगमैन 1984-पृ0 48.
12. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलतक, पृ0 103.
13. पूर्वोक्त।
14. मोरलैण्ड, मुस्लिम, भारत में ग्रामीण व्यवस्था इलाहाबाद,1963, पृ0 69.
15. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलतक , नई दिल्ली, पृ0 104.
16. मोरलैण्ड, मुस्लिम, भारत में ग्रामीण व्यवस्था इलाहाबाद,1963, पृ0 79.
17. आर0सी0 जौहरी, फिरोज तुगलक, आगरा, 1968, पृ0 106-07 कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री जिल्द एक पृ0 67.
18. मोरलैण्ड पूर्वोक्त, पृ0 79.
19. फवायद-उल-फवाद, सम्पादित लतीफ मलिक, लाहौर, 1966 पृ0 263-264.
20. कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्र जिल्द एक पृ0 49.
21. अफीक, पृ0 330.
22. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : राजनीति समाज और संस्कृति, नई दिल्ली, पृ0 125.

अनीता शुक्ला
शोध छात्रा, इतिहास विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उ0 प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-45-50
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

सामाजिक न्याय की अवधारणा : डॉ0 अम्बेडकर की दृष्टिकोण से

अंजना

डॉ0 अम्बेडकर भारतीय समाज में जाति व अन्याय के विरुद्ध लड़े। समान मानवाधिकारों के लिए लोगों के अन्तःकरण को सक्रिय करना चाहते थे। वे सामाजिक न्याय का नेतृत्व शिक्षा द्वारा करते हैं। उनके अनुसार सामाजिक न्याय, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व शैक्षिक सभी प्रकार से सभी को मिलना चाहिए। डॉ0 अम्बेडकर भारत में सभी को समान रूप से न्याय, स्वतंत्रता, समानता व बन्धुत्व के अन्तर्गत लाने के लिए कानूनी रूप से प्रतिबद्ध थे।

एक सफल क्रांति के लिए असंतोष का होना ही पर्याप्त नहीं हैं आवश्यकता है, राजनीतिक और सामाजिक अधिकारों के न्याय, अनिवार्यता एवं महत्त्व के एक परम एवं सम्पूर्ण दृढ़ निश्चय की- डॉ0 अम्बेडकर। एक विचार के रूप में सामाजिक न्याय की बुनियाद सभी मनुष्यों को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। इसका सम्बन्ध आमतौर पर एक ऐसे समाज या संस्थान के निर्माण के विचार से होता है, जो समानता एवं एकता के सिद्धान्तों पर आधारित हो, जो मानवाधिकारों को समझता एवं एकता के सिद्धन्तों पर आधारित हो, जो मानवाधिकारों को समझता हो व उनकी कद्र करता हो साथ ही प्रत्येक मानव की गरिमा को स्वीकार करता हो। इसके अनुसार किसी के साथ सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के पास इतने न्यूनतम संसाधन हों ताकि वे उत्तम जीवन की अपनी संकल्पना को साकार कर पायें। विकसित हो अथवा विकासशील दोनों ही प्रकार के दशो में राजनीतिक सिद्धान्त के दायरे में सामाजिक न्याय की यह अवधारणा एवं उससे सम्बन्धित अभिव्यक्ति का प्रमुखता से उपयोग किया जाता है। व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में भारत जैसे देश में सामाजिक न्याय का स्लोगन वंचित समूह की राजनीतिक घेराबन्दी का प्रमुख आधार रहा है। उदारवादी मानवीय राजनीतिक सिद्धान्त में उदारवाद, समतावाद से आगे बढ़ते हुए सामाजिक न्याय के सैद्धान्तिकरण में कई आयाम जुड़ते चले गये। जैसे- अल्पसंख्यक अधिकार, बहुसंस्कृतिवाद, मूल निवासियों के अधिकार इत्यादि। इसी प्रकार, नारीवाद के दायरे में स्त्रियों के अधिकारों को लेकर भी कई स्तरों पर सिद्धान्तीकरण हुआ है साथ ही स्त्री सशक्तिकरण के मुद्दों को भी सामाजिक न्याय से जोड़कर देखा जाने लगा है।

भारत के सन्दर्भ में समाज व राजनीति में लम्बे समय से समानता के मुख्य रूप से विद्यमान रही है। प्राचीन काल में शासन काल में शासन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं था जहाँ राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक रूप में असमानता के रूप में जाति कारक हावी न रहा हो। यह समस्या वर्तमान में भी परिलक्षित है, जबकि भारत में लोकतांत्रिक संविधान को लागू हुए 65 वर्षों से अधिक समय हो गया है। भारतीय समाज के एक बड़े हिस्से के तहत् सामाजिक रूप से श्रेणीबद्ध, आर्थिक रूप से दरिद्र, राजनीतिक रूप से दबे हुए, धार्मिक रूप से बहिष्कृत तथा अनिश्चित काल तक शैक्षिक एवं सांस्कृतिक अवसरों से वंचित रहने वालों को दास बनाकर दंडित कर सभी मानवाधिकारों से वंचित रखा जाता था,

जो श्रेणीबद्ध विषमता एवं अन्याय पर आधारित व्यवस्था के शिकार थे। ऐसी ही व्यवस्था एवं सामाजिक अन्याय के विरुद्ध डॉ0 अम्बेडकर दृढ़ता से आवाज उठाई। डॉ0 अम्बेडकर का उद्देश्य सामाजिक न्याय एवं एक न्याय संगत समाज की स्थापना करना था, जो आवश्यक रूप से एक जातिरहित समाज था। उन्होंने मौजूदा सामाजिक व्यवस्था की न केवल क्रूर आलोचना की अपितु जाति के न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा एवं विनाश पर आधारित सामाजिक व्यवस्था की वैकल्पिक दृष्टि और वैकल्पिक मॉडल लेकर आयें।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जब 'सामाजिक न्याय' शब्द प्रसिद्ध हुआ, इसे सबसे पहले स्थानान्तरित कर दिये गये किसानों जो शहरी श्रमिक बन गए थे की नई आम जनता की आवश्यकताओं पर ध्यान देने के लिए शासक वर्ग से एक अपील के रूप में इस्तेमाल किया गया था। बीसवीं सदी में यह एक प्रमुख समस्या के रूप में स्थापित हुआ। यद्यपि सामाजिक न्याय का मूल आधार है- समाज के वंचित, शोषित और दीन वर्गों का उत्थान। इसका प्रमुख उद्देश्य है- मानव जाति को सामाजिक एवं आर्थिक शोषण व भेदभाव की पारम्परिक कैद से मुक्त कराना। यह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करता है जो समाज के सभी वर्गों के लिए स्वतंत्रता और समान अधिकार सुनिश्चित कर सकें।

यद्यपि एक विचार के रूप में विभिन्न धर्मों की बुनियादी शिक्षाओं में सामाजिक न्याय के विचारों को देखा जा सकता है। लेकिन अधिकांश धर्म या सम्प्रदाय जिस व्यावहारिक रूप में सामने आये अथवा बाद में जिस तरह उनका विकास हुआ, उनमें कई तरह के ऊँच-नीच और भेदभाव जुड़ते गये। समाज विज्ञान में सामाजिक न्याय का विचार उत्तर-ज्ञानोदय काल में सामने आया और समय के साथ अधिकारिक परिष्कृत होता गया। क्लासिकल उदारतावाद ने मनुष्यों पर से प्रत्येक प्रकार की पुरानी रूढ़ियों और परम्पराओं की जकड़न को खत्म किया और उसे अपनी मर्जी के हिसाब से जीवन जीने हेतु आजाद किया। इसके तहत् प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्रता देने एवं समानता का व्यवहार करने पर जो दिया गया, किन्तु ये सभी तथ्य औपचारिक स्वतंत्रता एवं समानता तक ही सीमित रही। 19वीं सदी के आरम्भ में कई उदारवादियों ने राज्य के हस्तक्षेप द्वारा व्यक्तियों की आर्थिक भलाई करने एवं उन्हें अपनी स्वतंत्रता का उपभोग करने में समर्थ बनाने की वकालत की। स्पष्टतः इन सभी विचारों का सामाजिक न्याय के प्रति गहरा सरोकार था।

सामाजिक न्याय मानवाधिकारों तथा समानता की धारणाओं पर आधारित है। इसमें प्रगतिशील कराधान आय के पुनर्वितरण अथवा सम्पत्ति के पुनर्वितरण के जरिए उच्च से उच्चकोटि का आर्थिक समतावाद शामिल होता है। भारत जैसे विविधतापूर्ण समाज में एक समतावादी, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है जिसकी मूल वजह भारत की जाति व्यवस्था जो शायद विश्व की सबसे लम्बे समय तक जीवित रहने वाला सामाजिक वर्गीकरण है। हिन्दू धर्म की एक निर्णायक विशेषता यह है कि जाति में रिवाज की शुद्धता के आधार पर सामाजिक समूहों की जटिल व्यवस्था शामिल है। भारतीय समाज की इसी व्यवस्था को सुधारने का संकल्प डॉ0 अम्बेडकर ने उठाया था। यद्यपि सामाजिक न्याय के अम्बेडकर के विचारों को उनके अपने विभिन्न कार्यों के किसी विशेष शीर्षक में शामिल नहीं किया गया है। सामाजिक न्याय पर उनके विचार बिखरे हुए हैं। इसीलिए सामाजिक न्याय पर उनके विभिन्न लेखनी से निकाले गये हैं।

अम्बेडकर का मूल उद्देश्य न्याय के सिद्धान्त पर आधारित एक जातिविहीन समाज की स्थापना था।[1]

हालांकि महात्मा बुद्ध, संत कबीर एवं महात्मा फूले अम्बेडकर के गुरू थे जिन्होंने उसे सामाजिक रूप से बहिष्कृत जनता के लिए सामाजिक न्याय का तरीका सिखाया। वास्तव में यहाँ बुद्ध की शिक्षाओं का असर पड़ा था तथा अम्बेडकर की सामाजिक न्याय की धारणा का उद्भव बौद्ध धर्म की शिक्षाओं से ही हुआ था। 1789 ई0 की फ्रांसीसी क्रान्ति को सार्वभौमिक रूप से इस दुनिया के लोगों को स्वतंत्रता, समानता, एवं बन्धुत्त्व के सिद्धान्तों का सबसे बड़ा उपहार देने के लिए याद किया जाता है, किन्तु बुद्ध को अपने समय के लोगों को स्वतंत्रता, समानता एवं भाईचारे का सिद्धान्त को देने के लिए सर्वोपरि अग्रदूत के रूप में याद किया जाता है।[2]

यद्यपि सामाजिक न्याय के अम्बेडकर के विचारों को उनके अपने विभिन्न कार्यों के लिए किसी विशेष शीर्षक में शामिल नहीं किया गया है। सामाजिक न्याय एवं उनके विचार बिखरे हुए हैं। इसीलिए सामाजिक न्याय के उनके विभिन्न लेखों से संकलित किये गये डॉ0 अम्बेडकर का मूल उद्देश्य न्याय के सिद्धान्त पर आधारित एक जातिविहीन समाज की स्थापना था।

डॉ0 अम्बेडकर के सूत्र स्वतंत्रता, समता, बंधुता और न्याय में मानवतावादी तत्व हैं। इन्हीं मानवतावादी तत्वों पर उनके सामाजिक विचार आधारित हैं। केवल सामाजिक ही नहीं अपितु आर्थिक एवं राजनीतिक विचारों की प्रस्तुति भी इन्हीं तत्वों पर की गयी हैं। उन्होंने अपने सामाजिक विचारों से सामाजिक मानवतावाद को विकसित किया है, जिसके प्रथम तीन आधार हैं- स्वतंत्रता, समानता एंव बंधुता। मानव समाज की दृढ़ता एवं एकता के लिए ये मूल्य आवश्यक हैं। डॉ0 अम्बेडकर ने कहा कि भारतीय समाज की विशेष बात तो यह है कि हिन्दू धर्म का विश्लेषण किया जाए तो वह स्वयं न्याय एवं उपयुक्तता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता।[3] यही कारण है कि उन्होंने हिन्दू धर्म को नकारा जिसके कारण उन्होंने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया था।

स्वतंत्रता मानवतावाद का एक मूलभूत तत्त्व है। इसी प्रकार स्वतंत्रता की अवधारणा नई समाज व्यवस्था का एक सिद्धान्त है उनका मानना था कि स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति को मिलनी चाहिए, प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए, जिसकी अपेक्षा वह दूसरों से स्वयं के लिए करें। आपसी सहयोग एवं प्रेम के कारण ही स्वतंत्रता, समानता एवं नैतिकता दृढ़ हो सकती है। स्वतंत्रता के सन्दर्भ में डॉ0 अम्बेडकर ने एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किया कि स्वतंत्रता का उपयोग कैसे करें? इसी वस्तुस्थिति को धन में रखकर मनुष्य को शिक्षा ग्रहण करने के अधिकार को स्वतंत्रता का मूलभूत अधिकार मानना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करने से वंचित करने का अर्थ स्वतंत्रता का उपयोग करने से मना करना है। अज्ञानी मनुष्य यदि स्वतंत्र होगा तो भी वह स्वतंत्रता के सुख का अनुभव नहीं कर सकेगा। आवश्यक है कि शिक्षा एवं स्वतंत्रता के परस्पर समन्वय से ही मानव समाज प्रगति की दिशा में आगे आ सकेगा।[4] आवश्यक है कि शिक्षा एवं स्तंत्रता के परस्पर समन्वय से ही मानव समाज प्रगति की दिशा में आगे बढ़ सकेगा। अम्बेडकर की सामाजिक और कानूनी दृष्टि का केन्द्रीय विषय है- अनुभवजन्य मनुष्य और

मानव व इस जीवन में मानव के बीच सही सम्बन्धों की स्थापना। न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे पर आधारित सम्बन्धों से नैतिक समझ और आपसी सम्मान का लोकतांत्रित और मानवतावादी समाज उभरेगा। अम्बेडकर को पूर्णतया विश्वास था कि राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा के साथ विहीनों को जोड़ने के लिए शिक्षा सर्वोत्तम संसाधन में से एक है।

अम्बेडकर के विचार में सामाजिक न्याय की राह का नेतृत्व शिक्षा द्वारा किया जाना था। उन्हें दृढ़ विश्वास था कि सामाजिक बुराइयों और अन्याय के विरुद्ध शिक्षा की प्रभावकारिता रामबाण है क्योंकि भारत में सामाजिक अन्याय की समस्या न केवल आर्थिक है, बल्कि सांस्कृतिक भी है। यहाँ समाज के अछूतों/वंचित वर्गों को रहने के लिए घर देना, भोजन देना और फिर उन्हें उच्च वर्गों की सेवा करने के लिए छोड़ देना भी ही पर्याप्त नहीं है, जैसा कि इस देश का प्राचीन आदर्श था। उनके मन व मानसिकता से हीनता की भावना को निकालना इससे कहीं अधिक जरूरी था। हीनता की भावना को उनके विकास को दर किनार कर दिया और उन्हें दूसरों का गुलाम बना दिया। इसके साथ उनके भीतर खुद के लिए और अपने देश के लिए जीवन के महत्त्व की चेतना जगाना आवश्यक था, जिससे भारतीय सामाजिक व्यवस्था ने उन्हें निर्दयतापूर्वक वंचित किया था। अम्बेडकर को दृढ़ विश्वास था कि उच्च शिक्षा के प्रसार के अतिरिक्त कोई भी चीज इसे बेहतर ढंग से हासिल नहीं कर सकती[5] और यह तथ्य आज के समय में भी उतना ही सही है जितना कि उस वक्त जब अम्बेडकर ने यह लिखा था।

डॉ0 अम्बेडकर के सामाजिक समाजवाद का दूसरा आधार समता है। समता एवं स्वतंत्रता परस्पर सम्बन्धित है। नागरिकों के सामाजिक अधिकार जितने समान होंगे, उतना ही वे स्वतंत्रता का अधिक उपभोग कर सकेंगे। स्वतंत्रता के उद्देश्य को यदि सार्थक करना है तो उसके लिए समानता होनी अत्यन्त आवश्यक है।[6] समाज में जाति, पंथ, धर्म, वंश आदि के आधार पर किसी भी प्रकार की विषमता का पालन करना अन्याय है। इससे समाज में संघर्ष होगा जो कि राष्ट्र कल्याण में अवरोधक होगा। समानता के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपनी सुप्त शक्तियों का विनाश कर समाज के दुर्बल लोगों को न्याय दिलाने में समर्थ है। निश्चय ही सामाजिक अवसर उपलब्ध हो, ताकि वह अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकें जो समानता एवं सामाजिक अधिकारों के साथ जुड़ा हुआ हो। साथ ही सामाजिक बन्धुतत्त्व भी एक महत्वपूर्ण तत्त्व है, जो सामाजिक जीवन को एकता एवं सुदृढ़ता प्रदान करता है। बंधुत्व के बिना स्वतंत्रता एवं समानता का कोई अर्थ नहीं है।

सामाजिक न्याय अधिकारों का एक समूह है। उच्च एवं निम्न वर्ग के मध्य एक संतुलन चक्र है। डॉ0 अम्बेडकर के न्याय की परिकल्पना भारतीय समाज के प्रत्येक सदस्य का व्यापक हित और मानव-मानव, समूह-समूह व समुदाय के बीच सकारात्मक और रचनात्मक सम्बन्धों पर आधारित है। इसके सन्दर्भ में डॉ0 अम्बेडकर के सिद्धान्त इस प्रकार हैं-[7] *1. सभी मनुष्यों के बीच समानता हो। 2. प्रत्येक मनुष्य स्वयं साध्य हों।3.प्रत्येक को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं धार्मिक स्वतंत्रता है। 4. प्रत्येक व्यक्ति अभाव एवं भय से मुक्त हो। 5. स्वतंत्रता, सौहार्द का सम्पोषण करना और मानव द्वारा मानव का तथा एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के शोषण के निवारणार्थ उद्यमशील रहना। 6. एक ऐसे प्रजातांत्रिक समाज का समर्थ पक्ष-पोषण करना जिसमें शासन की जनतंत्रीय संसदीय प्रणाली है। 7. सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए अहिंसात्मक उपायों की प्रभाविता में विश्वास व वर्ग संघर्ष तथा गृहयुद्ध से बचने के लिए*

शान्तिपूर्ण समझदार उपाय काम में लिये जाएं। 8. किसी भी विषय, सिद्धान्त अथवा परम्परागत विश्वास की अतिवाद चरम पराकाष्ठा का त्याग किया जाए। 9. आध्यात्मिक अनुशासन की आवश्यकता। 10. बुद्ध द्वारा प्रतिपादित विश्वप्रेम, समानता, मानव भ्रातृत्व को सुदृढ़ आधार पर प्रतिष्ठित करना। इत्यादि।

डॉ0 अम्बेडकर के आर्थिक चिन्तन का उनके समग्र सामाजिक चिन्तन का सार है, क्योंकि जो सामाजिक क्रान्ति उत्पन्न करना चाहते थे, वह सार के रूप में आर्थिक परिवर्तन ही था। डॉ0 अम्बेडकर समाज में समानता विशेषकर आर्थिक समानता के पक्षधर थे। उनका मानना था कि- *संसार में जितना अन्याय और अनाचार है; जितना द्वेष एवं मालिन्य है; सब आर्थिक असमानता के कारण है। जब तक सम्पत्ति पर एकाधिकार रहेगा तब तक मानव समाज का उद्धार हो ही नहीं सकता एक अर्थशास्त्री वही होता है, जो युग की मान्यताओं के साथ-साथ विश्व व्यापार को भी समझता है। विश्व बन्धुत्व की भावना विश्व में बदलते आर्थिक सम्बन्धों को भी सरलता से सुलझाने का प्रयास करता है, जिससे समकालीन आर्थिक सन्दर्भों के साथ राष्ट्र का मार्ग प्रशस्त कर सके।*[8] डॉ0 अम्बेडर आर्थिक ढाँचे में महिलाओं के योगदान को भी महत्त्वपूर्ण मानते थे। भारतीय अर्थव्यवस्था में सुधार के तहत् उन्होंने पंचवर्षीय योजना, कृषि का राष्ट्रीयकरण, समान कराधान, समान आय का वितरण, मुद्रा का अवमूल्यन जैसे मुद्दों पर अपने विचार प्रस्तुत किये जो कि वर्तमान में प्रासंगिक हैं।

डॉ0 अम्बेडकर दुःख, गरीबी व विपन्नता के निवारण का एक मात्र साधन शिक्षा को मानते थे। वह ऐसी शिक्षा व्यवस्था को मानते थे जो मनुष्य को निर्भय बनाये, एकता सिखाये एवं मानवीय हकों का बोध कराये तथा अपनी अस्मिता एवं स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना एवं लड़ना सिखाये। उन्होंने कहा कि शिक्षा क्रान्ति का पर्याय है। भ्रम एवं छल-कपट के लिए शिक्षा तेज धार वाली छुरी है तथा गलत रूढ़ियों तथा प्रथाओं एवं अंधविश्वासों को नष्ट करने के लिए सशक्त कुठार है।[9]

निष्कर्ष :- अतः स्पष्ट है कि डॉ0 अम्बेडकर के द्वारा सामाजिक न्याय हेतु किये गये प्रयासों व संघर्षों के परिणामस्वरूप ही नब्बे के दशक के बाद सामाजिक न्याय भारतीय राजनीति का एक प्रमुख नारा बन गया। इस कारण अभी तक सत्ता से दूर रहने वले समूहों को सत्ता की राजनीति के केन्द्र में आने का मौका मिला। गौरतलब है कि भारत में सामाजिक न्याय का संघर्ष लोगों के अस्तित्व एवं अस्मिता से जुड़ा हुआ संघर्ष है। उल्लेखनीय है कि विकसित समाजों की तुलना में विकासशील समाजों में सामाजिक न्याय का संघर्ष बहुत जटिलताओं से घिरा रहा है। अधिकांश अवसरों पर इस समुदायों ने लोगों को सामाजिक न्याय के संघर्ष में बहुत ज्यादा संरचनात्मक हिंसा एवं कई अवसरों पर राज्य स्तरीय हिंसा का भी सामना करना पड़ा है, किन्तु सामाजिक न्याय के लिए चलने वाले संघर्षों के कारण इन समाजों में बुनियादी बदलाव हुए हैं। सामाजिक न्याय को और अधिक सुदृढ़ करने के लिए सरकार और साथ ही साथ लोगों को सभी मोर्चों पर उद्देश्य के लिए डॉ0 भीमराव अम्बेडकर की प्रतिबद्धता की तरह सक्रिय रूप से कार्य करना होगा। इस हेतु कुछ सुझाव निम्नवत हैं-

1. सरकार स्तर पर एक, सुनियोजित ढंग से विभिन्न नीतियाँ और कार्यक्रम होने चाहिए जिनमें सभी वर्गों से लोग शामिल हों जो समानता और सामाजिक न्याय की ओर ले जायेंगे।

2. विभिन्न अभिनव प्रयासों के साथ सामाजिक न्याय की अभिवृद्धि के लिए बढ़ते हुए स्वयंसेवी और गैर-सरकारी दोनों संगठनों को आगे आना चाहिए।

3. आज के नवयुवक सक्रिय हैं और उन्होंने कई मौकों पर अपनी सक्रिय सहभागिता से यह साबित किया हैं, (जैसे- अन्ना हजारे आन्दोलन में) उन्हें डॉ0 अम्बेडकर के समानता व सामाजिक न्याय के विचारों को कार्यान्वित करने के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी।

4. शिक्षितों को समानता और सामाजिक न्याय के प्रति जागरूकता फैलानी चाहिए।

5. शैक्षणिक संस्थानों समेत कारपोरेट निकाय, मीडिया और विभिन्न संस्थाओं को समाज में सामाजिक न्याय और समानता का संदेश फैलाने के लिए सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

6. शिक्षा तंत्र के विभिन्न स्तरों पर समानता और सामाजिक न्याय की अवधारणा पर केन्द्रित कर शैक्षणिक पाठ्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए इत्यादि।

निश्चय ही समय के साथ सामाजिक न्याय के सिद्धान्तीकरण में कई नये आयाम जुड़े हैं और यह एक संकल्पना अथवा नारे के रूप में इसने लम्बे समय तक खामोश या नेपथ्य में रहने वाले समूहों को भी स्वयं हेतु जागृत किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. रणसुभे डॉ0 सूर्य नारायण, डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडर, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली पृ0-65.
2. कीर धनंजय, डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन-चरित पापुलर प्रकाशन नई दिल्ली पृ0-259.
3. सिंह मोहन, डॉ0 अम्बेडकर के व्यक्तित्व के कुछ पहलू, लोकभारती पेपर बैक्स इलाहाबाद पृ0-42.
4. यादव डॉ0 वीरेन्द्र सिंह, समतामूलक समाज एवं सामाजिक परिवर्तन के युगपुरुष : डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली पृ0-308.
5. अम्बेडकर डॉ0 भीमराव, बहिष्कृत भारत- अंक 31 मई, 1929.
6. जाटव डी0 आर0, डॉ0 अम्बेडकर व्यक्तित्व व कृतित्व पृ0-18.
7. Gopal pura & Ghanshayam Shah- Ambedkar's Idea of Social Justice Dalits & the state, in.concept publishing New Delhi- Page-51.
8. डॉ0 अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय भाग (2) महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्रकाशित पृ0-53.
9. सिंह डॉ0 किरन, डॉ0 भीमराव अम्बेडकर (सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षिक दर्शन) पृ0-106.

सहायक ग्रन्थ-

1. भटनागर राजेन्द्र मोहन, डॉ0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. जाटव डी0 आर0, डॉ0 अम्बेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

- BAWS (2008) Dr. Baba Saheb Ambedkar Writings & Speeches (BAWS) Vol. 3 Gov. of Maharashtra, Mumbai. -(2010) Amihilation of Cost, Vol.-1, -(1994) Vol. 13., -(1995) Vol. 14 Part- 2, -(2003) Vol. 17, Part- 1

3- Ambedkar's Idea of Social Justice Dalits and the state – Gopal Gura Ghanshyam Shah, in. concept publishing Co., New Delhi.

4. सिंह मोहन, डॉ0 अम्बेडकर व्यक्तित्व के कुछ पहलू। लोकभारती पेपर बैक्स, इलाहाबाद।
5. रणसुभे, डॉ0 सूर्य नारायण, डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर, राधाकृष्ण पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
6. यादव डॉ0 वीरेन्द्र सिंह, समतामूलक समाज एवं सामाजिक परिवर्तन के युगपुरुष : डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, ओमेगा पब्लिकेशंस नई दिल्ली।

7- Gail Omvedt, Ambekar: To words and Enlightented India, Penguin books, New Delhi India.

अंजना

शोध छात्रा, इतिहास विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-51-57
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

अर्थशास्त्र, नैतिक मूल्य एवं श्रीमद्भगवदगीता

महेन्द्र त्रिपाठी

प्रस्तुत शोध पत्र आर्थिक संदर्भ में मानव के नैतिक जीवन मूल्य की सामयिक प्रांसगिकता विशेष रूप से आर्थिक परिप्रेक्ष्य का संक्षिप्त विश्लेषण करता है। प्राच्य एवं पाश्चात्य विद्वानों के मध्य 'मानव धर्म' के रूप में समादृत भगवदगीता नैतिक अन्तर्द्वन्द्व की परिस्थिति में कर्त्तव्यपथ को आलोकित करने वाली दिव्य ज्योति है। इस ग्रन्थ में मनुष्य द्वारा अपने जीवन को शान्ति एवं समृद्धमय बना सकने की क्षमता विद्यमान है जिसका एक पहलू आर्थिक भी है। यह शोध पत्र दो भागों में विभाजित है- प्रथम भाग में मानव के नैतिक जीवन को आर्थिक संदर्भों में विश्लेषित किया गया है जबकि द्वितीय भाग में श्रीमद्भगवदगीता में निहित मानवीय जीवन के उन नैतिक कर्तव्यों का उल्लेख है जो उसे आदर्श मानव बनाने की ओर उन्मुख करते हैं।

अर्थशास्त्र का अध्ययन भौतिक विज्ञान की भाँति नहीं है जो प्राकृतिक नियमों से संचालित होता है अपितु यह मानवीय विचारों का एक वृहद समुच्चय है। यदि हमें आर्थिक समस्याओं व उनके निवारक उपायों को समझना है तो यह सर्वप्रथम जानना होगा कि एक व्यक्ति इस दुनिया में क्यों और कैसा व्यवहार अपनाता है। पाश्चात्य आर्थिक मॉडलों में 'मानव' क्रियाओं या व्यवहारों को ही उपेक्षित किया जाता रहा है, जबकि इन मॉडलों में केन्द्रीय स्थान उसी का होना चाहिये।

भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक परम्परा में नैतिक आदर्शो एवं मूल्य विषयक विचार-विमर्श की पृष्ठभूमि वैदिक काल से ही दृष्टिगोचर होती है जबकि भौतिकतावादी, अतिउपभोगवाद व अनैतिक धन संचय की बुनियाद पर निर्मित आधुनिक पाश्चात्य आर्थिक विश्लेषण मानव के नैतिक पक्ष की पूर्णतया उपेक्षा करता है। परिणामस्वरूय वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में व्याप्त पूँजीवादी गलाकाट प्रतियोगिता, अन्तहीन शोषण, असमानता, संघर्ष व पारिस्थितकीय असन्तुलन की समस्याऐं आर्थिक विश्लेषकों के समक्ष चुनौती बनी हुई हैं। हमारे वेदों में अध्यात्म के अन्तर्गत इन समस्याओं के निराकरण का स्पष्ट मार्ग उल्लेखित है। वेदों में स्पष्ट उल्लेखित है कि मानव की भौतिक व आध्यात्म की द्वैती प्रकृति होती है और दोनों के अध्ययन एक दूसरे के निष्कर्षों पर आधारित करने से इसे समझने में सहायता मिलती है। प्राचीन भारतीय मनीषियों ने धर्म को मानव जीवन में एक प्रतिमान के रूप में स्थपित किया है और उसमें चिरन्तन मूल्य रूपी- *सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, दान, धैर्य, अस्तेय, इन्द्रिय-निग्रह* इत्यादि धर्म है।

मानव-व्यवहार अर्थशास्त्र के अध्ययन का विषय है, वह मस्तिष्क की असन्तुलन की अवस्था का परिणाम है। मानवीय मस्तिष्क की यह प्रकृति है कि वह असन्तुलन को नापसन्द करता है और फलस्वरूप 'सन्तुलन' की स्थिति को प्राप्त करने हेतु सतत प्रयत्नशील रहता है क्योंकि असन्तुलन कष्ट है और इसका निवारण 'आनन्द' है। जिससे यह भौतिकी का ही नहीं अपितु आध्यात्म का विषय भी बन जाता है। और मनोविज्ञान व अर्थशास्त्र को आध्यात्मिक विज्ञान से विश्लेषित करने की आवश्यकता होती है।

गीता में अर्थशास्त्र या मुद्रा के बारे में विशिष्ट रूप से कुछ नहीं कहा गया है जबकि व्यक्ति के क्रियाओं के परिणामों के बारे में अत्याधिक वर्णन है। व्यक्ति अपनी क्रियाओं के परिणामों को कैसे प्राप्त करता है या उन परिणामों पर कैसी प्रतिक्रिया करता है इसका बहुत अधिक प्रभावी संबंध हमारे आध्यात्मिक उन्नति और विकास से जुड़ा होता है। यह शोध प्रपत्र दो भागों में विभाजित है- ***प्रथम भाग*** *में मानव के नैतिक जीवन को आर्थिक संदर्भों में विश्लेषित किया गया है जबकि* ***द्वितीय भाग*** *में श्रीमद्भगवदगीता में निहित मानवीय जीवन के उन नैतिक कर्तव्यों का उल्लेख है जो उसे आदर्श मानव बनाने की ओर उन्मुख करते हैं।*

प्रथम-भाग- मानव जीवन के अस्तित्व के साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यक आधारभूत आवश्यकताओं यथा भोजन, कपड़े व आवास की जरुरत पड़ती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वह 'कर्म' (क्रिया) करता है। इन 'क्रियाओं' के फलस्वरूप सामाजिक व आर्थिक आयामों का एक ताना-बाना निर्मित होने लगता है। दैनिन्दन जीवन में मनुष्य अपने क्रियाकलापों के परिपालन हेतु एक मापदण्ड का चयन करता है जिससे व्यक्ति एवं समाज के जीवन का नियमन निर्वाध चलता रहे। यह मापदण्ड ही 'मूल्य' कहलाता है। संकीर्ण अर्थों में मूल्य का सम्बन्ध व्यक्ति के महत्त्व, उपयोगिता या योग्यता से होता है जबकि व्यापक अर्थ में यह आधार-नियम की वह इकाई है, जिसको आधार बनाकर मनुष्य अपना जीवन सार्थक करता है। इसलिए मूल्य मानव जीवन के विविध पक्षों-नैतिक, धार्मिक, सामाजिक-आर्थिक व बौद्धिक-आध्यात्मिक आदि से संबंधित होता है, फलस्वरूप अत्यन्त व्यापक व बहुआयामी हो जाता है। पाश्चात्य विद्वान जानसन के अनुसार 'मूल्य' की धारणा समष्टिगत हो सकती है और व्यक्तिगत भी और इसके द्वारा उचित-अनुचित अच्छा-बुरा, सही-गलत का निर्णय किया जाता है।[1] भारतीय मनीषियों में प्रख्यात विद्वान गोविन्द चन्द्र पाण्डेय मानते हैं कि जीवन व्यवहार विभिन्न प्रवृत्तियों में बंटा रहता है और विभिन्न व्यावहारिक क्षेत्रों के साधन ही सामान्यतया पुरूषार्थ या 'मूल्य' कहलाते हैं।[2]

भारतीय संस्कृति में मूल्य विषयक अवधारणा आध्यात्मिकता से प्रभावित रही है। यहां मूल्य को जीवनादर्श के रूप में स्थापित कर 'पुरुषार्थ' की संज्ञा दी गयी है जो मानवीय प्रयास के लक्ष्यों का द्योतक है। चार पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को मानव जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक एवं नैतिक दृष्टि से समुन्नत करने के लिए नियोजित किया गया है। वस्तुतः प्राचीन भारतीय मनीषियों ने 'धर्म' को ही मनुष्य जीवन में एक प्रतिमान के रूप में प्रस्थापित किया है, यह मनुष्य के कर्तव्यों एवं दायित्वों को एक आध्यात्मिक आधार देता है, एवं जीवन व्यवस्था को संचालित करने वाले नैतिक-निर्देशन की भूमिका निभाता है।

प्राचीन वाङ्गमय में धर्म की व्यापक धारणा वर्णित है, किन्तु वास्तव में मानवता के शाश्वत चिरन्तन मूल्य रूपी जो धर्म है, वह है- 'नैतिकता', अर्थात् सत्य, अहिंसा, प्रेम, करूणा, परोपकार, दया, दान, क्षमा, धैर्य, अक्रोध, अस्तेय इन्द्रिय निग्रह इत्यादि सदगुण जो मानव के दैनिक जीवन व्यवहार में आचरित होने चाहिए।

पाश्चात्य अवधारणाओं में मूल्य सम्बन्धी तीन उपागम प्रमुख है- *सुखवादी, विकासवादी और आत्मपूर्णतावादी।* **सुखवादी अवधारणा** के अनुसार, *मानवीय इच्छा की संतुष्टि ही मूल्य है, अर्थात् जिस कार्य से हमें सुख मिले वही हमारे लिए मूल्यवान है।* **विकासवादी अवधारणा** में *जीवन का मूल्य जीवन के रक्षण एवं संवर्द्धन में है अर्थात सभी नैतिक मूल्यों का सम्बन्ध जीवन की रक्षा एवं वृद्धि से है, जो इसमें सहायक हो वही मूल्य है।* जबकि **आत्मपूर्णतावादी**

आत्मोपलब्धि अर्थात् *व्यक्तित्व के पूर्ण विकास को ही जीवन मूल्य मानते हैं।* ***व्यापक दृष्टि*** से देखा जाय तो *शरीर का रक्षण-संवर्द्धन, सुख, आत्मलाभ आदि सभी मूल्यवान है।*

समाज में संतुलन व व्यवस्था बनाये रखने हेतु सहयोग, सहिष्णुता, सद्भावना, प्रेम, सम्मान, त्याग आदि नैतिक मूल्य परम आवश्यक होते हैं। एकता और विश्व बन्धुत्व के मूल्य विभिन्न समाज और देश के व्यक्तियों को सूत्रित कर 'विश्वकल्याण' की भावना को प्रोत्साहित करते हैं। यह कहा जा सकता है कि **जीवन का नियमन जीवन से भी मूल्यवान है, क्योंकि नियमन के द्वारा ही उसे मूल्य प्राप्त होता है।** स्पष्ट है कि नैतिक मूल्य व्यक्ति के आचरण और व्यवहार, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य, उचित-अनुचित के निर्देशक हैं, ये मानवता के संरक्षक है। नैतिक शब्द मुख्यतः कर्म और शील का विशेषण है कौन सा कर्म आचरण-व्यवहार किस परिस्थिति में उचित है और किसमें अनुचित है उसका विवेचन करना या ज्ञान कराना नैतिक मूल्यों का मुख्य ध्येय होता है। इसी कर्म और शील के उचितानुचित के द्वन्द्व में फँसे अर्जुन की शंकाओं का समाधान कर उसे कर्त्तव्यपथ पर अग्रसर करने के लिए श्रीकृष्ण ने गीता में नीति और धर्म का अप्रतिम उपदेश दिया।

आर्थिक संदर्भ में नैतिक मूल्यः आर्थिक संदर्भ में नैतिक मूल्यों की वांछनीयता व प्रासंगिकता वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त ही समीचीन है। अर्थशास्त्र, भौतिक विज्ञान जैसे विषय का अध्ययन नहीं है, जो प्राकृतिक नियमों से संचालित होता है अपितु यह मानवीय विचारों व क्रियाओं का एक वृहद समुच्चय है फलस्वरूप इसमें 'मानवीय पक्ष' को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। अब यदि हमें आर्थिक जटिलताओं व उनके निवारक उपायों को समझना है तो सर्वप्रथम यह आत्मसात करना आवश्यक होगा कि एक व्यक्ति इस जगत में 'क्यों' और 'किस प्रकार' का व्यवहार अपनाता है। सामान्यतया अर्थशास्त्र को उस व्यवहार या तरीके से समझा जाता है जिसके द्वारा एक सामान्य व्यक्ति अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं (रोटी, कपड़ा व मकान) की आपूर्ति सुनिश्चित करता है। वर्तमान आर्थिक प्रणाली नगदी अर्थव्यवस्था; के रूप में जानी जाती है जो कई विकल्पों में से अपनायी गयी मात्र एक युक्ति ही है।

प्रत्येक आर्थिक क्रिया का एक परिणाम होता है। वर्तमान प्रणाली में हम इन क्रियाओं को 'मुद्रा' में मापते हैं यद्यपि यह एक काल सापेक्षिक अवधारणा हैं। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है- दैनन्दिन जीवन में हम अपने शुभचिन्तकों, चाहने वालों या प्रेम करने वालों, अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्धों (जिसे हम प्रेम का वरदान मानते हैं) के मध्य को नगद लेन देन में माप नहीं सकते। परन्तु जैसे-जैसे हमारे और सम्बन्धियों में दूरियां बढ़ती जाती है हम बदले में मुद्रा को प्रयुक्त करना प्रारम्भ कर देते हैं। ऐसा क्यों होता है? वास्तविकता यही है कि आधुनिक पाश्चात्य संस्कृति हमें ऐसा कोई संयंत्र नहीं प्रदान करता जिससे हम इनके मध्य कोई तुलना कर सकें।

असीमित निजी स्वामित्व की कानूनी धारणा पर निर्मित पाश्चात्य आर्थिक दर्शन लोगों के मध्य एक अलगाव उत्पन्न करता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वहित को संवर्धन करने वाले क्रियाओं को अपनाता है। समाज में मूल्यहीन अवधारणाओं (यथा कालाधन, भ्रष्टाचार आदि) की इतनी प्रबलता व्याप्त है कि उसी को सफल माना जाता है जो कोई भी

साधन अपनाकर अत्यधिक सम्पत्ति अर्जित कर लेता है, वही सम्मानित भी है। धन और सम्पत्ति इतने महत्वपूर्ण हो गये है कि हमारे सामाजिक सम्बन्ध इसी से निर्धारित होते हैं।

वर्तमान वैश्विक-आर्थिक परिदृश्य में व्याप्त गिद्ध पूँजीवाद (Valture Capitalism), गलाकाट प्रतियोगिता, अति-उपभोगवाद, अन्तहीन शोषण, असमानता व व्यापक पारिस्थितिकीय असन्तुलन की भयावहता हमारे आर्थिक नियमों/संकल्पनाओं पर प्रश्न चिह्न खड़ा करती है। इसका एक प्रमुख कारण है कि हमारे द्वारा अपनायी गयी आर्थिक संकल्पनाओं में 'मानव मात्र' व उसके नैतिक पक्ष की घोर अवहेलना की गयी है। पाश्चात्य धारणा यह मानती है कि मानव के 'अधिकतम संतुष्टि' की प्राप्ति इच्छाओं में वृद्धि करके (भौतिकवादी पक्ष) प्राप्त की जा सकती है जबकि भारतीय धारणा में यह संकल्पना निहित है कि अधिकतम संतुष्टि की प्राप्ति इच्छाओं में कमी करके ही (आध्यात्मिक पक्ष) प्राप्त की जा सकती है। भारतीय मनीषियों द्वारा यह उपदेश दिया गया कि- *शान्त तथा प्रसन्नचित रहना ही जीवन का आदर्श है, बुद्धिमान मनुष्य को अपनी प्रकृति से इच्छाओं व अभिलाषाओं को अधिक से अधिक निकल देना चाहिए, वास्तविक वैभव (Riches) वस्तुओं की प्रचुरता में नहीं अपितु इच्छाओं की अल्पता में निहित है।* भारतीय अर्थशास्त्री **प्रो0 जे0के0 मेहता** का मानना था कि *ईच्छाओं से मुक्ति पाना ही आर्थिक समस्या है। The Problem of getting freedom from Wants is regarded as an economic problem -J.K. Mehta*[3]

इसी संदर्भ में प्रो0 मेहता यह भी स्पष्ट करते हैं कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान है जो मानवीय व्यवहार की इच्छारहित अवस्था या इच्छा विहीनता की स्थिति तक पहुँचने के साधन के रूप में अध्ययन करता है। वास्तविकता यही है कि 'सुख' और 'संतुष्टि' के मध्य पाश्चात्य विचारक अंतर नहीं कर पाते। 'अधिकतम सुख' तथा 'अधिकतम ईच्छाएं' एक साथ परस्पर विरोधी हैं। मानव व्यवहार जो अर्थशास्त्र के अध्ययन का विषय है, वह मस्तिष्क की असंतुलन की अवस्था का परिणाम है। मानवीय मस्तिष्क की यह प्रकृति है कि वह असंतुलन को नापसन्द करता है फलस्वरूप 'संतुलन' की स्थिति को प्राप्त करने हेतु सतत् प्रयत्नशील रहता हैय क्योंकि असंतुलन कष्ट है और इसका निवारण आनन्द है। यह अध्यात्म का भी विषय बन जाता है जिसमें मनोविज्ञान व अर्थशास्त्र को वेदों के आध्यात्मिक विज्ञान से विश्लेषित करने की आवश्यकता है।

सकल घरेलू उत्पाद की जगह 'सकल राष्ट्रीय खुशी (Gross National Happiness) को विकास का पैमाना बनाने वाले भूटान के **दशों कर्मा उरा** के अनुसार *लोग तब खुश होते है जब वे कुछ नैतिक होता देखते है।* सेन्टर फार भूटान स्टडीज एण्ड जी0एन0एच0 रिसर्च के प्रमुख के रूप में उरा कहते हैं कि *जब दुनिया बंदूक, गोली और बम में व्यस्त है, तब यह जरूरी है कि ज्यादा से ज्यादा देश विकास मापने के पैमाने को अर्थशास्त्र से अलग हटकर ढूढें। वह कहते है कि दुनियाँ जिस तेजी से असुरक्षित होती जा रही है, उसमें हमें अपने सोंचने और रहने के वैकल्पिक तरीके के बारे में गंभीरता से सोचना पड़ेगा।*[4]

भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परम्परा में नैतिक आदर्शों एवं मूल्य विषयक विचार-विमर्श की पृष्ठभूमि अत्यन्त ही प्राचीन है। हमारे वेदों में स्पष्ट उल्लेखित है कि मानव की भौतिक-आध्यात्म की द्वैती प्रकृति होती है और दोनों के अध्ययन निष्कर्षों को एक दूसरे पर आधारित करके समझने में सहायता मिलती है।

द्वितीय-भागः- 'भगवदगीता' एक महान ग्रन्थ है जिसमें मानव जीवन की शाश्वत समस्याओं का समीचीन समाधान सुलभ है। लोक कल्याण, निष्काम कर्म व स्वकर्तव्य के पालन आदि आदर्शो से युक्त भगवदगीता 'कर्म' (जनकल्याणार्थ) व यज्ञ (त्यागपूर्वक कर्तव्य कर्म का निर्वहन) हेतु प्रेरित करती है। इस ग्रन्थ में वर्णित है कि क्षमा, सत्य, दम (इन्द्रिय संयम), शम (मन का निग्रह), अहिंसा, समता व तप (स्वधर्म के आचरण से इन्द्रियादि शुद्धि) आदि नैतिक गुण मनुष्य में देवत्व का आधान करते हैं जिनके सम्यक आचरण से व्यक्ति और समाज की 'भौतिक' व 'आध्यात्मिक' उन्नति होती है।

भारतीय संस्कृति में जीवन सुख के दो आधार उल्लेखित है भौतिक तथा आध्यात्मिक। मनुष्य के सम्यक विकास के लिए अर्थ एवं काम को धर्म के अधीन इस प्रकार मर्यादित कर जीवन मूल्य के रूप में नियोजित किया है कि तीनों पुरुषार्थों-धर्म, अर्थ एवं काम के सम्यक परिपालन मनुष्य को अन्ततः मोक्षभिमुख बना दें। श्रीमद्भगवदगीता में मानव जीवन को नैतिकता से परिपूर्ण करते हुए उसे कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर करने के अनेक उपदेश दिये गये हैं जो संक्षेप में यहां उद्धृत हैं।

1. अर्थ- गीताकार द्वारा भौतिक धन सम्पत्ति आदि का संक्षिप्त विवेचन पुरुषार्थ के रूप में स्वीकार्य है क्योंकि गीताकार सांसारिक विषय भोगों में लिप्तता के सहज मानवीय प्रवृत्ति के मनौवैज्ञानिक पहलू से अवगत थे- **इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरिन्त प्रसभं मनः** (गीताः 2/60)
यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिंद ततम्। स्वकर्मणा तमम्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानवः।। (गीताः 18/46)

इसीलिए धन धान्यादि सांसारिक भोग-ऐश्वर्य में आसक्ति की निंदा कर यह संदेश दिया है कि जब धन-सम्पत्ति आदि भौतिक समृद्धि का अर्जन ही मुख्य उद्देश्य बन जाता है, तब पतन अवश्यम्भावी हो जाता है। अर्थात् गीता अर्थ (धन) को उच्चतर सामाजिक हित के संदर्भ में और धर्म के सहगामी के रूप में तो अधिग्रहीत करती है क्योंकि समस्त समाज तथा उसकी कार्य प्रणाली आर्थिक संसाधनों पर आधारित है, परन्तु इनकी पूर्ति हेतु अनैतिक साधनों का प्रयोग पूर्णतया अनुचित मानती है। गीता अपने स्वाभाविक कर्मों को तत्परता (निष्कामभाव से निष्ठापूर्वक) से करने को ईश्वर की अर्भ्यचना मानती है, जो लोकोत्तर सिद्धि की ओर ले जाता है। किन्तु सामान्य व्यवहार में व्यक्ति का कर्म मुख्यतः अर्थोत्पादन की सामाजिक व्यवस्था का अंग बन जाता है।

2. सत्यवादिता- यह नैतिक आचरण का मूल है। भगवदगीता में कहा गया है कि सत का कभी अभाव नहीं रहता अर्थात् उसकी सत्ता सर्वदा बनी रहती है। तात्त्विक अर्थ में 'सत्य' से तात्पर्य परम सत्ता के ज्ञान से है और नैतिक अर्थ में सत्य के आचरण से; अर्थात् यथार्थ और प्रिय भाषण से है। सत्याचरण द्वारा मनुष्य अपने सच्चे स्वरूप को पहचान सकता है, गीता में भी यही महान आदर्श ओत-प्रोत है। **''नेहाभिक्रम नाशोऽस्ति प्रत्यवायो ने विद्यते''** (गीता-2/40)

3. अस्तेय- का अर्थ है चोरी न करना अर्थात् दूसरे की धन सम्पत्ति अनैतिक रूप से हस्तगत न करना। भगवदगीता में वर्णित है कि इस संसार में जो लोग सत्य, अहिंसा, अस्तेय आदि नीति धर्मों का पालन करने वाले होते है वे 'दैवी सम्पद' (प्रकृति या गुण) वाले लोग होते हैं जबकि आसुरी प्रकृति के लोग अपवित्र आचार-विचारों वाले होते है, काम क्रोध के वशीभूत हो विषय भोगों के लिए अन्यायपूर्वक धनसम्पत्ति का संग्रह करते हैं।[5]

गीताकर्त्ता श्रीकृष्ण स्पष्ट करते हैं कि ऐसे लोभी वृत्ति के मनुष्यों का विवेक नष्ट हो जाता है, मानसिक रूप से अशान्त होकर अन्त में नरकगामी होते हैं। अर्थात् ऐसे मनुष्यों का पतन हो जाता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि विषयों का चिन्तन करने वालों की उसमें आसक्ति (कामना) हो जाती है और वही सम्पूर्ण पाप कर्मों का मूल होता है। सांसारिक भोग्य पदार्थों की

प्राप्ति की इच्छा जब संमार्ग पर चलने से नहीं प्राप्त होती है तब व्यक्ति स्तेय आदि अनैतिक मार्ग अपनाता है। 'लोभ' स्तेय का प्रथम सोपान है।[6]

4. अपरिग्रह- अपरिग्रह का सामान्य अर्थ है-संग्रह न करना। अर्थात् जीवनयापन के लिए जितना आवश्यक है, उससे अधिक संचय न करना। श्रीमद्भगवदगीता के आचार दर्शन का मूल 'अनासक्ति' है। इसीलिए गांधी जी ने गीता को 'अनासक्तियोग' कहा है। गीता में यह स्पष्ट उल्लेखित है कि आसक्ति का भाव ही व्यक्ति को संग्रह और भोगवासना के लिए प्रेरित करता है। 'भोग और ऐश्वर्य की आसक्ति ही अन्यायपूर्ण अर्थाजन और अर्थसंग्रह का कारण है।[7]

गीताकार सामाजिक व्यवस्था के इस पहलू से अनभिज्ञ नहीं था कि समाज में शान्ति तभी सम्भव है जब भौतिक सम्पत्ति का उपभोग, संग्रह और वितरण नियंत्रित हो। गीता का कथन है-**"त्यागाच्छान्तिरनन्तरम"** (गीता 12/12), अर्थात् त्याग में परम शान्ति है। स्पष्ट है कि गीता में प्रतिपादित अनासक्ति से प्रतिफलित होने वाला अपरिग्रह का सिद्धान्त सामाजिक आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त प्रासंगिक और प्रशंसनीय है।

5. इन्द्रिय निग्रह का वास्तविक आशय मन सहित इन्द्रियों के संयम से है। गीता में इन्द्रियसंयम के महत्व को बताते हुए कहा गया है कि जो पुरुष मन द्वारा इन्द्रियों को संयमित करके आसक्ति रहित होकर समस्त इन्द्रियों द्वारा कर्तव्यकर्म का आचरण करता है, वही श्रेष्ठ है। चंचल मन को वश में करने का दुष्कर कार्य कठिन अभ्यास है, इस हेतु गीता में शम (मन का विग्रह) व दम (इन्द्रियों को वश में करना) को दैवीय विभूति बताया गया है।

उपर्युक्त वर्णित सत्य, सहिंता, अस्तेय, अपरिग्रह और इन्द्रिय विग्रह आदि नैतिक मूल्यों के अतिरिक्त, दया, दान, तप, त्याग, शान्ति, क्षमा आदि अनेकों जीवनादर्शों का भगवदगीता में विविध संदर्भों में श्रीकृष्ण ने उल्लेख किया है। गीता में विविध स्थलों पर अन्यान्य नैतिक मूल्यों का विवेचन प्राप्त होता है। कहीं पर इन्हें ज्ञानयोगी का लक्षण, कहीं कर्मयोगी का लक्षण और कहीं भक्त का चारित्रिक गुण बताया गया है इन सभी नैतिक सदगुणों का सारभूत तत्त्व यही है कि इनके सम्यक परिपालन, अनुपालन में समस्त चराचर जगत का कल्याण सन्निहित है। यही कारण है कि समय-समय पर अनेक महापुरुषों द्वारा नैतिक आचरणों के प्रचार-प्रसार के लिए दृढ़ प्रयत्न किये जाते रहे हैं।

निष्कर्षः गीता में अर्थशास्त्र या मुद्रा के बारे में विशिष्ट रूप से कुछ नहीं कहा गया है जबकि व्यक्ति के क्रियाओं (Activity) के परिणामों के बारे में अत्याधिक वर्णन है। व्यक्ति अपनी क्रियाओं के परिणामों को कैसे प्राप्त करता है या इन परिणामों पर कैसी प्रतिक्रिया करता है इसका बहुत अधिक प्रभावी संबंध हमारे आध्यात्मिक उन्नति और विकास से जुड़ा होता है।

भौतिकवादी चेतना के अन्तर्गत व्यक्तियों की इच्छाओं व 'कामनाओं' के रूप में श्रीकृष्ण ने गीता में अनेकों बार मांग (Demand) की विषद चर्चा की है, हमारी इच्छाएं या लालसा हमारे आध्यात्मिक विकास से जुड़ी होती है। गीता में गीताकर्ता श्रीकृष्ण द्वारा 'मानव शरीर' को आध्यात्मिक तत्व (जिसमें आत्मा अर्न्तनिहित है) माना गया है जबकि स्वयं मानव इसे केवल भौतिक शरीर मान समझता है। 'स्थितप्रज्ञ' का आदर्श मनुष्य को जीवन में संवेगात्मक परिपक्वता प्राप्त करने हेतु प्रेरित करता है। भावनात्मक परिपक्वता से मानव अपने जीवन को संतुलित एवं आनन्दमय बना सकता है। अतः श्रीमदभगतदगीता आन्तरिक आध्यात्मिक सत्य के आलोक में मानव जीवन व कर्म की वाह्य जगत की यथार्थताओं के साथ सामन्जस्य स्थापित करने की शिक्षा प्रदान करता है। यदि हम विकास

के केन्द्र में 'धन' नहीं अपितु 'मानव' को सम्मिलित करेंगे तो नैतिक मूल्यों व जीवन की प्रासंगिकता और भी समीचीन हो जाती है।

नित नये निर्मित हो रहे आर्थिक माडलों/विनियमों के बावजूद भी हमारा सामाजिक-आर्थिक तानाबाना अत्यन्त दुष्प्रभावित होता जा रहा है। मानव समाज के आदर्शों का लोप होता जा रहा है तो उसका एक प्रमुख कारण मानव के द्वारा अपनाये जा रहे अन्य अनैतिक मूल्य हैं जो उसके मस्तिष्क में पाश्चात्य अति भौतिक मानसिकता के कारण उत्पन्न हो रहे हैं। श्रीमद्भगतदगीता में समाहित आर्थिक चिन्तन व नैतिक मूल्य मानवमात्र के लिए एक आदर्श व उसके संपोषणीयता के लिए अपरिहार्य है क्योंकि आर्थिक चिन्तन में नैतिक मूल्यों का समावेशित होना अति आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची-

1. सिंह, बद्रीनाथ, नीतिशास्त्र, स्टूडेण्टस फ्रेण्डस एण्ड कम्पनी, 1995. पृ0 सं0 256-257.
2. पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र, मूल्य मीमांसा, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005. पृ0 सं0 283.
3. लाल, एस0एन0 व लाल, एस0के0, अर्थशास्त्र के सिद्धान्त, शिव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद, 2012.
4.शुल्ज काई, वकास के पैमाने में खुशी, अमर उजाला में दिनांक 22/02/2017 को प्रकाशित आलेख। पृ0सं08.
5. श्रीमद्भगवदगीता, अध्याय 12 श्लोक-60.
6. श्रीमद्भगवदगीता, अध्याय 16 श्लोक-21.
7.श्रीमद्भगवदगीता, अध्याय 16 श्लोक-12.
8.शर्मा, चन्द्रधर, भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, 1995.
9.रंगानाथानन्द, स्वामी, परिवर्तनशील समाज के लिए शाश्वत मूल्य, भाग-एक, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1997.
10.श्रीवास्तव एवं श्रीवास्तव, समाजशास्त्र, के0के0 पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, 2005.
11.गोयन्दका, हरिकृष्ण, श्रीमदभगवदगीता शांकरभाष्य, गीता प्रेस, गोरखपुर।
12.गोयन्दका जयदयाल, श्रीमद्भगवदगीता, पदच्छेद, अन्वय, साधारण भाषा टीकासहित, गीताप्रेस गोरखपुर,सं0 2071.
13-पोद्दार, हनुमान प्रसाद, गीता चिन्तन, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2003.
14-गाँधी, एम0के0, गीता की महिमा, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, 1999.
15. Das Dhanesvara, Lessons in Spiritual Economics from The Bhagwat Gita, Part-One, Understanding&Solving the Economic Problems. www.spiritualeconomic.com

डॉ0 महेन्द्र त्रिपाठी
असिस्टैण्ट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
काशी नरेश राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
ज्ञानपुर, भदोही, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-58-63
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

सार्क और भारत : सहयोग और चुनौतियाँ

आशीष धर त्रिपाठी

भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी का अपने शपथ ग्रहण समारोह में सार्क देशों के नेताओं को तरजीह देना भारत की नजरों में सार्क की अहमियत दर्शाता है। सार्क देशों के नेताओं को तरजीह देना कहीं न कहीं नई सरकार की विदेश नीति की प्राथमिकता भी तय करता था। हालाँकि किसी भी देश की विदेश नीति पूर्ण नियोजित, उसमें निरन्तरता, पहले से निश्चित और उसके लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिहाज से अति अल्प होती है साथ ही उन्हें हासिल करने के लिए प्राथमिकताओं के साथ ही तरीके भी तय रहते हैं। यह आयोजन सार्क के अलग-अलग देशों के साथ द्विपक्षीय वार्ता के लिए एक शिखर सम्मेलन जैसा था।

दक्षिण एशिया में जबर्दस्त आर्थिक क्षमता विद्यमान है। इस क्षेत्र में विश्व की 23% आबादी निवास करती है, लेकिन वैश्विक सकल घरेलू उत्पादन में इसकी क्रय व्यापार में हिस्सेदारी महज 2% है। साथ ही वैश्विक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में केवल 3% हिस्सेदार सार्क देशों की अकर्मण्यता दर्शाती है। प्रधानमंत्री मोदी को सार्क देशों के मध्य विद्यमान इस विसंगति से भली-भाँति परिचित है। उनका यह भी मानना है कि एक सार्थक सहयोग ही इसको विकसित कर सकता है और यह तभी सम्भव हो जब सार्क देशों के परस्पर विश्वास और इच्छा हो और वे अपने द्विपक्षीय मतभेदों को त्याग कर क्षेत्र के विकास के लिए व्यापक सहयोग को तत्पर हो।

सार्क की विकासः- जैसा कि ज्ञात है कि सार्क लगभग तीन दशक ही प्राचीन हुआ है। इसका गठन बांग्लादेशी राष्ट्रपति जिया उर रहमान की विकासवादी सोच का परिणाम रहा। तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए 1980 के दशक में बांग्लादेशी राष्ट्रपति की अग्रगामी सोच सम्पूर्ण विश्व में दक्षिण एशिया को स्थापित करने की थी। यही कारण था कि उन्होंने लगातार विभिन्न मंचों के माध्यम से दक्षिण एशियाई देशों के प्रमुखों को संबोधित करते है उन्होंने दक्षिण एशियाई में क्षेत्रीय सहयोग की जरूरत पर जोर दिया। राष्ट्रपति जिया उर रहमान के दक्षिण एशियाई देशों के मध्य सहयोग कोई विचार के पीछे यह विचार निहित था कि ये दक्षिण एशियाई देश तमाम समान मूल्य साझा करते हैं, जो कि उनके सामाजिक, सांस्कृतिक जातीय और एतिहासिक परम्पराओं से गहरे तक जुड़ा है।

किसी भी संगठन के निर्माण में तमाम साझा मूल्यों के अलावा भी कई अन्य बातें भी होती हैं जिसको लेकर सदस्यों में मत भिन्नता भी हो सकती है लेकिन क्षेत्रिय सहयोग संगठन इस मतभिन्नता को बातचीत के माध्यम से हल करने का प्रयास करता है, जिससे क्षेत्र के देश अपने साझाा संस्कृति के समान मूल्यों के बारे में बेहतर आधारण बना सकते हैं। सार्क की संरचना में शीर्ष निकाय का प्रावधान था जिसमें सदस्यों देशों के विदेश मंत्रियों की एक परिषद और एक स्थायी सचिवालय का होना आवश्यक था। कुछ विशेष क्षेत्र की पहचान की गई जिसमें सहयोग से दक्षिण एशियाई देश बेहतर ढंग से लाभान्वित हो सकते

है ये क्षेत्र निम्नलिखित थे- दूर संचार, नौ परिवहन, पयर्टन, अंतरिक्ष विज्ञान, कृषि/ग्रामीण क्षेत्र, शिक्षा, विज्ञान और टेक्नालाजी आदि।

बीते वर्षों में सार्क की स्थिति सार्क चार्टर 1985 में इसके उद्देश्यों पर प्रकाश डाला गया है। इसके मुताबिक संगठन का उद्देश्य है- अधिक वृद्धि को बढ़ावा देना, क्षेत्र में सामाजिक प्रगति और सांस्कृतिक विकास को बढ़ावा देना, ताकि सभी को अपनी पूर्ण क्षमताओं और उचित प्रतिष्ठा के साथ जीने का अवसर मिले। सार्क ने सहयोग के लिए व्यावहारिक नजरिया अपनाया। इसमें सहयोग के उन क्षेत्रों को चुना गया, जिसमें राजनीतिक हस्तक्षेप कम से कम हो। हालांकि आर्थिक विकास और सामूहिक आत्मनिर्भरता का उल्लेख चार्टर के लक्ष्य और उद्देश्य में ही किया गया है, लेकिन व्यवहार में आर्थिक क्षेत्र में सहयोग को सबसे बाद में अमल में लाया गया।

सार्क प्रिफेंशियल ट्रेडिंग एग्रीमेंट (SAPTA) के ढांचागत समझौते पर ढाका में 1993 में सातवां सार्क शिखर सम्मेलन हुआ था। सदस्य देशों में व्यापार को विस्तार देने में यह पहला बड़ा कदम था। समझौते पर सभी देशों की सहमति और मंजूरी के बाद 1995 में यह समझौता अमल में लाया गया। इसके बाद सार्क सहयोग की शुरुआत कोर क्षेत्र में भी हुई। साप्टा (एसएपीटीए) के गठन में कई तथ्यों का अहम योगदान रहा। शीत युद्ध की समाप्ति और नेपाल, बांग्लादेश और पाकिस्तान में लोकतंत्र के आगमन के साथ ही सहयोग में ज्यादा खुलेपन का एक नया राजनीतिक दौर शुरू हुआ। साप्टा समझौते के प्रस्तावना में कहा गया कि सदस्य देश व्यापार के विस्तार का मतलब समझें, क्योंकि यह उनकी अर्थव्यवस्था के विस्तार का सशक्त माध्यम है। निवेश, उत्पादन को बढ़ावा देकर न केवल रोजगार के अवसर को बढ़ाएंगे, बल्कि इससे उनकी आबादी के जीवन स्तर में भी सुधार आएगा। इसमें अंतर-क्षेत्रीय आर्थिक, सहयोग को मजबूत करने और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए क्षेत्रीय तरजीही व्यापार व्यवस्था को भी स्थापित करने और उसे बढ़ावा देने की जरूरत पर बल दिया गया। अंतरक्षेत्रिय व्यापार को प्राथमिकता देने का कारण यह था कि सकल दक्षिण एशिया के कुल व्यापार में इसकी हिस्सेदारी अत्यधिक कम थी।

सार्क क्षेत्र में ऊँचे शुल्क के कारण सीमा के आरपार अनौपचारिक व्यापार में बढ़ोत्तरी हुई। हालांकि अंतर-सार्क में व्यापार की दर नीची रहने का कारण केवल उच्च शुल्क दर ही नहीं था, बल्कि एनबीटी के कारण भी एक तरह से मात्रात्मक प्रतिबंध था। एक अगस्त 1998 को भारत ने मात्रात्मक प्रतिबंध (2000 वस्तुओं पर) को सार्क देशों से आयात पर एक तरफा ढंग से हटा दिया। आर्थिक सहयोग पर सार्क समिति में सार्क देशों के वाणिज्य सचिव को शामिल किया गया था। समिति ने व्यापार को बढ़ावा देने के लिए परिवहन और दूरसंचार के क्षेत्र में पर्याप्त आधारभूत ढांचे की जरूरत पर बल दिया। परिवहन पर सार्क की तकनीकी समिति ने सूचना, स्थिति का अध्ययन, सार्क हाईवे की स्थापना, रेल परिवहन पर अपडेट डाटा, रेलवे प्रणाली की संचालन सक्षमता बढ़ाने, परिवहन के क्षेत्र में सलाहकारों और विशेषज्ञों की डायरेक्टरी तैयार करने, हाईवे सुरक्षा पर सूचनाओं का आदान-प्रदान आदि की दिशा में काम किया। सार्क तकनीकी समिति ने सीमाओं के आरपार हाई स्पीड ट्रेन संचालन, सुरक्षा और ऊर्जा संरक्षण में सुधार, सार्क के

अन्य संबंधित तकनीकी समितियों में इंटर सेक्टोरल सहयोग, संबंधित अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में सहयोग और परिवहन तकनीकी के लिए सिफारिश की।

आज परमाणु हथियार जैसे मुद्दे ने दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सुरक्षा को एक नया आयाम देना शुरू कर दिया है। सार्क ने सहयोग के प्रति विकासवादी रुख अपनाया और जानबूझ कर द्विपक्षीय और विवादास्पद मुद्दों को संगठन के दायरे से बाहर रखा, ताकि प्रगति की राह में कोई बाधा नहीं आए। हालांकि इन बैठकों के साथ ही क्षेत्रीय नेताओं ने हमेशा द्विपक्षीय वार्ताओं के लिए समय निकाल लिया और उसका सकारात्मक परिणाम भी उन्हें मिला। लेकिन इन द्विपक्षीय वार्ताओं का जहाँ कुछ देशों ने सकरात्मक लाभ उठाया वहीं पाकिस्तान जैसे देश ने उसे हमेशा अपने राजनीतिक महत्वाकांक्षा को पूर्ण करने का जरिया बनाए रखा। हालांकि सार्क अपने औपचारिक एजेंडे से इतर राजनीतिक प्रकृति को कभी नहीं छोड़ पाया है। सभी सार्क शिखर सम्मेलन में ऐसे मौके पर देशों के नेताओं के बीच द्विपक्षीय बैठकें होती रही हैं। मंत्रियों, विदेश सचिवों की भी बैठक राजनीतिक स्पर पर द्विपक्षीय राजनीतिक मुद्दों को लेकर होती रही है। इन बैठकों में तमाम महत्वपूर्ण फैसले भी लिए जा चुके हैं। आज सुरक्षा का मामला सर्वोपरि है। इससे निपटना किसी एक देश के अकेले के बस का नहीं है। चाहे वह मादक पदार्थों की तस्करी का मामला हो या फिर आतंकवाद, सभी में क्षेत्रीय सहयोग की जरूरत होती है। दक्षिण एशिया में सदस्य देशों में समझौतों के सही ढंग से लागू न हो पाने के कारण स्थिति गंभीर होती जा रही है।

सार्क और भारतः- किसी क्षेत्रीय संगठन का हिस्सा बनने के बाद हर देश के लिए 'क्षेत्रीयता' का अर्थ और उद्देश्य बदल जाता है। भौगोलिक सामीप्य किसी भी क्षेत्रीय ब्लाक के गठन की आधारशिला होती है। क्षेत्रीय एकजुटता और सहयोग के लिए एक-दूसरे का हाथ थामने वाले देशों के लिए यही भौगोलिक सामीप्य प्राकृतिक उत्प्रेरक का काम करता है। तार्किक उपसिद्धांत के मुताबिक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक गठबंधन देशों की सीमा के पार लोगों को करीब लाता है। जिससे आर्थिक-सामाजिक मुद्दों में सहयोग को प्रोत्साहन और देशों के बीच आपसी विश्वास पैदा होने की उम्मीद की जाती है। देश गहरे आर्थिक एकीकरण की दिशा में आगे बढ़ते हैं और तब उनके बीच अपनी एकीकरण की दिशा में आगे बढ़ते हैं और तब उनके बीच अपनी क्षेत्रीय संरचना के लिए चिंता का बोध विकसित होने में मदद मिलती है। जाहिर तौर पर भारत क्षेत्र में अन्य देशों से बहुत आगे है। विशिष्ट और विशाल भौगोलिक आकार, परंपरागत और सांस्कृतिक संपर्क, जनसंख्या और आर्थिक क्षमता, राजनीतिक रसूख और रणनीतिक क्षमता में यह अपने क्षेत्र के बाकी देशों से कहीं आगे हैं। अपने तीव्र आर्थिक विकास में भारत की मदद की दरकार और क्षेत्रीय संगठन में उसकी बड़ी भूमिका से पूर्णतः वाकिफ होने के बावजूद दक्षिण एशिया के छोटे देश भारत के साथ काम करने में कतराते हैं। उन्हें इस बात का डर है कि भारत पर किसी रूप में निर्भरता का अर्थ सार्क में भारत के दबदबे को स्वीकार होगा या सहयोगी नीति के जरिये अन्तर्निर्भरता भारत के साथ विपक्षी विवादों का सम्मानजनक हल निकालने में उनकी सुविधाजनक स्थिति को चोट पहुँचाएगा।

भारत ने शुरुआती समय में गठजोड़ में सीमित भूमिका ही निभाई थी। उसने पड़ोसियों के साथ द्विपक्षीय आदान प्रदान पर ज्यादा जोर दिया था। हालांकि 1990 के

दशक के मध्य में इसकी आर्थिक ताकत बढ़ने के साथ ही भारत ने क्षेत्रीय नेता के रूप में बड़ी भूमिका निभाने पर जोर देना शुरू किया। तत्कालीन प्रधानमंत्री आई0के0 गुजराल ने अपने निकट के पड़ोसियों से संबंध मजबूत करने के लिए पांच सिद्धांत अपनाए। यह सिद्धांत उस मान्यता से उपजा है कि दुनियाँ के मंच पर भारत का कद इसके अपने पड़ोसियों से संबंध पर निर्भर करते हैं। रणनीतिक रूप से भारत का अग्रणी होना और इसकी भौगोलिक स्थिति दक्षिण एशिया में उसके पड़ोसी मुल्कों के लिए लगातार चिंता मुख्य कारण है। सार्क के हर देश के साथ भारत की सीमा या तो समुद्र से या फिर जमीन से लगती हैं, जबकि अन्य किसी भी देश की सीमाएं इस तरह से एक दूसरे से नहीं लगती। हालांकि पाकिस्तान और अफगानिस्तान की सीमा साझी है, लेकिन ये दोनों देश भी सार्क के अन्य देशों के साथ भारतीय क्षेत्र के माध्यम से ही संपर्क साध सकते है। भूटान और बांग्लादेश की सीमाएं एक दूसरे से महज कुछ ही किलोमीटर पर स्थित है, फिर भी वे भौगोलिक रूप से एक दूसरे से जुदा है। इसी तरह नेपाल और भूटान की भौगोलिक स्थिति भी ऐसी है कि दोनों देश भारत पर निर्भर है और दोनों के विदेश व्यापार और पारगमन के लिहाज से भारत का नियंत्रण है। भारत की उल्लेखनीय वृद्धि पूरे क्षेत्र पर प्रभाव डालेगी और इसके विकास में सकारात्मक भूमिका भी निभाएगी। इसकी बहुत जरूरत भी है, क्योंकि भले ही भारत आशातीत सफलता प्राप्त कर रहा हो, पर पूरा दक्षिण एशिया घोर गरीबी, वृहद शहरीकरण के दलदल, अमीर गरीब के बीच गहरी खाई और आधारभूत ढांचे, ऊर्जा, पर्यावरण के बुनियादी समस्याओं में फंसा हुआ है।

भारत का मानना है कि दक्षिण एशिया के अन्य कमजोर देशों के साथ व्यापार को बढ़ावा देने के लिए सार्क अवसर उपलब्ध कराता है। मजबूत उपभोक्ता बाजार विकसित करने के लिए पड़ोसी देशों में यदि भारत भारी निवेश करे तो इस बात में हैरानी नहीं होनी चाहिए। जैसा कि यूरोपीय संघ ने यह साबित किया है कि इस कार्य में सफलता प्राप्त की जा सकती है। हालांकि यदि इसके साझेदारों में आपसी विश्वास और आदर न होता तो यूरोपीय परियोजनाएं कभी भी सफल नहीं हो पातीं। खासतौर से छोटे देशों में यह संभव नहीं हो पाता। सार्क की कई सकारात्मक उपलब्धियाँ भी रही हैं, उदाहरण स्वरूप मादक पदार्थों की तस्करी और आतंकवाद को रोकने के लिए सोशल चार्टर और समझौते, लेकिन इन्हें सही ढंग से लागू करने की भी जरूरत है। क्षेत्रीय सहयोग के लिए खाद्य और विकास बैंक को भी अति आवश्यकता है। सार्क चार्टर में सार्क के बुनियादी उद्देश्यों का जिक्र है। मसलन दक्षिण एशिया के लोगों के कल्याण और उनके जीवन स्तर को सुधारता। बाद में सार्क के तहत तमाम नए क्षेत्रीय स्थापनाएं हुईं, जैसे- थिंपू में सार्क डेवलपमेंट फंड, नई दिल्ली में साउथ एशियन यूनिवर्सिटी, इस्लामाबाद में सार्क मध्यस्थता परिषद और ढाका में सार्क स्टैंडर्ड्स आर्गनाइजेशन। आर्थिक क्षेत्र में साप्टा से ओग बढ़ते हुए 2004 में साउथ एशियन फ्री ट्रेड एरिया (साफ्टा) समझौते पर हस्ताक्षर हुए। चरणबद्ध रूप से वस्तुओं पर सीमा शुल्क में कई पर सहमति बनी। पहले चरण में सदस्य देशों में संवेदनशील सूची पर 20 फीसद की कटौती अनिवार्य की कई। इसके कारण 2013-14 में सार्क के भीतर व्यापार की मात्रा बढ़कर 2.9 बिलियन डालर हो गई। हालांकि मौजूदा समय में कुल

वैश्विक व्यापार में साफ्टा के भीतर 10 फीसदी ही व्यापार होता है। इसमें भी भारत की हिस्सेदारी इसके वैश्विक व्यापार का कुल पांच फीसदी है।

सार्क डेवलपमेंट फंड के लिए भारत ने अपने वार्षिक योगदान के अलावा स्वैच्छिक रूप से 100 मिलियन डालर का अतिरिक्त योगदान दिया है। ये योगदान सामाजिक विकास के क्षेत्र की परियोजनाओं के लिए दिया गया है। सार्क मोटर व्हीकल समझौते और सार्क रेलवे समझौते को परिवहन पर अंतर सरकारी समूह द्वारा नई दिल्ली में 30 सितंबर 2014 को हुई बैठक में मंजूरी दी गई थी। भारत ने क्षेत्रीय हवाई सेवा समझौते का भी प्रस्ताव रखा था। भूटान के साथ पनबिजली परियोजनाओं में सहयोग भी बढ़ रहा है। श्रीलंका के साथ मुक्त व्यापार समझौता पहले से ली लागू है। सार्क का 18वां शिखर सम्मेलन काठमाण्डू में *शांति और समृद्धि के लिए बेहतर क्षेत्रीय एकता* विषय पर आधारित था। जिसमें प्रधानमंत्री नरेंन्द्र मोदी ने कहा था कि क्षेत्र के प्रति हमारा नजरिया पांच स्तंभों पर टिका हुआ है, जो व्यापार, निवेश, सहायता, हर क्षेत्र में सहयोग और व्यक्ति से व्यक्ति के बीच संबंध हैं। इनका मानना है कि इन लक्ष्यों के प्राप्ति आपसी सहयोग से ही संभव है और इसके लिए भारत ने कई प्रस्ताव समय-समय पर प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने क्षेत्र में बुनियाद ढांचे के परियोजनाओं के वित्तीयन के लिए भारत में विशिष्ट प्रयोजन सुविधा स्थापित करने की बात कही, जिससे व्यापार और क्षेत्रीय कनेक्टिविटी मजबूत होगी। सार्क देशों के नागरिकों को भारत 3-5 वर्ष के लिए व्यापार वीजा देगा। उसने व्यापार संचालन की सहूलियत के लिए सार्क बिजनेस ट्रैवलर कार्ड प्रदान किए जाने का भी प्रस्ताव रखा। जो लोग भारत में उपचार के लिए आना चाहते हैं उन्हें और एक सहायक को तत्काल मेडिकल वीजा देने की बात उन्होंने की। इंडियन स्पेस रिसर्च आर्गनाइजेशन भारतीय वैज्ञानिकों को सार्क सैटेलाइट विकसित करने के लिए कहा गया। ताकि इसका लाभ मेडिसिन, ई-लर्निंग के रूप में पूरे दक्षिण एशिया के लोगों को मिल सके। यह सार्क को भारत की ओर से एक उपहार होगा। भारत इस सैटेलाइट पर 235 करोड़ रुपया खर्च करेगा, जिसमें 12 ट्रांसपोंडर होंगे। पाकिस्ताव ने इस सार्क सैटेलाइट से बाहर रहने का रास्ता चुना। इसी तरह सार्क मोटर व्हीकल समझौता क्षेत्र में कनेक्टिविटी की सुविधा प्रदान करता है, पाकिस्तान के आपत्ति जताते हुए इस पर हस्ताक्षर से मना कर दिया। बांग्लादेश, भूटान, भारत और नेपाल ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किया। इसके माध्यम से सार्क के चार देशों के बीच वस्तुओं और व्यक्तियों की आवाजाही में आसानी होगी।

निष्कर्षः- सार्क के अस्तित्व में आये हुए लगभग 32 वर्ष बीत चुके हैं और क्षेत्रीय सहयोग के नाम पर 32 वर्षों में कुल 18 शिखर सम्मेलन अभी तक हो सके हैं। सार्क की स्थापना के तीन दशक बाद भी इसक सदस्य आपस में पूरी तरह सहयोग करने और क्षेत्रीय अवसरों का लाभ उठाने में विफल रहे हैं। परिवहन के क्षेत्र में विकास जैसी बेहतर आधारभूत ढांचे की सुविधाएं निश्चित रूप से सार्क देशों को आगे बढ़ने में मदद करेंगी। दक्षिण एशियाई देशों को नान टैरिफ बैरियर को समाप्त करना चाहिए, ताकि मुक्त व्यापार को तो बढ़ावा मिले ही, सीमा शुल्क प्रक्रिया में भी सहयोग बढ़े।

यह नहीं कहा जा सकते हैं कि सार्क अभी जिस रूप में हमारे सामने है उसका कोई उपयोग ही नहीं है। सार्क ने एक क्षेत्रीय संगठन के रूप में अपनी उपयोगिता साबित

की है। इसने विभिन्न नजरिये के देशों को एक साथ खड़ा किया है। सार्क को केवल विवाद निपटारे के तंत्र के रूप में ही विकसित नहीं किया गया था, बल्कि चार्टर के रूप में द्विक्षीय और विवादास्पद मुद्दों को चर्चा के लिए इसका उपयोग होना था। अब जबकि भारत को सार्क को पुनः सक्रिय करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए, इसी तरह की प्रतिबद्धता सहयोग क्षेत्र की एकता का एक माध्यम हो सकता है, लेकिन देश इसके लिए सहयोग नहीं कर रहे हैं। प्रधानमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी ने काठमांडू में सार्क के 18वें शिखर सम्मेलन में नेताओं से कहा भी था कि संबंध तो विकसित होगा, चाहे व सार्क के भीतर हो या बाहर या फिर सार्क के सारे देश साथ हों अथवा इसके कुछ सदस्य। अतः चुनौतियों के बावजूद सार्क के सहयोग के माध्यम से क्षेत्रीय व्यापार, बुनियादी ढांचा, ऊर्जा, शिक्षा, हेल्थकेयर और आतंकावाद भारत की दो मुख्य उद्देश्यों विकास और पड़ोस में स्थिरता के केंन्द्र बिंदु है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. अरोरा वी0 के0, सार्कः प्रास्पेक्टस ऑफ को-ऑपरेशन, इण्डिया क्वार्टली, न्यू देहली, वाल्यू-42, नं-1, जनवरी-मार्च 1986.
2. पाण्डेय जे0, सार्कः अतीत और संभावनाएं, वर्ल्ड फोकस, वाल्यू-48, अप्रैल 2016.
3. मुनी एस0 डी0, साउथ एशियन रीजिनल को-ऑपरेशनः इवैलुएशन एण्ड प्रास्पेक्टस, ग्लोबल सिक्योरिटी, सं0 के0 सुब्रमण्यम एण्ड सिंह जसजीत, न्यू देहली, 1987, पृ0 111.
4. सुधाकर ई, सार्कः ओरिजिन- ग्रोथ एण्ड फ्यूचर, ज्ञान पब्लिकेशन हाउस, न्यू देहली, 1994.
5. U.R. Ghai, International Politics, New Academic Publishing House, Jhalandher, 2004.
6. The Times of India, New Delhi, 9 Dec. 1985.
7. Roopali Sharma, "India and SAARC: New Vistas in regiional trade". Sumit Enterpries, New Delhi, 2008, P. 154.
8. Bharti Chhibber (2004) Regional Security and REgional Cooperation: A Comparative Study of ASEAN and SAARC, New Delhi: New Century.
9. India's satellite 'gift' for SAARC to be up in Dec. 2016, 2015 Business Standard, March 13
10. Pakistan Opts out of SAARC satellite Project' India Express, 22nd March.

डॉ0 आशीष धर त्रिपाठी
सहायक आचार्य, राजनीति विभाग
ओम महाविद्यालय, इलाहाबाद
सम्बद्ध- इलाहाबाद राज्य विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-64-68
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

भारतीय संस्कृति में परिवर्द्धित होते जीवन मूल्य : एक समीक्षा

ज्योत्स्ना पाण्डेय

बदलते जीवन मूल्यों का सबसे भयावह पहलू है- सामाजिक जीवन में विखराव पैदा करने वाली अपसंस्कृतियों का तेजी से उदय। इनके प्रभावों से सामाजिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग सामाजिक सरोकारों से न केवल दूर होते हैं, बल्कि कट जाते हैं। व्यक्ति केन्द्रित भोगवादी जीवन-दृष्टि क्रमशः पाँव पसारने लगती है। यह तथाकथित व्यक्ति केन्द्रित भोगवादी सुख की व्याख्या करने लगता है। आज हमारा भारतीय समाज ऐसे ही नवसुखवादी जीवन मूल्यों से धीरे-धीरे ग्रसित हो चला है। उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के चलते अनेक देशों के जीवन मूल्य परस्पर घुलमिल से गये हैं, जो एक सहज प्रक्रिया की देन है। इस पारस्परिक मेलजोल या संगम में किसी एक की प्रधानता तथा दूसरे का समावेश होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

भारत की अपनी सहस्राब्दियों से प्रवाहमान एक सांस्कृतिक अस्मिता जीवन पद्धति रही है। उसमें अपना जीवन मूल्य, दर्शन तथा प्रबल आध्यात्मिक प्रवाह रहता है। कितनी सांस्कृतियाँ इसके प्रवाह में आकर मिलीं और भारतीयता का स्वरूप ग्रहण कर उपर्युक्त शक्तिशाली परम्परा की अभिन्न अंग बन गईं। जो भाग अपनी या अन्य परम्पराओं का अस्वस्थ अथवा अग्राह्य था वह हमारी स्वस्थ परम्परा के साथ प्रवाह में आकर स्वयं विघटित और नष्ट हो गया। भारतीय परम्परा की अन्य संस्कृतियों के साथ मिलजुलकर आगे बढ़ते रहने की यह प्रवृत्ति एक ओर जहाँ इसकी विशेषता एवं जीवन्तता मानी जा सकती है, वहीं कभी-कभी यही प्रवृत्ति इसकी कमजोरी भी बनती गई। विदेशी आक्रमणों एवं आक्रान्ता संस्कृतियों से ग्रसित होने पर भी हमारी सांस्कृतिक अस्मिता कभी भी कमजोर नहीं हुई। भले ही कुछ दिन के लिए इसकी गति में शिथिलता आई।

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के काल तक जीवन मूल्य पर आने वाले बाहरी प्रभावों के खतरों को टालने तथा अपनी पूर्ण पहचान को संजोने एवं सुरक्षित रखने में हम लगभग सफल रहे। लेकिन वर्तमान समय में हमारे जीवन मूल्यों में गम्भीर बदलाव आया है। विकास एवं आधुनिकीकरण की नवोदित प्रक्रियायें हमारी परम्परा को केन्द्र से हटाकर इस बीच हाशिये की ओर धकेलने लगी है। विकासवादियों के अनुसार विकास एवं आधुनिकीकरण हमें परम्परागत मूल्यों में हटाकर अथवा उनकी मान्यताओं में न्यूनता लाकर नवोदित समाज को एक नयी दिशा एवं जीवन मूल्य दिया करता है। परन्तु हमारे समाज में ऐसा होता हुआ दिखायी नहीं दे रहा है। उल्टे अस्मिता और पहचान के संकट को लेकर समाज में एक नया प्रतिरोध जागृत होता हुआ दिखायी देने लगा है। इतना ही नहीं, इस प्रतिरोध ने आक्रामक ढंग से विकास की आधारगत अवधारणाओं को गम्भीर चुनौती देना शुरू कर दिया है। धर्म के प्रति आग्रह अब पुनः सशक्त होते जा रहे हैं तथा समाज के कतिपय समूहों ने साम्प्रदायिक भावना के प्रति उग्र एवं कट्टरवादी दृष्टिकोण अपनाने लगे हैं। इसके साथ ही कुछ समूहों के लोग प्रजाति, भाषा, धर्म क्षेत्रीयता और सांस्कृतिक प्रतिष्ठा को लेकर नयी जातीय भावनाओं को उभारना भी शुरू कर दिया है। इस बीच

सांस्कृतिक स्वायत्तता की नवीन माँगों ने अलगाववाद जैसे दुःखद मार्ग को अपनाने तक को तैयार होने लगे हैं। संवैधानिक स्वायत्तता की नई-नई माँगों ने हिंसात्मक मोड़ लेना शुरू कर दिया है। इन सारी बदलाव जन्य परिस्थितियों के चलते विश्व व्यवस्था में आज अस्थिरता आने लगी है तथा विकास पथ संकटग्रस्त हो चला है।

वस्तुतः विकास-तंत्र अपने साथ अनुकूल एक नया आचार-विधान भी रचता और विकसित करता चलता है। इस प्रक्रिया में नवोदित मूल्य-विधान अथवा ढंग से सृजित मूल्य विधान पारम्परिक एवं स्थापित मूल्य विधान में विशृंखलन पैदा करने लगते हैं। सामाजिक परिवर्तन तथा नवोदित मूल्य विधान तकनीकी विकास एवं आर्थिक-सामाजिक सन्दर्भों में समय-सापेक्ष एक सहज प्रक्रिया है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के द्रुतगामी विकास के फलस्वरूप बीसवीं सदी में एक जटिल प्रश्न सांस्कृतिक अस्तित्व और अस्मिता का खड़ा हो गया है। आज एक तरफ विश्वग्राम की परिकल्पना दिखायी देने लगी है तो दूसरी ओर व्यक्तिवाद, प्रजातिवाद, भाषावाद एवं क्षेत्रीयतावाद के आग्रह एवं दुराग्रह भी तेजी से उभरने लगे हैं। जातीय भावना का तीव्रोत्कर्ष राष्ट्रों और राज्यों को अब विखण्डन की ओर ढकेलता जा रहा है। आज के बौद्धिक जगत् में एक तरफ तो यह नारा सुनायी पड़ता है कि **ईश्वर मर गया** तो दूसरी तरफ ठीक इसके विपरीत लोगों की धार्मिक भावनाएँ निरन्तर बलवती होती जा रही है। इतना ही नहीं उसकी एक धारा कट्टरवाद की ओर मुड़ती जा रही है। इस धारा की अभिव्यक्ति क्रमशः तीव्रतर होती हुई अब आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को चुनौती देती दिखायी पड़ रही है। आज जिस गति से प्रौद्योगिकी एवं उद्योग जगत् में परिवर्तन हो रहा है, उस गति से सामाजिक ढाँचे और मूल्यात्मक आधारों में नहीं। इन सबके फलस्वरूप हमारा सांस्थानिक ढाँचा चरमराने लगा है। इससे अनेक विसंगतियाँ उत्पन्न होने लगी है। सामाजिक नैतिकता एवं बहुशः मान्य के ह्रास से मूल्यहीन और भोगवादी दृष्टिकोण पुष्ट होता जा रही है। सामाजिक सारोकारों में न्यूनता आने लगी है। आज हमारा समाज क्रमशः लक्ष्यहीन होता जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप एक विघटनात्मक अराजकता फैलती जा रही है। बीसवीं एव इक्कीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में उपजी इस प्रकार की विडम्बनाएँ इक्कीसवीं सदी ही नहीं आ गयी सदियों में विरासत के रूप में मिलने जा रही है।

इक्कीसवीं सदी में सम्पूर्ण विश्व में एक नई जीवन शैली नवोदित मूल्यगत ढाँचा तथा उसके साथ बाजार से उपजी उपभोक्तावाद का दर्शन क्रमशः अपना वर्चस्व स्थापित करता जा रहा है। आज उत्पादन तथा भोग पर जोर है, यह व्यक्ति के भौतिक सुख एवं भोग-वृत्ति की संतुष्टि के लिए हो रहा है। 'सुख' की पारम्परिक परिभाषा अब बदल चुकी है। आज अधिक उत्पादन तथा अधिकतम 'उपभोग भोग' ही वास्तविक सुख माना जा रहा है। आज उत्पादजन्य संस्कृति एक ओर तो लोगों को भोगवादी सुख के मायाजाल में फँसाता जा रहा है, तो दूसरी तरफ व्यक्ति के चरित्र और परम्परा स्थापित मूल्यों की जड़ों को भी धीरे-धीरे कमजोर करती जा रही है। हम सब जाने-अनजाने उत्पाद को समर्पित होते जा रहे हैं। मानव आज मानव न रहकर एक कमोडिटी बनता जा रहा है।

समाज वैज्ञानिकों के सामने एक बड़ा प्रश्न खड़ा हो गया है। कि भारत जैसे परम्परा एवं मूल्यवादी देश में वर्तमान उपभोक्तावादी संस्कृति का विकास किन कारणों से हो रहा है? इस प्रकार का उत्तर भारतीय संस्कृति की मूल प्रकृति की ऐतिहासिक समीक्षा से

पाया जा सकता है। सामन्ती संस्कृति के तत्व भारतीय जीवन में बहुत पहले से ही न्यूनाधिक विद्यमान रहे हैं। उपभोक्तावाद किसी न किसी रूप में इस संस्कृति से जुड़ा माना जा सकता है। आज पूर्व सामन्तों का रूप बदल गया है और नवसृजित सामन्ती प्रवृत्ति नवभोगवाद का रूप ले चुकी है। हम सांस्कृतिक अस्मिता की बात चाहे जितनी करें, परन्तु इस सच को झुठलाया नहीं जा सकता है कि हमारी परम्पराओं का तथा स्थापित मूल्यों का ह्रास अवश्य हुआ है। हमारी आस्थाओं में क्रमशः कमी आयी है। क्या ऐसा नहीं लगता है कि पश्चिम देशों के सांस्कृतिक उपनिवेश से बन गये हैं? हमारी आज की संस्कृति क्या पश्चिम की अन्धानुकरण की संस्कृति नहीं लगती? हम अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं एवं मूल्यों को छोड़कर आधुनिकता के दिखावे भरे छद्म प्रतिमान अपनाते जा रहे हैं। अब हमारे स्थापित सांस्कृतिक मूल्य हमें वर्तमान जीवन मूल्यों के चलते दिग्भ्रमित होने से रोक नहीं पा रहे हैं। विज्ञापन और प्रचार-प्रसार के तंत्र धीरे-धीरे हमारे घरों में घुसकर हमारी मानसिकता बदलते जा रहे हैं। हम झूठी तुष्टि, जिसे बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अनेक माध्यमों से परोस रही हैं, की चकाचौंध में भ्रमित हो गये हैं तथा विकास के बड़े-बड़े लक्ष्यों से क्रमशः पीछे हट रहे हैं। पारिवारिक मर्यादाएँ टूट रही है। नैतिक मूल्य एवं मानदण्ड शिथिल हो रहे हैं। व्यक्ति केन्द्रिकता बढ़ रही है। तथा हमारे छुद्र स्वार्थ परमार्थ को नकार रहे हैं। उपभोक्तावाद भारतीय संस्कृति की सामाजिक नींव को ही हिलाने लगी है।

गाँधी जी ने कहा था *भारत को अपने मूलभूत सांस्कृतिक बुनियादों तथा मूल्यों पर कायम रहकर ही बाहरी दुनियाँ के स्वस्थ सांस्कृतिक प्रभावों से अपने को मजबूत बनाना ही श्रेयस्कर होगा।* **महाकवि कालिदास** ने कहा था कि *पुराना सब कुछ अच्छा ही नहीं होता है और न ही नया सब कुछ त्याज्य ही (पुराणमित्येव न साधु सर्वं)।* श्री **गिरिजाकुमार माथुर** जी भी कुछ ऐसा ही भाव व्यक्त करते हैं- *जो कुछ पुराना है, मोहक तो लगता है। टूटन का दर्द मगर सहना ही पड़ता है।।* समाज प्रकृति की तरह जड़वत न होकर गत्यात्मक रहता है। पर्यावरण में परिवर्तन जनसंख्या का घनत्व, नई-नई प्राविधिक सम्भावनाएँ और आकांक्षाएँ नये क्षितिज तैयार करते रहते हैं और इनसे जो सामाजिक संरचना बनती है वह हमारे मूल्यात्मक आधार को नयी दिशा और गति प्रदान करती है। ऐसे में परिवर्तन की चुनौतियों का सामना कर सकने में असमर्थन सामाजिक व्याधि बन जाती है। अवरोध की स्थिति उत्पन्न होने पर ऐसे समाजों और संस्कृतियों के अस्तित्व और अस्मिता को गम्भीर ठेस पहुँचा है। इतिहास साक्षी है कि जो समाज और संस्कृति, पर्यावरण, जनसंख्या के घनत्व तथा नई प्रौद्योगिक के साथ कदम से कदम मिलाकर नहीं चल सका, वह या तो मिट गया या विकास की दौड़ में बहुत पीछे छूट गया। समाज वैज्ञानिक प्रायः यह बात कहा करते हैं कि सामाजिक और सांस्कृतिक कारक नियोजित परिवर्तन की प्रक्रिया में अवरोध सिद्ध होते हैं और सामाजिक-सांस्कृतिक संवेदनहीन आर्थिक और प्रौद्योगिक विकास सामाजिक विघटन उत्पन्न कर सांस्कृतिक मूल्यों को अस्त-व्यस्त कर देते हैं। यह स्थिति अत्यन्त पीड़ादायक होती है क्योंकि एक ओर परम्परा का मोह तो दूसरी ओर नवाचारों का आकर्षण मानव समुदायों को दो विपरीत दिशाओं की ओर खींचने लगता है।

भारत सदियों से गाँव प्रधान देश रहा है। इस देश का समाज एक स्वस्थ परम्परा पोषित मूल्याधारित समाज रहा है। इस देश के लोगों ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की विकासशील प्रवृत्ति को सदैव आदर के साथ जानने, समझने तथा अपनाने का प्रयास किया

है लेकिन इसके साथ ही सांस्कृतिक स्तर पर अपने परम्परागत मूल्यों को भी सुरक्षित तथा पोषित रखने का प्रयास किया है। परन्तु आज भारतीय समाज गहरे संक्रमण-काल से गुजर रहा है। इस पर परिवर्तन का दबाव कई तरफ से पड़ रहा है। एक ओर आधुनिकीकरण इसकी अनिवार्यता है तो दूसरी परम्परा के अपने आग्रह भी है। वैश्वीकरण के चलते दुनियाँ के अन्य देश से मिलने वाली आर्थिक और तकनीकी सहायता अपने साथ वहाँ की जीवन शैली तथा मूल्यों को भी भारतीय जीवन में लाती जा रही है। जिन्हें बहुत से भारतीय लोग आधुनिकता समझकर बिना सोचे-समझे अपनाने में गौरव समझ रहे हैं। ऐसे लोग निश्चयतः भारतीय परम्परा के मूल स्वर से या तो अपरिचित हैं अथवा भारतीय जीवन-मूल्यों से कटे हुए लोग हैं। इस अन्धानुकरण की प्रवृत्ति ने सामाजिक परिवर्तन के नाम पर हमारे समाज में एक नई चिन्ता को जन्म दिया है, और वह है अपनी पहचान और अस्मिता को खोकर एक आकृतिहीन भीड़ की गुमनामी में खो जाने की। आधुनिकीकरण, प्रगति और परम्परा के समन्वय के जो भी प्रयत्न हुए हैं, उनके अधिकांश परिणाम अब तक हास्यास्पद ही रहे हैं। आज न हम पारम्परिक भारतीय रह गये हैं, न सच्चे अर्थों में हम आधुनिक ही हुए हैं। हम अनिर्णय के गहरे दलदल में फँस से गये हैं और किसी सार्थक विकल्प की खोज के मार्ग को अवरोधित पा रहे हैं। भारतीय संस्कृति के सामने आज संक्रमण की चुनौती खड़ी है। परन्तु ध्यातव्य है कि संक्रमण तो एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है। उसके दुःखद और सुखद परिणाम तो आते जाते रहते हैं। पारिस्थितिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन का अनिवार्य कारण बन जाता है। परिवर्तन के अनेक कारक हो सकते है- यथा- नई आवश्यकताएँ, सुरक्षा की पर्याप्त और विश्वसनीय व्यवस्था अत्यधिक श्रम और एकरसता को दूर करने वाली सुविधाएँ तथा नये प्रतिष्ठापरक उपादान आदि। श्रेष्ठ चिन्तक **गोविन्दचन्द्र पाण्डेय** जी का यह मत प्रस्तुत विमर्श में यौक्तिक प्रतीत होता है कि *समाज किसी भौतिक उपादान की संरचना नहीं है। वस्तुतः कर्मपरक व्यवस्था के अनेक आयामों और स्तरों में सबसे गहरा है-* ***धार्मिकता का मूल्य।*** इस सन्दर्भ में बदलते सामाजिक जीवन में भी भारतीय संस्कृति की धर्मप्राणता विशेष विचाारणीय बिन्दु है। मानव जीवन का अन्तर्मुख ही उसका आध्यात्मिक पक्ष है, जिसमें वह नितान्त वैयक्तिक होकर आत्म-बोध अथवा परमात्मबोध का प्रयास करता हैं इसके विपरीत नैतिक जीवन में परोपकार, निःस्वार्थता, कर्त्तव्यपराणता आदि मूल्य आते हैं। सम्राट अशोक ने अपने अभिलेखों में जीवन की इन्हीं वृत्तियों को संयम और भावशुद्धि का नाम देता है। प्रो0 पाण्डेय यह भी स्पष्ट करते हैं कि *आध्यात्मिक और नैतिक जीवन तभी सम्भव है, जब मनुष्य अपनी स्वतंत्रता और सार्वभौम एवं सनानत आदर्शों के प्रति सजग हो। आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को परम्परा के रूप में धर्म सनातन सत्य का प्रकाश माना जा सकता है और इस रूप में संस्कृति अपने सारांश को विक्रियात्मक परिवर्तन से सदा बचाने की चेष्टा करती है।* हमें इस सत्य को स्वीकार करने में कोई विप्रतिपन्नता नहीं होनी चाहिए कि सास्कृतिक परम्परा हमारी सर्जनात्मक चेतना से उद्भूत होती है। यह चेतना महापुरुषों के क्रियात्मक संकेतों तथा बौद्धिक एवं मूल्यपरक विचारणा से सृजित होती है। इसीलिए सांस्कृतिक मूल्य न तो भौतिक पदार्थ है और न ही जैविक। उसका सम्बन्ध सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों से विगलित नहीं होता है। वस्तुतः संस्कृति और परम्परा दोनों ही मानसिक संकल्पनाएँ हैं। इनका प्रतिरूप या तो समाज अर्थात् उसके साहित्यकार, इतिहासकार, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक व्याख्या या तो स्वयं गढ़ते

हैं अथवा दूसरे के द्वारा गढ़े हुए प्रतिरूप एक साथ अस्तित्व में रहते हैं। इस तरह के किसी प्रतिरूप में संस्कृति के सभी तत्वों का समावेश सम्भव नहीं होता है। अस्तु, उन्हें अपने मूल्यों के संदर्भ में तात्कालिकता की निश्चित योजना में संजोने की आवश्यकता पड़ती हैं। उदाहरणार्थ हमारे आदर्श ग्रन्थ रामायण भी हैं और महाभारत भी। हमें अपने वीरगाथा काल पर भी गर्व है और भक्तिकाल पर भी। वस्तुतः युद्ध और शान्ति दोनों ही हमारी परम्परा के अंग हैं। इनका चुनाव समय सापेक्ष होता है।

आज हमारे सामने परिवर्तन की जो चुनौती खड़ी हुई है, वह इन सबसे सर्वथा पृथक् और विकराल हैं। हमारे सामने आधुनिकीकरण की चुनौती है। हमने आधुनिकता के आधार मूल्य जैसे तार्किकता, विवेकशीलता, सामाजिक गतिशीलता, परानुभूति, सक्रिय सहभागिता आदि नवीनताओं को तो गम्भीरता के साथ नहीं अपनाया। हम केवल उसके बाहरी एवं उपभोगवादी चकाचौंध एवं लक्षणों में उलझकर रह गये हैं। परिणामस्वरूप हमारे सामाजिक जीवन में व्यक्ति केन्द्रितकता बढ़ी है तथा मानवीय सामाजिक सरोकारों में कमी आयी है। धर्म निरपेक्षता आज के परिवर्तित सामाजिक संदर्भ में धर्म-विमुखता बन गयी है। धर्म के मूलाधार विस्मृत हो रहे है। तथा तांत्रिक और चमत्कारिक बाबा लोग फल-फूल रहे हैं। आर्थिक उदारता, मुक्त बाजार-व्यवस्था, वैश्वीकरण सम्पूर्ण भारतीय जीवन मूल्यों में एक अप-संस्कृति फैला रहे हैं और हम इस स्थिति को एक असहाय दर्शक बनकर देखने को मजबूर हैं। इससे भी बड़ी चुनौती आज दिख रही है धर्म के दुरूपयोग की। होना तो चाहिए था नवजागरण के प्रति प्रतिबद्ध प्रयत्न का, लेकिन हो रहा है अल्पकालिक राजनीतिक लाभ के लिए धर्म के दुरूपयोग का। धर्म के अन्तर्निहित मूल्यों यथा-परोपकार, सेवा, करूणा तथा समता आदि उदात्त भावनाएँ तो आज गौण होती जा रही है तथा इनके स्थान पर विवेकहीन, धर्मान्धता तथा मूल्यहीनता प्रधानता को प्राप्त हो रही है। इसी तरह आज हमारे सामने एक और महत्वपूर्ण चुनौती सामने आने लगी है। अविवेकी तथा तात्कालिक लाभ की गन्दी राजनीति की। एक ओर जहाँ विश्व के सामने पर्यावरण, आटमिक युद्ध, ऊर्जा की कमी, भूख, आवासहीनता तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि विकट प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ें जा रहे हैं, वहीं हमारी राजनीतिक में कुर्सी पाने तथा सत्ता प्राप्ति की घिनौनी चालें आम बात हो चुकी है। बदलते जीवन मूल्य के इस दौर में किसी भी सत्ताधारी तथा राजीनतिज्ञ को मानव भविष्य की चिन्ता नहीं है। समाज में स्थापित एवं लोक मंगलकारी मूल्य ऐसे में अपनी भूमि छोड़ते दिख रहे हैं। समय है इन पर गंभीरता से विचार करने के साथ हल ढूँढ़ने का।

सहायक ग्रन्थ-

1. प्रो0 गोविन्द चन्द्र : भारतीय समाज, तात्त्विक और ऐतिहासिक विवेचन, प्रथम संस्करण, 1994 नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ0 87।
2. द्रटव्य, वही, पृव 87

डॉ0 ज्योत्स्ना पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग
ब्राइट कैरियर गर्ल्स डिग्री कॉलेज, लखनऊ, उ0 प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-69-72
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों द्वारा ई-पुस्तकालय में प्रयोग किये जाने वाले सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के ज्ञान का अध्ययन

तुषार रञ्जन

शिक्षा व्यक्ति के जीवनयापन के लिए उचित साधनों का ज्ञान प्रदान करता है तथा मानव के जीवन के महत्व को उत्कृष्ट बनाता है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति के शारीरिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, नैतिक तथा उसमें व्यावसायिक रुचियों का विकास होता है, शिक्षा ही व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का उचित विकास, मानवीय गुणों का विकास, कर्तव्यों का बोध तथा मनुष्य के प्राचीन साहित्यिक ज्ञान और सामाजिक दायित्वों का विकास करती है। शिक्षा के महत्व को जीवन के किसी भी पहलू से नकारा नहीं जा सकता है।

सूचना सम्प्रेषण की लालसा ने मनुष्य को मेघ, वायु, चाँद, तारों और प्रकृति के अन्य उपादानों तक का अवलम्ब लेने को बाध्य किया है और पक्षियों तक को संदेशवाहक बनाना पड़ा। लेकिन सभ्यता के विकास और साथ ही वैज्ञानिक प्रगति ने निरन्तर नयी विधियों और माध्यमों का विकास किया। पहले टेलीग्राफ, टेलीफोन व बेतार रेडियों और अब टेलीविजन, फैक्स, ई-मेल, सुपर कम्प्यूटर, रेडियो पेजर, सेलुलर फोन, वीडियों टेलीफोन आदि ने संचार-जगत् में नयी क्रान्ति का सूत्रपात किया है। बड़े पैमान पर सूचना का संरक्षण, पुनर्प्राप्ति, सम्प्रेषण तथा पुनर्व्यवस्था को सूचना-क्रान्ति कहते हैं। सूचना-क्रान्ति की शुरूआत अमेरिका से हुई। वैसे भारत में संचार की विकास यात्रा कभी धीमी कभी तेज रही है। रफ्तार की दृष्टि से 90 का दशक अत्यन्त ही तीव्र माना गया है। इसलिए इसे संचार- क्रान्ति का युग कहा जा रहा है।

संचार तकनीकी में तीव्र परिणामस्वरूप टेलीफोन, फैक्स, उपग्रह, मोडम, कम्प्यूटर, पेजर, टेलीविजन, रेडियो और ऐसे ही कई उपकरणों के माध्यम से सूचनाएँ एक कोने से दूसरे कोने में भेजी जा रही है। कम्प्यूटर के आने से बड़े पैमाने पर आँकड़ों का भंडारण संभव हो गया। दूरसंचार और सूचना सम्प्रेषण के क्षेत्र में संचार उपग्रहों की महत्ता आज सर्वविदित है। भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली 'इन्सैट' इसी प्रकार की एक बहु-उद्देशीय सक्रिय उपग्रह प्रणाली है, जिसका उपयोग घरेलू दूरसंचार, मौसम की जानकारी और आँकड़ों के सम्प्रेषण तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन के कार्यक्रमों के राष्ट्रव्यापी प्रसारण में किया जाता है। शिक्षा में तकनीकी की विविध उपयोगिता को देखते हुए आज अधिकतर विद्यालय तकनीकी शिक्षा की ओर उन्मुख हो रहे हैं। चूँकि शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से शिक्षण की गुणवत्ता और विद्यार्थी की उपलब्धि स्तर में सुधार लाया जा सकता है। वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक तकनीकी का अर्थ शिक्षण क्रियाओं का यांत्रिकरण करना है, जिसके द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली व रोचक बनाने का प्रयास किया जाता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व- व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साधन के रूप में शिक्षा ही वह धूरी है जिसके सम्पर्क में रहकर मनुष्य, मनुष्य रहता है। समाज के बदलते स्वरूप, उद्देश्य एवं आवश्यकताओं के अनुरूप ही शिक्षा में परिवर्तन आवश्यक होता है। सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के तीव्र विकास ने शिक्षा के स्वरूप में काफी परिवर्तन किया है और यह परिवर्तन शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र स्तर एवं पहलू में दिखाई पड़ता है क्योंकि व्यक्ति सीखने में भी अधिगम-अन्तरण का प्रयोग करता है। शिक्षा में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के ज्ञान का प्रयोग

मात्र कक्षा-कक्ष तक ही सीमित नहीं है अपितु यह खेल के मैदान से लेकर पुस्तकालय आदि में भी उपयोगी है। इस समय ई-टाप, ई-मेल, ई-गवर्नेंस, ई-पेपर, ई-बुक, ई-प्रशासन, ई-चालान, ई-मीडिया एवं ई-शॉपिंग आदि का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। अतः शिक्षा में भी ई-पुस्तकालय का प्रयोग अब कोई नई बात नहीं रही।

यद्यपि ई-पुस्तकालय का प्रयोग समय के साथ आवश्यक है किन्तु इस हेतु संचार एवं सम्प्रेषण तकनीकी का कुछ मूलभूत ज्ञान अपेक्षित होता है। इन अपेक्षाओं पर विद्यार्थी कितना खरा उतरता है? संचार एवं सम्प्रेषण तकनीकी का ज्ञान विद्यार्थी को ई-पुस्तकालय के प्रयोग में कितना सहायक सिद्ध होता है? क्या हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों में ई-पुस्तकालय के प्रयोग हेतु अपेक्षित जागरूकता एवं ज्ञान है? इन्हीं प्रश्नों के समाधान हेतु यह अध्ययन अत्यन्त आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है।

अध्ययन का उद्देश्य- हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों द्वारा ई-पुस्तकालय में प्रयोग किये जाने वाले सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के ज्ञान का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि- प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया हैं सर्वेक्षण अनुसंधान विधि वास्तव में वर्णनात्मक अनुसंधान का एक प्रकार है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श- प्रस्तुत अध्ययन में इलाहाबाद जनपद के कक्षा 10 में अध्ययनरत् 50 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। जिसमें 25 छात्र एवं 25 छात्राएँ सम्मिलित है।

उपकरण- प्रस्तुत अध्ययन में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी से सम्बन्धित स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी विधियाँ- प्रस्तुत अध्ययन में आँकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रतिशतीय विश्लेषण का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण- हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों द्वारा ई-पुस्तकालय में प्रयोग किये जाने सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के ज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन का विश्लेषण एवं व्याख्या

क्रसं	कथन	हाँ	नहीं
1.	सम्प्रेषण तकनीकी का प्रयोग प्राचीन समय में होता था।	82%	18%
2.	न्यूज पेपर (समाचार पत्र) श्रव्य-दृश्य साधन हैं।	96%	4%
3.	न्यूज पेपर के माध्यम से हमें सूचना मिलती है।	58%	42%
4.	प्राचीन समय में सूचना के आदान-प्रदान का माध्यम डाक विभाग था।	82%	18%
5.	आधुनिक समय में डाक विभाग का अस्तित्व है।	70%	30%
6.	आधुनिक समय में डाक के अलावा रेडियो भी सूचना का माध्यम है।	68%	32%
7.	वर्तमान समय में संचार एवं सम्प्रेषण का साधन कम्प्यूटर है।	62%	38%
8.	इण्टरनेट के द्वारा सम्प्रेषण प्राप्त होता है।	66%	34%
9.	कम्प्यूटर एवं इण्टरनेट से हमें शिक्षा मिलती है।	84%	16%
10.	कम्प्यूटर का आविष्कार चार्ल्स बैवेज ने किया था।	88%	12%
11.	कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रानिक मशीन है।	96%	4%
12.	कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर एवं हार्डवेयर दोनों है।	68%	32%
13.	वर्तमान समय में इण्टरनेट से हम लोगों को सूचना मिलती है।	52%	48%
14.	सम्प्रेषण सिर्फ एक-एक व्यक्ति के बीच होता है।	68%	32%
15.	सम्प्रेषण एक से अधिक व्यक्तियों के बीच होता है।	66%	34%
16.	कम्प्यूटर और इण्टरनेट शिक्षा लेने देने का माध्यम हो सकता है।	54%	46%
17.	शिक्षा लेने एवं देने को शैक्षिक तकनीकी कहा जाता है।	66%	34%
18.	कम्प्यूटर एक श्रव्य एवं दृश्य साधन है।	84%	16%

क्रसं	कथन	हाँ	नहीं
19.	टी.वी. श्रव्य तथा दृश्य साधन है।	86%	14%
20.	टी0वी0 की सहायता से शिक्षा दी जाती है।	60%	40%
21.	ई-मेल द्वारा सूचना का आदान-प्रदान होता है।	72%	28%
22.	ई-मेल सूचना भेजने का माध्यम नहीं है।	24%	76%
23.	एस.एम.एस. सूचना देने का साधन है।	82%	18%
24.	मोबाइल सम्प्रेषण का साधन है।	86%	14%
25.	व्हाटसअप से हम लोगों को सूचना मिलती है।	50%	50%
26.	व्हाटसअप एक किताब है।	14%	86%
27.	सम्प्रेषण तकनीकी से विद्यार्थी के ज्ञान में वृद्धि होती है।	56%	44%
28.	संचार एवं सम्प्रेषण तकनीक से विद्यार्थी के भाषा कौशल में सुधार होता है।	62%	38%
29.	सम्प्रेषण तकनीकी के मदद से तथ्यों को रूचिपूर्ण बनाया जा सकता है।	94%	6%
30.	तकनीकी के इस्तेमाल से शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के ज्ञान में वृद्धि होती है।	90%	10%
31.	सम्प्रेषण तकनीकी के मदद से विद्यार्थी समस्याओं का हल शीघ्र कर सकता है।	78%	22%
32.	शिक्षा में तकनीकी प्रयोग से कक्षा में सीखने की प्रक्रिया में समय कम लगता है।	84%	16%
33.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से ज्ञान को आसानी से विद्यार्थी तक सम्प्रेषित किया जा सकता है।	94%	6%
34.	शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से शिक्षक को तथ्यों को समझना आसान होता है।	82%	18%
35.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी तथ्यों को सरल ढंग से समझता है।	74%	26%
36.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी के उपलब्धि स्तर पर वृद्धि होती है।	78%	22%
37.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी की सृजनात्मक योग्यता में वृद्धि होती है।	84%	16%
38.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के इस्तेमाल से विद्यार्थी की मानसिक शक्तियों का विकास होता है।	94%	6%
39.	सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से शिक्षण-प्रक्रिया और अधिक प्रभावी होती है।	92%	8%
40.	शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास होता है।	56%	44%

निष्कर्ष- 82% विद्यार्थी जानते हैं कि सम्प्रेषण तकनीकी का प्रयोग प्राचीन समय में होता था। 96% विद्यार्थी जानते हैं कि न्यूज पेपर (समाचार पत्र) श्रव्य-दृश्य साधन है। 58% विद्यार्थी जानते हैं कि न्यूज़ पेपर के माध्यम से हमें सूचना मिलती है। 82% विद्यार्थी जानते हैं कि प्राचीन समय में सूचना के आदान-प्रदान का माध्यम डाक विभाग था। 70% विद्यार्थी जानते हैं कि आधुनिक समय में डाक विभाग का अस्तित्व है। 68% विद्यार्थी जानते है कि आधुनिक समय में डाक के अलावा रेडियो भी सूचना का माध्यम है। 62% विद्यार्थी जानते हैं कि वर्तमान समय में संचार एवं सम्प्रेषण का साधन कम्प्यूटर है।

66% विद्यार्थी जानते हैं कि इण्टरनेट के द्वारा सम्प्रेषण प्राप्त होता है। 84% विद्यार्थी जानते हैं कि कम्प्यूटर एवं इण्टरनेट से शिक्षा मिलती है। 88% विद्यार्थी जानते हैं कि कम्प्यूटर का आविष्कार चार्ल्स बैवेज ने किया था। 96% विद्यार्थी जानते हैं कि कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रानिक मशीन है। 68% विद्यार्थी जानते हैं कि कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर एवं हार्डवेयर दोनों हैं।

66% विद्यार्थी जानते हैं कि सम्प्रेषण एक से अधिक व्यक्तियों के बीच होता है। 54% विद्यार्थी जानते है कि कम्प्यूटर और इण्टरनेट शिक्षा लेने देने का माध्यम हो सकता है। 66%

विद्यार्थी जानते है कि शिक्षा लेने एवं देने को शैक्षिक तकनीकी कहा जाता है। 84% विद्यार्थी जानते है कि कम्प्यूटर एक श्रव्य एवं दृश्य साधन है। 86% विद्यार्थी जानते है कि टी.वी. श्रव्य तथा दृश्य साधन है। 60% विद्यार्थी जानते है कि टी0वी0 की सहायता से शिक्षा दी जाती है।

72% विद्यार्थी जानते हैं कि ई-मेल द्वारा सूचना का आदान-प्रदान होता है। 82% विद्यार्थी जानते हैं कि एस.एम.एस. सूचना देने का साधन है। 86% विद्यार्थी जानते हैं कि मोबाइल सम्प्रेषण का साधन है। 50% विद्यार्थी जानते हैं कि व्हाटसअप से सूचना मिलती है। 56% विद्यार्थी जानते हैं कि सम्प्रेषण तकनीकी से विद्यार्थी के ज्ञान में वृद्धि होती है। 62% विद्यार्थी जानते हैं कि संचार एवं सम्प्रेषण तकनीक से विद्यार्थी के भाषा कौशल में सुधार होता है। 94% विद्यार्थी जानते हैं कि सम्प्रेषण तकनीकी के मदद से तथ्यों को रूचिपूर्ण बनाया जा सकता है। 90% विद्यार्थी जानते हैं कि तकनीकी के इस्तेमाल से शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के ज्ञान में वृद्धि होती है।

78% विद्यार्थी जानते हैं कि सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी समस्याओं का हल शीघ्र कर सकता है। 84% विद्यार्थी जानते हैं कि शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से कक्षा में सीखने की प्रक्रिया में समय कम लगता है। 94% विद्यार्थी जानते हैं कि सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से ज्ञान को आसानी से विद्यार्थी तक सम्प्रेषित किया जा सकता है। 82% विद्यार्थी जानते हैं कि शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से शिक्षक को तथ्यों को समझना आसान होता है। 74% विद्यार्थी जानते है कि सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रयोग से विद्यार्थी तथ्यों को सरलता से समझता है।

सुझाव- संचार माध्यम देश के सभी क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। आज की सबसे बड़ी माँग शिक्षा है एवं शिक्षा के द्वारा लोगों की बेरोजगारी दूर की जा सकती है तथा वर्तमान समय में तकनीकी शिक्षा की माँग ज्यादा है जिसमें संचार माध्यम बहुत कारगर है। विद्यार्थियों को एक ऐसा अवसर प्रदान किया जाये जो न केवल उन्हें सूचना एवं संचार के महत्व को स्पष्ट कर सके बल्कि नयी तकनीक के प्रति आकर्षण पैदा कर सकें। इनफॉरमेशन एण्ड कम्युनिकेशन टेक्नोलॉजी की परम्परागत प्रशिक्षण एवं सेवा कालीन प्रशिक्षण के साथ में रखते हुए प्रशिक्षण की नई व्यवस्था लाना महत्वपूर्ण है।

सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी वह महत्वपूर्ण साधन है, जिसके द्वारा व्यक्तियों को विभिन्न गतिविधियों को जानने, समझाने का अवसर प्राप्त होता है। वह व्यक्ति और समाज के सम्बन्धों को प्रकाशित करने में सहायक होता है। सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के विभिन्न साधनों के द्वारा व्यक्ति में चिंतन, कल्पना शक्ति, तर्क आदि मानसिक शक्तियों का विकास किया जा सकता है जिससे व्यक्ति अपनी समस्याओं के समाधान का नया मार्ग खोज सकने में सक्षम होगा।

सहायक ग्रन्थ-

- अग्निहोत्री रवीन्द्र, आधुनिक भारतीय शिक्षाः समस्या और समाधान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007.
- गुप्ता, एस0पी0, आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन, : शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2008.
- डा0 पाण्डेय, के0 पी0, शैक्षिक अनुसन्धान, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2006.
- बेस्ट, जॉन डब्लू खान, जेम्स वी., रिसर्च इन एजुकेशन, पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली 2014.
- सिंह, अरुण, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2009.
- हिथर ग्रिनेगर, शिक्षा में तकनीकी के द्वारा विद्यार्थी के उपलब्धि स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव, 2006.
- त्रिपाठी एस0 एम0 शर्मा वी0 के0 लाल सी कुमार के- ग्रन्थालय प्रबन्ध आगरा वाई0के0 पब्लिशर्स - 2003
- त्रिपाठी एस0 एम0, प्रलेखन एवं सूचना सेवाएं, आगरा वाई0के0 पब्लिशर्स
- शंकर सिंहः सूचना प्रौद्योगिकी और इन्टरनेटः पूर्वान्चल प्रकाशन, दिल्ली-2007

तुषार रञ्जन
कनिष्ठ शोध अध्येता, शिक्षा शास्त्र विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-73-74
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

ई-लर्निंग : गुण एवं दोष

हेमलता पन्त एवं चेतन प्रकाश तिवारी

सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी का अर्थ औजारों, उपकरणों तथा अनुप्रयोग आधार से युक्त ऐसी तकनीकी है जो सूचना के संग्रहण, भंडारण पुनः प्रस्तुतीकरण, उपयोग, स्थानान्तरण, संश्लेषण, विश्लेषण एवं आत्मसातीकरण आदि के विश्वसनीय एवं यथार्थ संपादन में सहायक सिद्ध होते हुए उपयोगकर्ता को अपना ज्ञानवर्धन करने तथा उसके संप्रेषण तथा निर्णय और समस्या समाधान योग्यता में वृद्धि करने में बहुत अधिक सहायक सिद्ध होती है।

ई-लर्निंग को एक ऐसे अधिगम की संज्ञा दी जा सकती है जिसमें विकसित मल्टीमीडिया एवं मोबाइल तथा इंटरनेट एवं वेब तकनीकी दोनों प्रकार की सुविधाओं द्वारा कम्प्यूटरए एवं मोबाइल उपकरणों के माध्यम से अधिगमकर्त्ताओं को भलीभाँति ज्ञान उपलब्ध कराया जा रहा है। ई-लर्निंग की मुख्य रूप से तीन प्रकार की शैलियाँ होती है:

1.अवलंब अधिगम (Support Learning): ई-लर्निंग कक्षा में चल रही शिक्षण-अधिगम गतिविधियों का सहारा देकर आगे बढ़ाने का कार्य कर रही होती हैं। इस शैली का उपयोग शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही अपने-अपने शिक्षण और पठन कार्यों को अच्छा बनाने के लिए कर सकते है। जैसे ये दोनों मल्टीमीडिया तथा इंटरनेट का उपयोग कक्षा शिक्षण के समय शिक्षण तथा ज्ञान प्राप्त करने के कार्यों में अपेक्षित सफलता प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।

2.मिश्रित अधिगमः इस शैली में परम्परागत तथा सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी पर आधारित दोनों ही तकनीकों के मिले-जुले रूप का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के अधिगम के उपयोग में कार्यक्रम और गतिविधियों को इस प्रकार नियोजित, व्यवस्थित व क्रियान्वित किया जाता है कि परम्परागत कक्ष शिक्षण तथा ई-लर्निंग आधारित अनुदेशन दोनों का उचित लाभ शिक्षकों और विद्यार्थियों को मिल सके।

3. पूर्ण ई-लर्निंगः इस प्रकार की लर्निंग में परम्परागत विद्यालय शिक्षा की तरह विद्यालय, कक्षा-कक्ष या उनमें मिलने वाले सजीव पारस्परिक अंतःक्रिया युक्त शिक्षण-अधिगम वातावरण नहीं होता। इसमें विद्यार्थियों के सामने पूर्णरूपेण संरचित और निर्मित ई-लर्निंग कोर्स (या अधिगम सामग्री) होती है जिन्हें विद्यार्थी स्वतंत्र रुप से अपनी-अपनी अधिगम गति से प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। उनकी बहुत सारी गतिविधियाँ 'ऑन लाइन' ही सम्पन्न होती है परन्तु वे अपनी आवश्यकतानुसार उन सी0डी0 रोम तथा डी0वी0डी0 की भी सहायता ले सकते हैं जिनमें इच्छित अधिगम सामग्री उचित सूचनाओं या अधिगम पैकेज के रूप में संग्रहित की गई हो। पूर्ण ई-लर्निंग प्रणाली दो प्रकार की होती है:

(अ) एसिंक्रोनस संप्रेषण प्रणालीः इस तरह के संप्रेषण में अध्यापक तथा विद्यार्थियों की समय विशेष में एक साथ उपस्थिति आवश्यक नहीं होती हैं। इसमें लर्निंग कोर्स संबंधी सूचनाएं विद्यार्थियों को या ज्ञान प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को ई-मेल द्वारा भेजी जाती है या उसे वेब पेज, ब्लोग्स या विकीज तथा रिकार्ड किए गए सी0डी0 रोम एवं डी0वी0डी0 के रूप में उपलब्ध रहती है। अध्ययन सामग्री पहले से ही उपस्थित होने से, इस विद्यार्थियों द्वारा अपनी इच्छा अनुरूप किसी भी समय अपने तरीके से अध्ययन करने हेतु काम में लाया जा सकता

है। इसे अधिन्यास को विद्यार्थीगण अपनी तरह से पूर्ण कर ई-मेल द्वारा अध्यापक को भेजते हैं और फिर अध्यापक अपनी सुविधा के अनुसार उनके बारे में आवश्यक व उचित प्रतिपुष्टि (Feedback) देकर आगे की अध्ययन सामग्री पर विद्यार्थी को बढ़ने के लिए कह सकता है। इस शैली में प्रत्यक्ष रुप से आमने-सामने होने वाली अंतःक्रिया जो वास्तविक कक्षा शिक्षण में अध्यापक और विद्यार्थियों के बीच होती है, उसकी नितांत कमी रहती है।

(ब) सिंक्रोनस संप्रेषण प्रणालीः इस प्रणाली में शिक्षण अधिगम हेतु आवश्यक सीधा शिक्षक-शिक्षार्थी संप्रेषण इंटरनेट पर ऑन लाइन चैटिंग तथा ऑडियो-वीडियो कांफ्रेंसिंग द्वारा होता है। इस कार्य शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को ही शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को पूर्ण करने हेतु आवश्यक संप्रेषण करने के लिए एक समय विशेष में एक साथ इंटरनेट पर उपस्थित रहना होता है। इस तरह के संप्रेषण में परम्परागत कक्षा शिक्षण की तरह प्रत्यक्ष अंतःक्रिया करने के पूरे प्रयास किये जाते हैं। आमने-सामने चल रही वास्तविक कक्षा शिक्षण जैसी अंतःक्रिया न कर पा सकने के बिना भी इंटरनेट सेवाओं की सहायता से यह प्रणाली काफी हद तक विद्यार्थी विशेष और अध्यापक को अप्रत्यक्ष रूप से एक साथ एक दूसरे के आमने-सामने लाकर शिक्षण-अधिगम गतिविधियों में लगे रहने का बेहतर प्रयास करता है।

ई-लर्निंग के गुण तथा उपयोगिता- ऐसे व्यक्ति जिनके पास परम्परागत कक्षा शिक्षण से लाभ उठाने हेतु समय नहीं होता है ई-लर्निंग के माध्यम से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। कोई भी व्यक्ति किसी अन्य कार्य या व्यवसाय में रहते हुए भी अपने को पूर्ण लाभान्वित कर सकता है। इस माध्यम से अधिगमकर्ताओं को उनकी आवश्यकताओं, मानसिक स्तर, दक्षता, स्थानीय आवश्यकताओं तथा उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप शिक्षा, अनुदेशन तथा अधिगम अनुभव, प्रदान करने का सामर्थ्य रखती है। ई-लर्निंग का एक और मुख्य आकर्षण और विशेषता उसके लचीलेपन को लेकर है। यह किसी भी माध्यम (सी0डी0, डी0वी0डी0, कम्प्यूटर तथा मोबाइल फोन) पाठ्यक्रम (माड्यूल या छोटे-छोटे पर्दों में संग्रहित विषयवस्तु) तथा ग्रहण करने के तरीके (जिस समय अध्यापक द्वारा दी जा रही हो या सुविधानुसार कभी भी) द्वारा विद्यार्थी को उचित रूप से उपलब्ध हो सकती है। इस प्रकार की प्रणाली इस कारण भी उपयोगी है कि इसके माध्यम से सभी अधिकमकर्ताओं को समान अधिगम एवं प्रशिक्षण के अवसर प्राप्त होते हैं।

वर्तमान समय सूचना प्रौद्योगिकी का समय है। यदि हमें विश्व के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलना है तो इस प्रौद्योगिकी की नितान्त आवश्यकता है। अतः हमें ई-लर्निंग शैक्षिक प्रणाली के सकारात्मक पहलुओं को ध्यान में रखकर इसका प्रयोग करने से हिचकिचना नहीं चाहिए। जिन स्थानों में इस प्रकार के लर्निंग के संसाधन न हो वहाँ परम्परागत शिक्षण की विधि तथा जहाँ संसाधन उपलब्ध हो वहाँ परम्परागण शिक्षण के साथ ई-लर्निंग प्रणाली को प्रयोग किया जाना चाहिए।

सहायक ग्रन्थः मंगल एस0 के0 एवं मंगल उमा सूचना संप्रेषण एवं शैक्षिक तकनीकी, टंडन पब्लिकेशन, लुधियाना द्वारा प्रकाशित, 2010, पृष्ठ संख्याः 1-305.

डॉ0 हेमलता पन्त
सचिव, सोसाइटी ऑफ बॉयलाजिकल साइंसेज एण्ड
रूरल डेवलपमेंट, इलाहाबाद-211019 (उ0प्र0)
चेतन प्रकाश तिवारी
ई-9, जज फॉर्म, छोटी मुखानी, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-75-78
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

बाल विकास के क्षेत्र में व्यक्तित्व विकास का तुलनात्मक अध्ययन

रेनू रानी

बाल एवं विकास इन दो शब्दों के संयोग से बाल विकास शब्द की रचना हुई है। बाल विकास के अध्ययन के दौरान हम बालक शब्द अजन्में शिशु के लिए भी प्रयोग करते हैं और 21 वर्षीय किशोर के लिए भी। विकास शब्द हमारे लिए नया नहीं हैं। जीवन के हर क्षेत्र में हम इसका प्रयोग करते हैं तथा सामान्य रूप से इसका अर्थ हैं 'वर्तमान स्थिति से सुधार की ओर बढ़ना'। जन्म से पूर्व (गर्भावस्था) की अवस्था से लेकर मृत्युपर्यन्त व्यक्ति में अनवरत परिर्वतन होते रहते हैं। बाल विकास में उन सभी तथ्यों का अध्ययन किया जाता है जो बालकों के व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान कर विकास में सहायता करते हैं प्रस्तुत शोध लेख में बाल विकास के क्षेत्र में मनोविज्ञान विकास का अध्ययन का विश्लेषण किया गया है।

हरलोक के अनुसार, *बाल मनोविज्ञान का नाम बाल विकास इसलिए बदला गया क्योंकि अब बालक के विकास के समस्त पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है, किसी एक पक्ष पर नहीं।* **मूसेन** के अनुसार *आज भी बाल विकास के अनेक अध्ययनों का सम्बन्ध आयु प्रवृत्ति से सम्बन्धित है, जिसमें आयु सम्बन्धी चिन्तन, समस्या समाधान, सृजनशीलता, तर्क नैतिकता, व्यवहार आदि का अध्ययन किया जाता है।*

बाल विकास का अर्थः- बालक के विकास की प्रक्रिया गर्भ में ही आरम्भ हो जाती है विकास की इस प्रक्रिया में वह गर्भावस्था, शैशवास्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था इत्यादि कई अवस्थाओं से गुजरते हुए परिवक्वता की स्थिति प्राप्त करता है।

अध्ययन की विधियाँः- बाल विकास के अध्ययन के लिए विशिष्ट विधियों का ही प्रयोग किया जाता है। एक साथ दो या अधिक विधियों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

चरित्र लेखन विधिः- अध्ययन के लिए इस पद्धति का उपयोग अत्यन्त प्राचीन है। प्रेयर से भी पहले कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इसका उपयोग बाल अध्ययन के लिए किया था। प्रेयर ने अपने ही बालक के जन्म से तीन वर्षो तक का चरित्र लेखन (Biography) तैयार किया था। इस चरित्र लेखन द्वारा प्रेयर ने यह जानने का प्रयत्न किया कि बालक में जन्म के समय कौन-कौन सी सहज क्रियायें पायी जाती हैं।

प्रयोगात्मक विधिः- प्रयोगात्मक विधि प्राकृतिक विज्ञानों से जी गयी है, इस कारण वैज्ञानिक विधि के मानदण्डों पर यह पूरी तरह खरी उतरती है। इस विधि के द्वारा कार्य कारण सम्बन्धों (Cause and Effect Relationship) का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से किया जाता हैं। प्रयोगात्मक पद्धति के द्वारा अध्ययन करते समय एक अध्ययन समूह भी हो सकती हैं। अन्य विधियों की अपेक्षा यह विधि अधिक शुद्ध और संक्षिप्त (Accurate and Precise) हैं।

अवलोकन विधिः- गैसेल ने इसके लिये चलचित्र कैमरा का उपयोग किया और व्यवहार के जो विश्लेषण के लिए चलचित्रों की सहायता ली। इस विधि के द्वारा उन्होनें व्यवहार के जो विश्लेषण किये वे अधिक विश्वसनीय पाये गये। गैसेल ने निरीक्षण पद्धति को अधिक विश्वसनीय बनाने की दिशा में कार्य किया। निरीक्षण के लिए उन्होंने एकदर्शी पट (Only Way Screen) का उपयोग किया। इस सुविधा के लिए विशेष निरीक्षक कक्षों का निर्माण किया जाता है। जिसमें एकदर्शी पट लगे रहते हैं। बालक निरीक्षण कक्ष में रहता है, और

उसके व्यवहार का निरीक्षक अध्ययनकर्ता बाहर से करता है। इस प्रणाली को चरित्र लेखन विधि भी कहते हैं। **यंग के अनुसार**- निरीक्षण क्षेत्रों द्वारा सावधानी से किये गये सोद्देश्य अध्ययन को सामूहिक व्यवहार, जटिल सामाजिक संस्थाओं और किसी पूर्ण वस्तु की विभिन्न इकाइयों का निरीक्षण करने के लिए एक विधि के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

यंग के कथन से स्पष्ट है कि तथ्यों का अध्ययन करने के लिए निरीक्षण विधि में आँखो की सहायता ली जाती है। अध्ययन करने में विधि की सहायता ली गई। इस विधि की सहायता से सामूहिक व्यवहार का भी अध्ययन किया जा सकता है। इस विधि का उपयोग एक और स्वतन्त्र विधि के रूप में भी बाल मनोविज्ञान के अध्ययनों में किया जाता है। साथ ही साथ इस विधि का उपयोग एक सहायक विधि के रूप में किया जाता है। इसकी सहायता से मनोविज्ञान की विभिन्न समस्याओं को प्राथमिक निरीक्षणों के आधार पर विकास करते हैं। तथा बाल एवं विकास में निरीक्षण विधि को अपनाया गया है।

बाल विकास अध्ययन के उद्देश्यः-

1. आयु वृद्धि के फलस्वरूप बालक के शारीरिक अनुपात, व्यवहार, रूचि तथा लक्षणो का अध्ययन करना।
2. परिवर्तन कब तथा किस रूप में होते हैं।
3. इन परिवर्तनों के कारण का अध्ययन करना।
4. इन परिवर्तनों के फलस्वरूप व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
5. यह ज्ञात करना कि क्या इन परिवर्तनों की भविष्यवाणी की जा सकती है।

बाल विकास में वातावरण का प्रभावः- बालक के विकास पर बालक के चारों ओर का वातावरण भी अपना प्रभाव डालता है। वातावरण वह प्रेरक तत्व है जो निरन्तर अपने प्रभाव से विकास का रूख अपनी ओर मोड़ लेता है। बालक को गर्भाधान के बाद से प्रमुख 2 वातावरण बालक के विकास को प्रभावित करते हैं।

(A) जन्म से पूर्व का वातावरण (Pre Natal Environment)

(B) जन्म के बाद का वातावरण (Natal Environment)

बालक के विकास को अनेक प्रकार प्रभावित करते है इनमें से कुछ कारक स्वतन्त्र रूप से बालक के शारीरिक विकास को प्रभावित करते हैं। **(1) वंशानुक्रमः-** वंशानुक्रम गुणों का शारीरिक आकार प्रकार का एवं पक्वीकरण की दर का व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है। वंशानुगत गुण एवं वातावरण का अलग-अलग प्रभाव किस प्रकार पड़ता है। **(2) वातावरणः-** बालक के विकास पर बालक के चारों ओर का वातावरण भी अपना प्रभाव डालता है। वातावरण वह प्रेरक तत्व है। **(i) जन्मपूर्वः-** जन्म के पूर्व का वातावरण अनेक रूपों में कार्य करता है कोष का स्वयं का वातावरण कोषो के माध्यम का वातावरण के अर्न्तगम आते हैं। जिनसे गर्भ स्थित बालक का विकास प्रभावित होता है। **(ii) जन्म के पश्चातुः-** बालक जब जन्म लेता है तो उस समय वह एक असहाय प्राणी होता है। उस समय माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा उसका पालन-पोषण किया जाता है। **(iii) कोषीय वातावरणः-** वातावरण प्रदान कर उसमें व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं तथा उसे एक उत्तम नागरिक बनने के लिए प्रेरित करते हैं। **(iv) कोषो के मध्य वातावरणः-** उचित वातावरण को बालक को न मिले तो बालक अपराधी प्रवृत्ति का हो जाता है। अच्छे वातावरण द्वारा ही बालक में सकारात्मक गुणों का विकास किया जा सकता है। जैसे हम जानते हैं कि बस्तियों तथा गन्दे माहौल में रहने वाले बालक जन्म से ही आपराधिक प्रवृत्ति के नहीं होते हैं इसी प्रकार अधिक भौतिक सुख-सुविधाओं में पले-बढ़े बालक में सहयोग, सहानुभूति

की भावना का विकास नहीं हो पाता है। **(v) परिवारः-** जो बालक एकल परिवार में पले-बढ़े होते हैं उनमें सहयोग, दया, करूणा आदि सद्गुणों का अभाव होता है। ऐसे बालको में स्वार्थ की भावना अधिक होती है। जबकि संयुक्त परिवार में पले-बढ़े बालकों का सहयोग, सौहार्द्र मिल-जुलकर काम करने की भावना जैसे सकारात्मक गुण होते हैं जो बालक मध्यवर्गीय परिवार में पलते हैं उनमें सामाजिक भय की भावना उच्च वर्गीय परिवार के बालको की अपेक्षा अधिक होती है। **(vi) व्यक्तित्वः-** *व्यक्तित्व जन्म एवं अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।* बालक के विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों को सारांश में निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है-

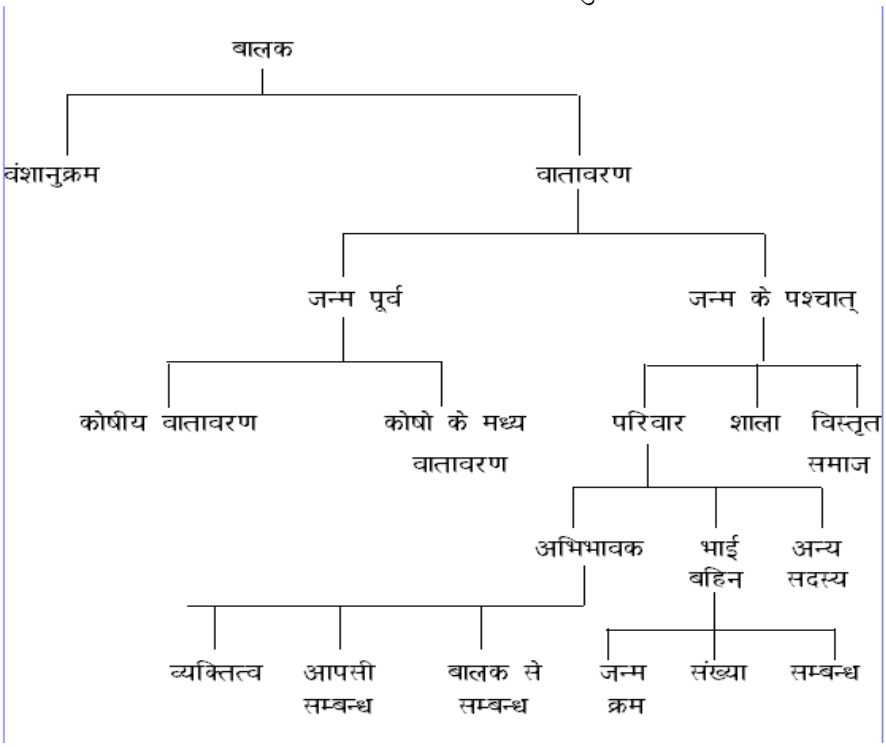

जन्म के पूर्व का वातावरण अनेक रूपों में कार्य करता है। कोष का स्वयं का वातावरण, कोषों के मध्य का वातावरण गर्भावस्था में प्राप्त होने वाले पोषण, माता का स्वास्थ्य, माता की मद्यपान तथा धूम्रपान की आदतें, माता द्वारा ली जाने वाली दवायें, माता को होने वाले रोग विशेषकर, जर्मन मीसेल्स माता की मानसिक स्थिति आदि सब जन्म पूर्व के वातावरण के अन्तर्गत आते हैं, जिनसे गर्भ स्थित बालक का विकास प्रभावित होता है।

भौतिक व मनोवैज्ञानिक दोनों प्रकार का वातावरण बालक के शारीरिक व मानसिक विकास को प्रभावित करता है। बालक जब जन्म लेता है वह असहाय व्यक्ति होता है। **अच्छे वातावरण द्वारा ही बालक में सकारात्मक गुणों का विकास किया जा सकता है।**

बालक विकास के सामाजिक क्षेत्र या समस्यायें- बाल विकास के क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया जाता है-

1. बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययनः- प्राणी के जीवन प्रसार में अनेक अवस्थाएं होती हैं जैसे- गर्भकालीन अवस्था, शैशवावस्था, बाल्यावस्था, वय संधि और किशोरावस्था।

2. बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययनः- इसके अन्तर्गत विकास के विभिन्न पहलुओं; जैसे शारीरिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास, क्रियात्मक विकास, भाषा विकास, नैतिक विकास, चारित्रिक विकास और व्यक्तित्व विकास सभी का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाता है।

3. बाल विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययनः- बाल विकास उन सभी तत्वों का अध्ययन करता है जो बालक के विकास को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। बालक के विकास पर प्रमुख रूप से वंश परम्परा और वातावरण तथा परिपक्वता और शिक्षण का प्रभाव पड़ता है।

4. बालको की रूचियों का अध्ययनः- बाल विकास बालको की रूचियों का अध्ययन कर उन्हें शैक्षिक और व्यवसायिक निर्देश प्रदान करता है। रूचियाँ एक अर्जित व्यवहार है जो जन्मजात नहीं होती है, बल्कि सीखी जाती हैं। रूचियाँ कार्य करती हैं और लक्ष्य की पूर्ति को आसान बनाती है।

5. बालक अभिभावक सम्बन्धों का अध्ययनः- जन्म के पश्चात् सबसे पहले बालक को अपने माता-पिता का संरक्षण प्राप्त होता है। बालक के व्यक्तित्व निर्धारण और समुचित विकास में माता-पिता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। जिन बालकों के सम्बन्ध अपने माता-पिता के साथ अच्छे नहीं होते हैं वे अक्सर कुसमायोजित और अपराधी प्रवृत्ति के हो जाते हैं।

6. अन्य समस्यायंः- बाल विकास में उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक समस्याओं का अध्ययन भी किया जाता है- वंशानुक्रम से सम्बन्धित समस्याएँ, प्रशिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ, सामाजिक अधिगम तथा कौशलों से सम्बन्धित समस्याएँ एवं बालक के सामाजिकरण से सम्बन्धित समस्याएँ

निष्कर्ष या भ्रन्तियाँ या परम्परागत विश्वासः- बाल विकास का अध्ययन करने वाले मनोवैज्ञानिकों के लिये उन परम्परागत विश्वासों का अध्ययन करना इसलिए आवश्यक हो जाता है कि इस प्रकार के माता-पिता के विश्वासों का अध्ययन करना इसलिये आवश्यक हो जाता है कि इस प्रकार के माता-पिता के विश्वास बालक के प्रति व्यवहार को प्रभावित करते हैं। अन्त में बालको का विकास भी इस प्रकार की माता-पिता की विचारधारा से प्रभावित होता है। यदि बालको के चारो ओर का वातावरण या पर्यावरण में रहने वाले कुछ लोग इन परम्परागत विश्वासों को मानते है तो निश्चिय रूप ये कुछ न कुद असुविधा और हानि ही होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थः-

1. हरलॉक, बाल-विकास, शर्मा एवं शर्मा, स्टार पब्लिकेशन्स, आगरा 10 पृष्ठ संख्या।
2. मुसेन, बाल-विकास, शर्मा एवं शर्मा, स्टार पब्लिकेशन्स, आगरा 10 पृष्ठ संख्या।
3. यंग पी0 वी, बाल-विकास, शर्मा एवं शर्मा, स्टार पब्लिकेशन्स आगरा, पृष्ठ संख्या, 17.
4. वर्मा डॉ0 प्रीति एवं श्रीवास्तव डॉ0 डी0एन0, बाल अध्ययन विधियाँ, बाल मनोविज्ञान बाल-विकास, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, वर्ष 2007, पृष्ठ संख्या 27.
5. वर्मा डॉ0 प्रीति, बाल अध्ययन विधियाँ, पृष्ठ सं0 35.
6. अग्रवाल डॉ0 नीता, मातृकला एवं बाल विकास, पब्लिकेशन्स आगरा, वर्ष 2010-11.
7. नागर डॉ0 वीनू एवं राजपूत डॉ0 आशा सिंह, बाल विकास, वर्ष 2010-11.

रेनू रानी
शोध छात्रा, गृह विज्ञान विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-79-88
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि पर सामाजिक–आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन

अजय प्रकाश तिवारी

शिक्षा मानव विकास का मूल आधार है। यह शिक्षा बालक को प्राथमिक शिक्षा माध्यमिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा जैसे विभिन्न लक्ष्यों को प्राप्त करने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है। स्नातक स्तर पर शिक्षा को रोजगार परक प्रासंगिक तथा जीवनोपयोगी बनाने की दृष्टि से इस स्तर के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। हमारी परम्परागत शिक्षा प्रणाली में संज्ञानात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता रहा है और कौशलात्मक एवं भौतिक पक्ष की प्रायः उपेक्षा होती रही है। अतएव पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा के समावेश से छात्रों के विकास से सम्बद्ध पक्षों को सम्पुष्ट एवं समृद्ध करने में व्यावसायकि शिक्षा के अन्तर्गत विभिन्न व्यवसायों/समाजोपयोगी उत्पादक कार्यों की शिक्षा विशेष रूप से उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है।

संवेगात्मक बुद्धि को एक ऐसी क्षमता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिससे चार विभिन्न रूपों में संवेगों को उचित दिशा देने में मदद मिले जैसे संवेग विशेष का प्रत्यक्षीकरण करना, उसका अपनी विचार प्रक्रिया में समन्वय करना, उसे समझना तथा उसका प्रबन्धन करना। यह परिभाषा बताती है कि हम सभी ने अपने संवेगों से निपटने हेतु अलग-अलग ढंग की क्षमता और योग्यता पाई जाती है और उसी के अनुरूप एक समूह में दूसरों की तुलना में किसी भी व्यक्ति विशेष की संवेगात्मक बुद्धि की दृष्टि से अधिक या कम बुद्धिमान माना जाता है। एक व्यक्ति को उतना ही संवेगात्मक रूप से बुद्धिमान माना जाता है जितनी कि क्षमता और योग्यता वह निम्न रूपों में प्रदर्शित करता है। संवेगात्मक बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति विशेष की उस समग्र क्षमता से है जो उसे उसकी विचार प्रक्रिया का उपयोग करते हुए अपने तथा दूसरों के संवेगों को जानने, समझने तथा उनकी ऐसी उचित अनुभूति एवं अभिव्यक्ति करने कराने में इस प्रकार मदद करें कि वह ऐसी वांछित व्यवहार अनुक्रियायें कर सके जिनसे उसे दूसरों के साथ सामजंस्य स्थापित करते हुए अपना समुचित हित करने हेतु अधिक से अधिक अच्छे अवसर प्राप्त हो सके।

शेख (2013) ने कार्यरत एवं अकार्यरत महिलाओं के विद्यार्थियों के अध्ययन आदत, संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि पर अध्ययन किया तथा पाया कि दोनों ही प्रकार के बच्चों के अध्ययन आदतों में कोई अन्तर नहीं पाया जाता है, साथ में यह भी पाया गया कि दोनों ही प्रकार के बच्चों के संवेगात्मक बुद्धि में कोई अन्तर नहीं होता है जबकि शैक्षिक उपलब्धि के संदर्भ में यह पाया गया कि कार्यरत महिलाओं के बच्चों के उपलब्धि से कम होता है। **चिकरा, (2015)** ने शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि तथा चिंता के प्रभाव का अध्ययन किया तथा पाया कि निम्न चिंता युक्त विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अपेक्षाकृत अधिक होती है साथ ही यह भी पाया कि चिंता एवं बुद्धि के मध्य अन्तरक्रिया शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करती है। **सोनकर दीपक (2009)** ने बीएड में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मूल्यों पर सामाजिक आर्थिक स्तर के प्रभाव का तुलानात्मक अध्ययन में पाया कि शिक्षा के द्वारा ही समाज अपनी सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा करता है और शिक्षा सभ्यता के रूप में इस जगत की उन्नति में सहायता करती है। शिक्षा ही वह तत्व है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को परिष्कृत भी करता है।

बी0 एड0 प्रशिक्षण एवं प्रशिक्षणार्थी- बी0एड0 प्रशिक्षण महाविद्यालय अधिगत की ऐसी संस्था है जहाँ स्नातक उत्तीर्ण छात्र एवं छात्राओं को शिक्षक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। स्नातक स्तर पर शिक्षण प्रशिक्षण के अर्न्तगत छात्र एवं छात्रा दोनों आते हैं। जिनमें से शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले छात्रों को छात्राध्यापक कहा जाता है। और शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली छात्राओं को छात्राध्यापिका कहा जाता है।

संवेगात्मक बुद्धि- संवेगात्मक बुद्धि वह योग्यता है जो संवेग का अभिज्ञान तथा संवेगों को व्यवस्थित करती है। यह व्यक्तिगत कुशलता है जो भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न मात्रा में पाई जा सकती है। इसकी मात्रा व्यक्ति के सामाजिक समायोजन को प्रभावित करती है। गोलमैन ने संवेगात्मक बुद्धि को जीवन के सांवेगिक पक्षों से सम्बन्धित योग्यताओं अथवा गुणों के समूह के रूप में परिभाषित किया है। अर्थात् संवेगात्मक बुद्धि विकसित एवं सुखी जीवन के लिए बुद्धि लब्धि की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है।

सामाजिक-आर्थिक स्तर- समाज में लोगों को केवल वर्गीकृत नहीं किया जाता वरन् इन श्रेणियों को ऊँचे-नीचे क्रम में भी रखा जाता है। लोगों को उच्चतम एवं निम्नतम् की श्रेणियों में व्यवस्थित करने की प्रक्रिया सामाजिक-आर्थिक स्तरीकरण की प्रक्रिया कही जाती है। जिस व्यक्ति को उच्च, मध्य एवं निम्न वर्ग में रखा जाता है वह उस श्रेणी का सामाजिक ढांचा कहा जाता है। अधिकतर समाजों में लोग एक दूसरे को श्रेणियों में वर्गीकृत करते हैं और इन श्रेणियों को उच्चतम और निम्नता की ओर क्रमबद्ध करते हैं। इस प्रकार की श्रेणियां परिभाषित करने की प्रक्रिया सामाजिक स्तरीकरण कहलाती है और परिणामस्वरूप प्राप्त क्रमबद्ध श्रेणी को स्तरीकरण ढांचा कहा जाता है।

सामाजिक-आर्थिक स्तर को जन्म से प्राप्त किया जाता है न कि इसे अर्जित किया जाता है। भारत में जन्म से इसे प्राप्त करने का बल दिया गया है। अमेरिकी समाज में इसके अर्जन पर बल है। जन्म से प्राप्त स्तरीकरण में कठोरता, अनम्यता, अपरिवर्तनशीलता अधिक होती है और अर्जित स्तरीकरण में नम्यता, गतिशीलता तथा परिवर्तनशीलता के गुण विद्यमान रहते है। सामाजिक-आर्थिक स्तरीकरण का एक प्रमुख आधार धन है। सम्पत्ति के आधार पर समाज विभिन्न श्रेणियों में बँट जाता है। अमीर-गरीब के वर्ग विश्वव्यापी हैं। राजनैतिक शक्ति भी कभी-कभी स्तरीकरण का आधार बन जाती है। कभी-कभी बुद्धि या व्यक्तित्व या योग्यता के आधार पर भी वर्ग बन जाते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि स्तरीकरण का आधार एक ही हो। प्रायः देखा जाता है कि मिश्रित रूप से अनेक आधार स्तरीकरण को निश्चित करते हैं।

उद्देश्य- 1. बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

2. बी0एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

3. बी0एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

4. बी0एड0 स्तर के छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

5. बी0एड0 स्तर के छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

6. बी0एड0 स्तर के विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं 1. बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

2. बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

3. बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

4. बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

5. बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

6. बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध विधि जनसंख्या एवं प्रतिदर्श- वर्तमान शोध में कार्योत्तर विधि का प्रयोग किया गया है जो विवरणात्मक शोध के अन्तर्गत आता है। सम्भाव्य प्रतिचयन के आधार पर प्रस्तुत अनुसंधान अध्ययन में इलाहाबाद मण्डल के बी0एड0 महाविद्यालयों की सूची, तैयार की। सम्भाव्य प्रतिचयन के आधार पर शोधकर्ता ने 20 बी0एड0 संस्थाओं का चयन किया है तथा बी0एड0 महाविद्यालयों से 600 विद्यार्थियों का यादृच्छिक प्रतिदर्श विधि से चयन किया गया है। संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण (छात्राध्यापक प्रारूप) का निर्माण **प्रो0 के0एस0 मिश्र** द्वारा किया गया है तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर मापनी का निर्माण **डॉ0 आर0एल0 भरद्वाज** द्वारा किया गया है जो शिक्षित व्यक्तियों के लिये है। ऑकड़ों के विश्लेषण के लिए SPSS-17 साफ्टवेयर का प्रयोग किया है। जिसमें शोधकर्ता ने दो समूहों की मध्य तुलना करने के लिए t-टेस्ट तथा दो से अधिक समूहों की तुलना के लिए प्रसरण विश्लेषण का प्रयोग किया है। शोध अध्ययन में प्रयुक्त मध्यमान, मानक विचलन एवं मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता तथा t-अनुपात की व्याख्या की है। **सारणी संख्या-01**

उद्देश्य-1 बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक -आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान, मानक विचलन एवं टी0 अनुपात	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मान
	छात्र	100	13.120	6.120	1.477(0-05 सार्थकता स्तर पर सार्थक)
	छात्रा	100	14.320	6.224	

उद्देश्य- 2 बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान, मानक विचलन एवं टी0 अनुपात	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानकविचलन	टी-मान
	छात्र	100	17.790	5.763	1.082 (0-05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)
	छात्रा	100	18.750	6.718	

उद्देश्य-3 बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान, मानक विचलन एवं टी0 अनुपात	विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानकविचलन	टी-मान
	छात्र	100	20.370	3.570	1.877(0-05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)
	छात्रा	100	21.370	3.577	

सारणी संख्या 01 के अवलोकन से यह ज्ञात है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 1.477 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक है जिससे शून्य परिकल्पना ''बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है। स्वीकृत हो जाती है और शोध परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है। अस्वीकृत हो जाती है। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी संख्या 01 के अवलोकन से यह ज्ञात है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 1.082 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक है जिससे शून्य परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है।, स्वीकृत हो जाती है और शोध परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है। अस्वीकृत हो जाती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी संख्या 01 के अवलोकन से यह ज्ञात है कि बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 1.877 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक है जिससे शून्य परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है।, स्वीकृत हो जाती है और शोध परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है। अस्वीकृत हो जाती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी संख्या-02

उद्देश्य-4 बी0 एड0 स्तर के छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान, मानक विचलन	वर्ग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
	निम्न	100	13.107	6.120
	मध्यम	100	17.880	5.863
	उच्च	100	20.380	3.510

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित प्रसरण विश्लेषण	श्रोत	वर्गयोग	मुक्तांश	मध्यवर्गयोग	F मान
	समूह के मध्यम	2744.607	2	1372.303	48.911 (0-05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)
	समूह के अन्दर	8332.580	297	28.056	
	योग	11077.187	299		

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक –आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान	समूह	मध्यमानअन्तराल	मानकत्रुटि	टी-मान
	निम्न-मध्यम	4.790	.847	5.656*
	मध्यम-उच्च	2.500	.683	3.660*
	उच्च-निम्न	7.290	.705	10.340*

(0-05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)

सारणी संख्या-02 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 13.107 मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 17.880 से कम है तथा उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 20.380 है अर्थात् बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर है।

सारणी संख्या-02 से प्राप्त बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि के सन्दर्भ में परिगणित f-अनुपात का मान 48.911 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना कि ''बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है।' को अस्वीकार किया जाता है, तथा शोध परिकल्पना ''बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है।, को स्वीकार किया जाता है अर्थात् .05 सार्थकता स्तर पर यह कहा जा सकता है कि बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता में सार्थक अन्तर होता है तथा बी0एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है।

सारणी संख्या-02 से स्पष्ट है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों के लिये परिगणित टी-अनुपात का मान 5ण्656 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर है' को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है।

बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 3.660 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि' को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है।

बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों का परिगणित टी-अनुपात का मान 10.340 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है, अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है और कहा जा

सकता है कि बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है। **सारणी संख्या-03**

उद्देश्य-5 बी0एड0 स्तर के छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

	वर्ग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान व मानक विचलन	निम्न	100	14.390	6.214
	मध्यम	100	18.850	6.618
	उच्च	100	21.330	3.567

	श्रोत	वर्गयोग	मुक्तांश	मध्य वर्गयोग	F मान
बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित प्रसरण विश्लेषण	समूह के मध्यम	2473.520	2	1236.760	38.991 (0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)
	समूह के अन्दर	9420.650	297	31.719	
	योग	11894.170	299		

	स्मूह	मध्यमान अन्तराल	मानक त्रुटि	टी-मान
बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान	निम्न-मध्यम	4.460	.907	4.917*
	मध्यम-उच्च	2.480	.751	3.302*
	उच्च-निम्न	6.940	.716	9.692*

(0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)

सारणी संख्या-03 से स्पष्ट है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 14.390 मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 18.850 से कम है तथा उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 21.330 पाया गया है अर्थात् बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर पाया गया।

सारणी संख्या-03 से प्राप्त बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि के सन्दर्भ में परिगणित एफ-अनुपात का मान 38ण्991 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अतः :ून्य परिकल्पना कि ''बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है', को अस्वीकार किया जाता है, तथा शोध परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है।, को स्वीकार किया जाता है अर्थात् .05 सार्थकता स्तर पर यह कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता में सार्थक अन्तर होता है तथा बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है।

सारणी संख्या-03 से स्पष्ट है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों के लिये परिगणित टी-अनुपात का मान 4ण्917 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् :ून्य

परिकल्पना कि ' बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर है' को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है,।

बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 3.302 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है।

बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों का परिगणित टी-अनुपात का मान 9.692 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है, अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है।

सारणी संख्या-04

उद्देश्य-6 बी0 एड0 स्तर के विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि पर उनके सामाजिक - आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक -आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमान व मानक विचलन		संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
	निम्न	200	13.745	6.186
	मध्यम	200	18.370	6.255
	उच्च	200	20.860	3.561

बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक -आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित प्रसरण विश्लेषण	श्रोत	वर्गयोग	मुक्तांश	मध्य वर्गयोग	F मान
	समूह के मध्यम	5214.263	2	2607.132	86.823(0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)
	समूह के अन्दर	17926.695	597	30.028	
	योग	23140.958	599		

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक -आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान	स्मूह	मध्यमान अन्तराल	मानक त्रुटि	टी-मान
	निम्न-मध्यम	4.625	.622	7.435*
	मध्यम-उच्च	2.490	.508	4.901*
	उच्च-निम्न	7.115	.504	14.117*

(0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक)

सारणी संख्या-04 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 13.745 मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 18.370 से कम है तथा उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि का मध्यमान 20.860 पाया गया है अर्थात् बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर पाया गया।

सारणी संख्या-04 से प्राप्त बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि के सन्दर्भ में परिगणित एफ-अनुपात का मान 86.823 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना कि ''बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं होता है।' को अस्वीकार किया जाता है, तथा शोध परिकल्पना ''बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है।, को स्वीकार किया जाता है अर्थात् .05 सार्थकता स्तर पर यह कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता में सार्थक अन्तर होता है तथा बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है।

सारणी संख्या-04 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों के लिये परिगणित टी-अनुपात का मान 7. 435 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर है' को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0एड0 स्तर के निम्न एवं मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है।

बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान 4.901 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है अर्थात् :ून्य परिकल्पना कि 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है तथा शोध परिकल्पना 'बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर है' को स्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है।

बी0एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों का परिगणित टी-अनुपात का मान 14.117 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है, अर्थात् शून्य परिकल्पना कि 'बी0एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है और कहा जा सकता है कि बी0एड0 स्तर के उच्च एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमानों में सार्थक अंतर होता है।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध अध्ययन के निष्कर्षो को निम्नांकित रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है- बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान के असार्थक होने से बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर की छात्रों तथा बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि में दृष्टिगत अन्तर के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है अर्थात् बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान के असार्थक होने से बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर की छात्रों तथा बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि में दृष्टिगत अन्तर के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है अर्थात् बी0 एड0 स्तर के मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित टी-मान के असार्थक होने से बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर की छात्रों तथा बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि में दृश्टिगत अन्तर के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में अन्तर होता है अर्थात् बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के छात्र-छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर पाया गया। बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्रों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि उच्च सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले छात्र मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें छात्रों की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाले होते है तथा यह पाया गया कि मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले छात्र निम्न सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें छात्रों की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाले होते है। इस प्रकार हम कह सकते है कि छात्रों का सामाजिक, आर्थिक स्तर उनके संवेगात्मक बुद्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करता हैं।

बी0 एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर पाया गया। बी0 एड0 स्तर के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0 एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्राओं के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है। इससे यह स्पश्ट होता है कि उच्च सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले छात्राओं मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें छात्राओं की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाले होते है तथा यह पाया गया कि मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वाली छात्राएं निम्न सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें छात्राओं की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाली होती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि छात्राओं की सामाजिक, आर्थिक स्तर उनके संवेगात्मक बुद्धि को सार्थक रुप से प्रभावित करता हैं।

बी0एड0 स्तर के निम्न, मध्य एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले प्रशिक्षणार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि से सम्बन्धित मध्यमानों में अन्तर पाया गया। बी0एड0 स्तर के उच्च

सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले प्रशिक्षणार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि क्षमता बी0एड0 स्तर के निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले प्रशिक्षणार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि क्षमता से अधिक होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि उच्च सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले प्रशिक्षणार्थियों मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें प्रशिक्षणार्थियों की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाले होते है तथा यह पाया गया कि मध्यम सामाजिक, आर्थिक स्तर वाली विद्यार्थी निम्न सामाजिक, आर्थिक स्तर वालें प्रशिक्षणार्थियों की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक बुद्धि वाली होती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि प्रशिक्षणार्थियों की सामाजिक, आर्थिक स्तर उनके संवेगात्मक बुद्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करता हैं।

सहायक ग्रंथ-

- आइ0 के0, सूथर (1981), ''ए स्टडी ऑफ क्लास रूम बिहैवियर ऑफ टीचर ट्रेनीज इन द कनटेस्ट ऑफ सम परसनॉलिटी वैरियेवलस,'' पी0एच0डी0, एजुके-न, सरदार पटेल : सरदार पटेल विश्वविद्यालय।
- आर, लिंगटन (1977) ''माध्यमिक विद्यालय के छात्रों का व्यावसायिक अभिरूचि का अध्ययन'', कोलम्बिया : कोलम्बिया विश्वविद्यालय।
- आर0पी0, गुप्ता, (1979), ''ए स्टडीज ऑफ सम फैक्टरस कन्सीडर टू बी हेल्पफल इन क्लास टीचिंग,'' पी0एच0डी0, एजुकेशन, लखनऊ : लखनऊ विश्वविद्यालय।
- आर0 डी0, सिंह, (1979), ''सिमुलेटेड सोसल स्किल ट्रेनिंग एण्ड मॉडिफिकेशन ऑफ टीचर क्लास रूम बिहैवियर,'' पी0एच0डी0, एजुकेशन, गोरखपुर : गोरखपुर विश्वविद्यालय।
- सोनकर, कुमार दीपक (2009) बी0 एड0 में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के मूल्यों पर सामाजिक आर्थिक स्तर के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन, इलाहाबाद : नेहरु ग्राम भारती विश्वद्यिालय।
- जी0एम0, कक्कड़, (1989) ''माध्यमिक शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम और विकासशील शिक्षक कार्यक्रम एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन,'' पी0एच0डी0, एजूकेशन, नागपुर : नागपुर विश्वविद्यालय।
- जे0सी0, बनर्जी, (1998), ''भारत के प्राथमिक स्कूल के अध्यापकों का प्रषिक्षण एवं अध्ययन'' पी0एच0डी0, शिक्षा।
- जैन एस0 डी0 उद्धृत सोनकर, डी0के0 (2009) लघु शोध, अनुसूचित जाति व पिछडे वर्ग के विद्यार्थियों के अपने मूल्यों से संबंधित अध्ययन, इलाहाबाद : नेहरु ग्राम भारती विश्वविद्यालय।
- द्विवेदी, के0 (1980) उद्धृत सोनकर, डी0के0 (2009) लघु शोध, निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों का जीवन स्तर, इलाहाबाद : नेहरु ग्राम भारती विश्वविद्यालय।
- दास, बी0एन0, (2003), ''प्रिसिंपल ऑफ एजूके-न,'' हैदराबाद : नीलकमल पब्लिकेशन प्रा0लि0, पृ0124-132।
- दास, बी0एन0, (2003), ''टीचर एण्ड एजूकेशन इन द इमर्जिंग इण्डियन सोसाइटी,'' हैदराबाद : नीलकमल पब्लिकेशन प्रा0लि0, वाल्यूम-2 पृ0621-644।
- वाजपेयी, एल0बी0 (2003) 'शिक्षा में नवाचार एवं तकनीकी', इलाहाबाद : आलोक प्रकाशन, लखनऊ।
- वुच, एम0 बी0 III सर्वे ऑफ रिसर्च इन ऐजुकेशन नई दिल्ली एन0सी0इ0आर0टी0।
- वुच, एम0बी0 (vi) सर्वे ऑफ रिसर्च इन ऐजुकेशन नई दिल्ली एन0सी0इ0आर0टी0। (वैल्यूम-संस्करण)
- वुच, एम0बी0 ट सर्वे ऑफ रिसर्च इन ऐजुकेशन नई दिल्ली एन0सी0इ0आर0टी0।
- वेंस, एच0 ई0 डी0 (1974) एन एक्स्लारेटरी स्टडी इन वैल्यू क्लारिफिकेशन एंड इट्स रिलेशनशिप टू ए मोर यूनीफाइड वैल्यू इंग प्रोसेस, न्यूयार्क : डिजर्टेशन एब्स्ट्रैक्ट इंटरनेशनल।
- वेस्ट, जे0डब्ल्यू0, (2005), ''रिसर्च इन एजूकेशन,'' नई दिल्लीः पियरसन प्रिंटिस हाल।
- शर्मा, आर0ए0, (2003), ''अध्यापक शिक्षा,'' मेरठ : लायल बुक डिपो।
- लाल, रमन बिहारी (2002-03) शिक्षा सिद्धान्त, मेरठः रस्तोगी पब्लिकेशन।
- सिंह, श्यामधर (1995) समाजशास्त्र के सिद्धांत, वाराणसी : वाराणसी प्रकाशन मंदिर।
- सिंह, डा0 रामपाल एवं शर्मा, डा0 ओ0पी0 (2007) शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन।
- सिंह, डॉ0 रामपाल एवं शर्मा डॉ0 ओ0पी0, शैक्षिक अनुसंधन एवं सांख्यिकी, आगरा, अग्रवाल पब्लि, 2007-08.
- सिंह, अरुण कुमार (2006) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, नई दिल्ली : नरेश जैन प्रकाशन।
- सिन्हा एवं दास (1959) छात्रों के व्यावसायिक अध्ययन में रुचि का अध्ययन, आगरा : अग्रवाल प्रकाशन।
- हावेल, ई0ए0 (1958), मैन इन द प्रीमिटिव वर्ल्ड, न्यूयार्क : मैक्ग्रा हिल बुक पब्लिकेशस।

डॉ0 अजय प्रकाश तिवारी
सह आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उ0प्र0।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-89-94
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

शिक्षण, अधिगम और मूल्यांकन में नवाचार

अरूणा श्रीवास्तव

शिक्षण, अधिगम और मूल्यांकन में कई नवाचार हो चुके हैं। इन नवाचारों के माध्यम से उच्चशिक्षा की गुणवत्ता में सुधार आया है। यह सुधार कई रूपों के माध्यम से परिलक्षित होता है। उदाहरणार्थ- छात्रों के लिए विभिन्न सेमिनार और संगोष्ठी का आयोजन करना। सूचना एवं संप्रेषण तकनीक (आई0सी0टी0) के माध्यम से छात्रों के लिए पुस्तकालय की सुविधा जिसमें इण्टरनेट, श्रव्य-दृश्य सामग्री और कम्प्यूटर की सुविधा भी हो। छोटे तथा बड़े सभी छात्रों के लिए ई-लर्निंग, ई-लाइब्रेरी, तथा स्मार्ट-क्लासेस की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

महत्त्व- 1. मन्द, औसत और तीव्र बुद्धि के छात्रों के स्तर के कारण सीखने में बाधा नहीं आती हैं। **2.** छात्र अपने कार्य का स्वयं परीक्षण करते है सदैव सक्रिय रहते हैं। यह छात्र को मानसिक स्वक्रिया करने हेतु प्रेरित करता है।

शिक्षण की अभिनव (नवीन) विधियां आजकल प्रयोग में लाई जा रही है। ये शिक्षण के क्षेत्र में नयी खोजे हैं। इनके प्रयोग से शिक्षण को प्रभावशाली और आसानी से ग्राह्य बनाया जाता है। **शिक्षण की अभिनव विधियाँः-** ***1.****अभिकमायोजित शिक्षण* ***2.*** *पत्राचार प्रणाली* ***3.*** *जन संचार माध्यम द्वारा शिक्षण* ***4.*** *शिक्षण के प्रतिमान* ***5.*** *शैक्षिक तकनीकी और उसकी विधियां।*

अभिकमायोजित शिक्षणः- इसके प्रणेता **मिडली एल0 प्रेन्से** है। यह व्यक्तिगत शिक्षण की एक ऐसी विधि है, जिसमें छात्र सक्रिय रहता है और अपनी गति से आगे बढ़ता है। इस हेतु पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, षटमासिक परीक्षायें ली जाती हैं और प्राप्तांक वार्षिक परीक्षा में जोड़े जाते हैं। **अनवरत मूल्यांकन की आवश्यकता**- 1- इससे शिक्षक को उसके विद्यार्थियों के अधिगम के निरन्तर विकास का अभास होता है। 2- शिक्षक को छात्रों के लिये निर्धारित उद्देश्यों-ज्ञान, अवबोध, कौशल आदि के समुचित विकास का ज्ञान होता है। 3- निश्चित समयावधि के अन्त में निर्धारित पाठ्यक्रम में छात्र अधिगम व निष्पत्ति का ज्ञान होता है।

पत्राचार प्रणाली- शिक्षा और आर्थिक विकास के महत्व को ध्यान मे रखते हुए संविधान में *सबके लिये शिक्षा के समान अवसर देने का महत्वपूर्ण संकल्प निहित है।* शिक्षाविदों ने विभिन्न प्रयोग, अनुभव, चिंतन द्वारा कहा की दूर शिक्षा को औपचारिक शिक्षा प्रणाली के पूरक विकल्प के रूप में प्रतिस्थापित किया जाये। विविध शैक्षिक पृष्ठभूमि, विभिन्न भौगोलिक अंचलों में बिखरे विद्यार्थियों कोऐसी विद्या प्रदान की जाय जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी का सीधा सम्पर्क न्यूनतम रहता है तथा जिसके अन्तर्गत उच्च कोटि की अधिगम सामग्री के निर्माण, उत्पादन, सम्प्रेषण के तकनीकी प्रौद्योगिक माध्यमों का प्रयोग होता है इसमें शैक्षिक अवसरों की सार्वभौमिकता, लचीलापन मुख्य है। यह मुक्त, सर्वसुलभ, मितव्ययी शिक्षा प्रणाली है। यह शिक्षा को सार्वजनिक स्वरूप प्रदान करने की सर्वाधिक सशक्त व्यवस्था है।

आवश्यकताः- जनसंख्या का 20% छात्र संस्थागत (Regular) परीक्षार्थी के रूप में शिक्षा प्राप्त करता है और 80% छात्र इससे वंचित है। सबके लिये शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य की पूर्ति हेतु यह व्यवस्था अपनायी गयी। इसके लिये जनपदीय पत्राचार शिक्षा केन्द्र स्थापित किया गया हैं। इसमें सम्पर्क कक्षाएं वर्ष में दो बार आयोजित की जाती है।

जन संचार माध्यमों द्वारा शिक्षा- वह संप्रेषण साधन जिसमें व्यक्ति की अनुपस्थिति में छपी हुई सामग्री, आवास (रेडियो) अथवा श्रव्यदृश्य सामग्री (दूरदर्शन) द्वारा संम्प्रेषण होता है। जनसंचार साधन कहते हैं। उनके द्वारा एक ही समय पर अनगिनत व्यक्तियों को एक साथ संप्रेषण होता है। यह प्रक्रिया विश्व को एक सूत्र में बांधती है। समाचार पत्र, पत्रिकाएं रेडियो, टी0पी0 के अभाव में हमारा शरीर बिन आंख, कान का हो जाता है। **चीनी कहावत है-** *एक बार देखना हजार बार सुनने से अधिक उत्तम है।* **Fowler** के अनुसार- *एक चित्र बहुधा इतने विचार प्रस्तुत कर देता है जो कई पुस्तकों से अधिक होते हैं।*

संचार के माध्यमः- 1. लोकनृत्य, कठपुतली, नौटंकी **2.** चित्र तथा फोटोग्राफ 3. पोस्टर चार्ट 4. दीवार पर लिखना 5. फलैनेल ग्राफ 6. फलैश कार्ड 7. बुलेटिन तथा समचार पत्र 8. पाक्षिक और मासिक पत्रिका 9. रेडियो-टेलीविजन 10. सचित्र साहित्य।

जनसंचार माध्यमों द्वारा हेतु निम्नलिखित साधन अपनाये जाते हैं- *1. पत्र पत्रिकाएं 2. समाचार पत्र 3.पत्राचार 4.कठपुतली प्रदर्शन 5.प्रोजक्टर और स्लाईड 6.कैसेट्स 7.कम्प्यूटर 8. रेडियो 9.टी0वी0 10.उपग्रह 11.सिनेमा तथा डाक्यूमेन्टरी फिल्म 12.रिकार्डस 13.शैक्षिक दूरदर्शन 14-शैक्षणिक दूरदर्शन* (Instructional Television) 15.उपग्रह शैक्षणिक दूरदर्शन प्रयोग (Site Satellite Television)।

शिक्षण के प्रतिमान- यह वास्तव में शिक्षण प्रारूप है। यह शिक्षण प्रक्रिया में पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विभिन्न, क्रियाओं, विधियों, प्रविधियों युक्त एक गतिशील एवं बहुमुखी प्रक्रिया है। इसमें प्रेरक, पर्यावरण द्वारा विकसित किया जाता है जिसके प्रति प्रतिक्रया करके बालक वांछित व्यवहार परिवर्तन की ओर अग्रसर होता है।

शैक्षिक तकनीकी- शैक्षिक अधिगम और प्रशिक्षण के प्रयोग से शिक्षण विधि को रोचक, ग्राह्य और सरल बनाते हैं। इस प्रकार शैक्षिक तकनीकी वैज्ञानिक विधि से निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शैक्षिक निकाय के निर्माण, कार्यान्वयन एवं मूल्यांकन को कहते हैं।

शिक्षा तकनीकी के तीन उपागम है- 1. हार्डवेयर उपागम 2. सॉफटवेयर उपागम 3. प्रणाली विश्लेषण।

1- हार्डवेयर उपागम- इसके अन्तर्गत शिक्षण में अभियन्त्रण की मशीनों का प्रयोग किया जाता है। (A) श्रव्य (Audio) व्यक्ति का कंठ, सूचना भेजने वाला, ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर तथा भाषा प्रयोगशाला में प्रयुक्त होने वाले साधन, स्टीरियो सिस्टम, रेडियो, टेलीफोन सिस्टम। (B) दृश्य (Visual) मुर्दित सामग्री को देखने के लिये पाठक की आंखे, मुद्रण हेतु मशीनें। (C) दृश्य (अप्रक्षेपित, द्वि0 विभा0 वाले) ब्लैक बोर्ड, रोल अप बोर्ड, फलेनल बोर्ड, मैग्नेटिक बोर्ड, नोटिस बोर्ड, चाक, क्रेयान आदि। (D) दृश्य (प्रक्षेपित अचल) (Visual projected still)- स्लाइड प्रोजेक्टर, फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर ओवरहेड प्रोजेक्टर, माइक्रोइमेज सिस्टम, माइक्रो रीडर, एपीडायास्कोप-ओपेक प्रोजोक्टर। (E) दृश्य (प्रक्षेपित चल)- फिल्म प्रोजेक्टर, टेलीवजन रिसीवर क्लोस्ट सर्किट, टेलीविजन सिस्टम, वीडियो प्लेयर एण्ड रिकार्डर। (F) नवीन माध्यम- टेलीफोन, टेलीविजन, कॉपेक्ट डिस्क प्लेयर (C.D. Player)

(2) **साफटवेयर उपागम-** इस तकनीकी में मशीनों का प्रयोग न करके शिक्षण सूत्रों, सीखने के नियमों का प्रयोग छात्रों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लोने हेतु किया जाता है। (A) श्रव्य (Audio) सूचना भेजने वाले व्यक्ति की आवाज, ग्रामोफोन रिकार्ड, आडियो, स्टीरियों टेप रिकार्ड। (B) दृश्य (शाब्दिक मुद्रित)- अभिक्रमित पाठ्य पुस्तकें, सहायक पुस्तकें, संदर्भ पुस्तकें, ज्ञानकोश या विश्वकोश, पत्र पत्रिकाएं तथा समाचार पत्र। (C) दृश्य (अप्रक्षेपित, द्वि0 विभा0)- चित्र, ब्लैक

बोर्ड, या रोलर बोर्ड, फनैनल बोर्ड, नक्शे, चार्ट, पोस्टर, ग्राफ। (D) दृश्य (अप्रक्षेपित-त्रिविमीय)- मॉडल, ग्लोब, या एटलस, नमूने, कठपुतली। (E) दृश्य (प्रक्षेपित और स्थिर)- स्लाइडस, फिल्म स्ट्रिप्स, ओवर हेड ट्रांसपरेंसी, माइक्रोइमेज सिस्टम। (F) श्रव्य दृश्य (प्रक्षेपित चल)- फिल्म, टेलीविजन पर प्रसारित शैक्षिक कार्यक्रम, क्लोस्ड सर्किट टी0वी0, वीडियों कैसेट। (G) छोटे समूह- सामूहिक परिचर्चा, सेमिनार, नाटक, रोड प्ले। (H) मल्टीमीडिया पैकेज- स्लाइड टेप, समक्रमण, स्लाइड टेप वर्क बुक, रेडियो स्लाइड या पोस्टर, सामूहिक परिचर्चा, शिक्षक भाषण।

(I) नवीन माध्यमः- 1. टेली कान्फ्रेसिंग (टेलीफोन पर सामूहिक परिचर्चा) 2. केबिल टेलीविजन (पृष्ठ पोषण संभव हो)। 3. सेटेलाइट टेलीविजन/सम्प्रेषण सेटेलाइट। 4.कम्प्यूटर इन्टरनेट। 5. काम्पैक्ट डिस्क (C.D.)।

(3) **प्रणाली विश्लेषण उपागम-** यह उच्च परिष्कृत गणितिय तकनीकों पर आधारित है। यह शैक्षिक प्रशासन और प्रबंधन को वैज्ञानिक देता है। तथा शैक्षिक समस्याओं का समाधान वैज्ञानिक विधि से डाटा के आधार पर करता है। (a) **भाषा प्रयोगशाला-** यह एक प्रयोगशाला है जहाँ प्रत्येक विद्यार्थी को बैठने का स्थान या बूथ होता है। जिस पर एक एक हैंडसेट फिट होता है जिस पर इयरफोन और माइक्रोफोन लगे होते हैं। जो केन्द्र में बैठे भाषा शिक्षक के केसोल मेज से जुड़े रहते हैं। केन्द्र के मास्टर कंसोल पर टेप रिकार्डर या सी0डी0 प्लेयर के माध्यम से पाठ्यपुस्तक विद्यार्थियों को जो अलग-अलग बूथ पर बैठे है। प्रसारित किये जाते हैं। (b) **शैक्षिक दूरदर्शन-** शैक्षिक दूरदर्शन विद्यार्थियों की शैक्षिक सम्प्राप्ति को उन्नत बनाने में, विज्ञान आदि विषयों में रूचि उत्पन्न करने, सामान्य ज्ञान का विकास करने में शिक्षकों के शिक्षण स्तर में सुधार करने का प्रभावशाली माध्यम है। (c) **उपग्रह अनुदेशनात्मक दूरदर्शन प्रयोग (SITE)-SITE** के प्रारम्भ के साथ साथ शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों में नवाचार हुआ। इनका उद्देश्य शैक्षिक दूरदर्शन को राष्ट्रीय विकास कार्यक्रमों से जोड़ना तथा सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को शिक्षित करना है। (d) **भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह (INSAT):-** भारत का पहला INSAT-1 सन् 1962 में अंतरिक्ष में स्थापित किया गया, सफल नहीं रहा। 1983 में INSAT-1B सफल रहा। इसके द्वारा 5-11वर्ष के बालक बालिकाओं के लिये शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों का प्रसारण शुरू हुआ। (e) **क्लोज्ड सर्किट दूरदर्शन (CCTV):-** इस योजना के अन्तर्गत केबिल की सहायता से विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु भेजी जाती है। (f) **कम्प्यूटर की सहायता से अनुदेशन (CAI):-** सूचना संचार तकनीकी (ICT):- कम्प्यूटर की सहायता से अनुदेशन, सूचना व संचार तकनीकी का एक हिस्सा है। ICT के विकास ने CAI में कम्प्यूटर के साथ साथ मुद्रित माध्यम, टेलीफोन, रेडियों, वीडियो आदि को समाकलित कर इन्फारमेशन सुपर हाइवे का विकास किया गया है जिसका अच्छा उदाहरण इंटरनेट ही है।

शिक्षा में सूचना संचार तकनीकीः- 'शिक्षा तकनीकी का पर्याय ही सूचना संचार तकनीकी बन गई है। यूनेस्कों में शिक्षा में तकनीकी की अर्न्तराष्ट्रीय संस्था *इन्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नालाजी इन एजूकेशन* की स्थापना की है जो ICT से सम्बन्धित नीतियों, शैक्षिक प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रमों को देख रही है। यूनेस्कों का क्षेत्रीय आफिस 'बैकांक' एशिया पैसिकिक क्षेत्र में शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सूचना संचार तकनीकी के प्रयोग को प्रोत्साहित कर रहा है।

भारत वर्ष में सूचना संचार तकनीकी का शिक्षा में प्रयोगः- भारत वर्ष में सन् 1991 में यू0जी0सी0 ने इन्फार्मेशन एण्ड लाइब्रेरी नेटवर्क नाम की योजना शुरू की थी जो विश्वविद्यालयों के सूचना केन्द्रों और लाइब्रेरी को जोड़ने वाला कम्प्यूटर कम्यूनिकेशन नेटवर्क था। इसने एक केन्द्रीय डेटावेस तैयार किया है जिसमें उपरोक्त संस्थाओं से सम्बन्धित सूचनायें या आंकड़े भरे गये हैं। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE) ने सूचना संचार तकनीकी से सम्बन्धित पाठ्यक्रम के

लिये विभिन्न काम्पेक्ट डिस्क का विकास किया है। पूरे भारत वर्ष में शिक्षक प्रशिक्षकों को सूचना संचार तकनीकी साक्षरता प्रदान करने के लिये शिविरों का आयोजन किया जा रहा है और पाठ्यक्रम में ICI को केन्द्रीय विशय के रूप में ग्रहण करें। CASE ने BED स्तर पर 2002-03 में अनिवार्य विषय के रूप में ICT को पाठ्यक्रम में शामिल करने का प्रस्ताव दिया है।

भारत वर्ष में शिक्षण संस्थाओं में यदि कम्प्यूटर प्रयोगशालाएं और ICT प्रयोगशालाएं है भी तो प्रयोग के लिये नहीं। विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा के शिक्षकों के ओरियन्टेशन और पुनश्चर्या कार्यक्रमों का संचालन करने वाले एकेडकिम स्टाफ कालेजों के पास भी ICT से सम्बन्धित सुविधायें नहीं है। शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों के साथ ICT को समाकलित करना होगा।

(B) **अधिगम (सीखना) में नवाचारः- मैंक कॉनेल** के अनुसार- *व्यवहार में यह प्रगति-ील परिवर्तन जो एक ओर किसी परिस्थति के कनिक प्रस्तुतीकरण से और दूसरी और उसके प्रति प्रभावी ढंग से प्रतिक्रिया करने के लिये व्यक्ति के बार बार के प्रयास से सम्बन्धित होता है सीखना कहलाता है।*

सीखने की प्रक्रिया के तीन सोपान हैं- प्रेरणा, बाधा और उद्देश्य। सीखने की प्रक्रिया में 'सबलीकरण' बहुत आवश्यक है। व्यक्ति असफल प्रक्रियाओं को छोड़ देता है और भविष्य में वैसी ही परिस्थिति आने पर सफल प्रक्रिया की ही पुनरावृत्ति करता है।

सीखने की (अधिगम) विधियांः- *करके सीखना निरीक्षण करके सीखना, परीक्षण करके सीखना, वाद-विवाद विधि, वाचन विधि, अनुकरण विधि प्रयास एवं त्रुटि विधि आदि।* इनका प्रयोग कक्षा में पढ़ाते समय करने से पाठ अधिक रोचक तथा सीखने में सरल हो जाता है।

आज के मनोवैज्ञानिक युग में अधिगम के कई सिद्धान्त है। *1.अनुकरण द्वारा सीखना। 2.उद्दीपन अनुक्रिया सिद्धान्त या प्रयत्न और भूल द्वारा। 3.अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त। 4. गेस्टाल्ट सिद्धान्त। 5. पुनर्बलन का सिद्धान्त। 6. अनुकरण में व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की क्रियाओं को देखकर सीखता है नृत्य, संगीत, खेल आदि की शिक्षा में यह उपयोगी है।*

2- प्रयत्न और भूल सिद्धान्त- थार्नडाइक ने कहा कि *उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्राणी प्रयत्न करता है और एक समय आता है जब भूले बहुत कम होती है और वह सीख जाता है। यह प्रयोग पशुओं, बिल्ली, चूहा, मुर्गियों पर किया गया। भूखी बिल्ली ने कई बार प्रयास करके पिजड़े से भोजन प्राप्त किया। यह प्रयोग छोटे बच्चों के चलने सीखने, गणित, विज्ञान भाषा सीखने के काम में आता है।*

3- अनुकूलित अनुक्रिया या नियंत्रित प्रतिक्रिया सिद्धान्त- इसका प्रयोग **पॉयलव** ने कुत्ते पर किया किसी उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित होना अनुकूलन कहलाता है। कुत्ते को भोजन देने पर लार टपकाना स्वाभाविक क्रिया है और घंटी बजाने पर कान खड़े होना। पर घंटी बजाने पर लार टपकना जब कि भोजन नहीं दिया गया एक अनुकूलित प्रतिक्रिया है। स्वाभाविक उत्तेजना का प्रतिस्थापना वांछित प्रतिक्रिया से हो गया।

शिक्षा में उपयोग- मन्दबुद्धि बालकों को पढाने में यह सिद्धान्त उपयोग किया जाता है। गंभीर चिन्तन वाले विषयों गणित, विज्ञान, दर्शन, समस्या समाधान में यह उपयोगी है। निम्न मानसिक स्तर पर काम आता है।

4. गेस्टाल्ट सिंद्धान्त या अन्तर्दृष्टि या सूझ सिद्धान्तः- कोहलन द्वारा चिम्पैन्जी को केले देकर किया गया। पहले वह प्रयत्न और भूल का सहारा लेता है फिर इसमें धीरे धीरे सुधार करके एवं सोचकर वह समस्या का हल खोज लेता है। यह उच्च मानसिक योग्यता वाले प्राणियों में होता है।

(अ) शिक्षा में उपयोग यह सिद्धान्त बालक के द्वारा स्वयं परिस्थितियों को अवलोकन करने और सूझ द्वारा खोज करके सीखने पर बल देता है।

(ब) यह सिद्धान्त बुद्धि, सृजनात्मकता कल्पना, तर्कशक्ति का विकास करने में उपयोगी सिद्ध होता है।

5. पुनर्बलन का सिद्धान्त- सी0 एल0 हल ने कहा कि *जीव की आवश्यकतायें उसे व्यवहार करने के लिये प्रेरित करती है। जो व्यवहार उसकी आवश्यकताओं को कम करता है जीव उस व्यवहार को सीख लेता है।* यह सिद्धान्त छात्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। सीखना तब ही सार्थक होता है जब कि वह छात्रों की आवश्यकताओं को पूरा करें।

सीखने में स्थानान्तरण- सीखने में यह बहुत महत्त्वपूर्ण है जिसके परिणामस्वरूप वे नवीन बातों को सरलता व शीघ्रता से सीख लेते है। पाठ्यक्रम निर्माण में अन्तरण विशेष महत्वपूर्ण है।

आध्यापक के लिये अन्तरण का महत्व- जब एक विषय, कार्य में अर्जित ज्ञान किसी दूसरे विषय के सीखने में काम आये तो इसे अन्तरण कहते हैं। अध्यापक को अपने छात्रों को सामान्य सिद्धान्तों का ज्ञान देना चाहिए पढ़ाए प्रकरण के लिये पूर्व ज्ञान को देख लेना चाहिये।

सीखने में अभिप्रेरणा आवश्यकः- अभिप्रेरणा का प्रयोग करके अध्यापक सीखने की प्रक्रिया को अधिक अच्छे ढंग से कर सकता है। यह पुरस्कार व दण्ड दो रूप में दिया जाता है। इससे लाभ और हानियां दोनो हैं। इस प्रकार सीखने में हम नये मनोवैज्ञानिक खोजो, सिद्धान्त को लागू करके शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सफल बना सकते हैं।

(ब) **मूल्यांकन में नवाचार**- मूल्यांकन विधि का प्रयोग शिकागों विश्वविद्यालय के शिक्षाशास्त्री **डॉ0 बी0एस0ब्लूय** ने 1978 में आरम्भ किया।

जे0डब्लू0 राइटस्टोनः- मूल्यांकन एक नवीन प्रविधिक पद है जिसका प्रयोग मापन की जाच एवं परीक्षाओं की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप से व्यक्त करने हेतु किया जाता है।

मूल्यांकन के क्षेत्र में कुछ नयी तकनीकों, विधियों का प्रयोग किया गया है।

1- निबंधात्मक परीक्षणों के स्थान पर वस्तुनिष्ठ परीक्षकों को रखा जाय। ये निबंधात्मक परीक्षण वैध नहीं हैं क्यों कि शैक्षिक उद्देश्य को पूरी तरह पूर्ण नहीं करते हैं उत्तर देने तथा अंकन करने में अधिक समय लेता है अंकन करने में आत्मनिष्ठता है। इसकी विश्वविद्यालय और बैधता वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की अपेक्षा कम है।

परम्परागत परीक्षा पद्धति में अनेक दोष है अतः परीक्षार्थी की योग्यता का उचित मूल्यांकन नहीं हो पाता अतः ठीक ढंग से मूल्यांकन हेतु मुख्य विधियां पांच है।

इनका प्रयोग करके मूल्यांकन प्रणाली को प्रभावी बनाया जा सकता है।

1.प्रश्न बैंक 2.श्रेणी निर्धारण (ग्रेडिंग) 3.सैमेस्टर 4.आन्तरिक मूल्यांकन 5.शिक्षा में कम्प्यूटर का उपयोग।

1. प्रश्न बैंकः- इसमें हर प्रकार के प्रश्न होते है जिस तरह के प्रश्नों की आवश्यकता छात्रो की प्रगति के मूल्यांकन हेतु आवश्यक होती है वे प्राप्त किये जाते हैं।

प्रश्न बैंक योजना के कार्यान्वयन में कठिनाईयां भी है। 1. कैसे प्रश्न रखे जाएं, प्रश्न प्रकार, शीर्षक, निर्धारित अंक क्यों हों। 2. छात्रों को प्राप्त होने वाले अनुभवों का क्या स्वरूप है। 3. सबसे बड़ी समस्या प्रश्न बैंक की व्यवस्था से सम्बन्धित है। 4. प्रश्नों की कुंजी होना अनिवार्य है।

2. श्रेणीकरण (ग्रेडिंग):- वर्तमान शिक्षा प्रणाली को अनुपयोगी और व्यवहारिक बताते हुये यू0जी0सी0 ने विश्वविद्यालय के अंक पत्रों के अंकन से पाया कि 50 प्रतिशत तक त्रुटि की संभावना है। इस अंकन दोषयुक्तता को श्रेणी करण विधि द्वारा दूर किया जाना चाहिये। सर्वप्रथम निबंधात्मक प्रश्नों में श्रेणीकरण करना चाहिये। पुस्तिकओं को पढ़कर 5 भागों में बाँटा जाना चाहिये। 1-अतिउत्तम 2-उत्तम 3-सामान्य 4-सामान्य से नीचे 5-निम्न।

अतिउत्तम और निम्न 10 प्रतिशत हो। दूसरा चौथा 20 प्रतिशत हो तथा तीसरे प्रकार का उत्तर 40 प्रतिशत हो। पहली श्रेणी में 'ए' दूसरी श्रेणी में 'बी' फिर 'सी' 'डी' 'ई' ग्रेड दिये जाते हैं। अमेरिका में यह पद्धति प्रयोग की जाती है। कुछ के अनुसार पांच श्रेणियों की तुलना में 10 बिन्दु श्रेणी का प्रयोग अधिक उपयुक्त है।

3. समेस्टर प्रणाली:- अमेरिका में प्रचलित है। सत्र को चार भागों में बांटा गया है। हर भाग में एक परीक्षा होती है। चारों के अंकों के आधार पर उसे ग्रेड मिलता है इसमें पुनर्मूल्यांकन की सुविधा रहती है। निश्चित अवधि में निश्चित पाठ्यक्रम पूरा किया जाता है। छात्रों पर बोझ कम पड़ता है। इसमें दुगने समय और धन की आवश्यकता होती है भारत में इसका बोझ उठाना आसान नहीं है।

4. आन्तरिक मूल्यांकनः- इसमें विद्यार्थी के विकास की दृष्टि से उसकी शैक्षिक उपलब्धि के साथ व्यवहारगत परीक्षण किया जाता है। कक्षा का आकार अधिक होने के साथ आन्तरिक मूल्यांकन करना कठिन होता है इसके लिये पर्याप्त धन, समय, क्षमता की आवश्यकता होती है। जब अनुकूल परिस्थितियों का पूर्ण निर्माण किया जाये तब इस प्रणाली का प्रयोग किया जा सकता है।

अतः स्कूल और कॉलेज आपस में सम्बन्धों के केन्द्र भी बन जाते है। ई-लर्निंग के माध्यम से छात्र विश्व-स्तर पर जुड़ जाते है। इस प्रकार ज्ञाता और ग्राह्य के बीच एक तादात्म्य स्थापित हो जाता है। सूचना और तकनीक, शिक्षण-अभिगम प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अन्तर्गत इलेक्ट्रानिक मीडिया, प्रिंट मीडिया और डिजिटल तकनीक जैसे कम्प्यूटर, एल0सी0डी0 ई-लर्निंग, ई-लाइब्रेरी, ई-एजूकेशन, ई-क्लासरूम आदि सम्मिलित है। ये सभी तकनीके उच्च शिक्षा को और प्रभावशाली बनाते है। नवाचार और नई तकनीकें शिक्षण-अधिगम और मूल्यांकन ने छात्रों को सक्रिय भागीदार बनाती है, न कि निष्क्रिय श्रोता। इन तकनीकों के प्रयोग से शिक्षण, अधिगम और मूल्यांकन में काफी सुधार आने की सम्भावना हो जाती है।

सहायक ग्रन्थ-

1. पाल, गुप्त और मदन मोहन, शिक्षा के सिद्धान्त और आधार।
2. गुप्त डॉ0 एस0पी0, आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान।
3. शर्मा डॉ0 बी0 एल0 और सक्सेना डॉ0 आर0 एन0, शिक्षा शास्त्र।
4. अग्रवाल एस0 के0, शिक्षण कला।
5. सारस्वत डॉ0 मालती और मदन मोहन, शिक्षा मनोविज्ञान।
6. गुप्ता डॉ0 एस0 पी0, आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन।
7. पाण्डेय डॉ0 रामशकल, शिक्षा के मूल सिद्धान्त।
8. उपाध्याय डॉ0 प्रतिभा, भारतीय शिक्षा में उदयीमान प्रवृत्तियां।

डॉ0 अरूणा श्रीवास्तव
एम0एस0सी0, एम0एड0 पी0-एच0डी0
अतिथि प्रवक्ता, आर्य कन्या डिग्री कालेज, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-95-102
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

रागों का उद्भव और विकास
(प्राचीन काल से आधुनिक काल तक के राग वर्गीकरण)

शुचि तिवारी एवं विनीता बिहारी

राग भारतीय संगीत की अनुपम परिकल्पना है, जो भारतीय संगीतज्ञों की सुविकसित व परिष्कृत सूक्ष्म सौन्दर्य चेतना का प्रतीक है। भारतीय संगीत की विशेषता इसी राग व्यवस्था में निहित है। जिस प्रकार पाश्चात्य संगीत ''हार्मनी संगीत'' के लिये प्रसिद्ध है उसी प्रकार भारतीय संगीत 'मेलाड़ी संगीत के लिये प्रसिद्ध है। मेलाड़ी संगीत में किसी विशिष्ट स्वरावली की सहायता से इस प्रकार क्रमिक विस्तार किया जाता है कि समस्त स्वर स्थाई 'स' से अपना सम्बन्ध स्थापित करते हैं। सम्पूर्ण शास्त्रीय संगीत राग की कल्पना पर आधारित है और 'राग' जो भारतीय संगीत की प्रमुख और श्रेष्ठतम कृति है।

'राग' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'रञ्ज' धातु से हुई है जिसका अर्थ है 'रंजन', अतः रंजकता ही राग का आन्तरिक तत्व है। *संगीत परिवर्तनशील है, विभिन्न कालों में परिवर्तन के अनुसार संगीत में बदलाव आता है। सम्भवतः इसी कारण प्राचीन काल से आधुनिक काल तक देश काल तथा परिस्थितियों के आवर्तन और अनुवर्तन के फलस्वरूप रागों का वर्गीकरण भी विभिन्न रूपों में होता आया है।*[1] राग वर्गीकरण के इतिहास को हम तीन कालों में बाँट सकते हैं- **प्राचीन काल, मध्य काल एवं आधुनिक काल।**

प्राचीन काल के तीन विद्वानों के संगीत विषयक ग्रन्थ उपलब्ध है जो निम्नलिखित हैं- ***(अ)*** *भरत कृत 'नाट्य शास्त्र'* ***(ब)*** *मतंग कृत 'बृहद्देशी'* ***(स)*** *नारद कृत 'नारदीय शिक्षा' और 'संगीत मकरन्द'*

भरतकृत नाट्य शास्त्र- यह ग्रन्थ लगभग द्वितीय शताब्दी में लिखा गया। यह ग्रन्थ प्राचीन एवं प्रमाणिक सामग्री प्रस्तुत करता हैं आचार्य भरत ने स्वयुग में प्रचलित समस्त गीत शैलियों को जो गायन योग्य थी, उन सभी का विभाजन 'जाति' के अन्तर्गत किया है।

जति वर्गीकरण- इस पद्धति के अनुसार प्राचीन काल में रागों के स्थान पर जाति गायन की पद्धति प्रचलित थी। जाति का सर्वप्रथम उल्लेख 'नाट्यशास्त्र' एवं 'वाल्मीकीय' रामायण में मिलता है। लव और कुश की रामायण गान की शिक्षा महर्षि वाल्मीकि ने सप्तजातियों में प्रदान की थी। नाट्यशास्त्र में जाति की परिभाषा उपलब्ध नहीं है, परन्तु उसके लक्षणों की विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है।[2]

जाति नामकरण की सार्थकता का प्रतिपादन करते हुये आचार्य मतंग ने जाति को परिभाषित किया है। बृहददेशी के जाति प्रकरण में मतंग कहते हैं- *श्रुतिग्रहस्वरादि समूहाज्जायन्ते जातयः अतो जातयइत्युच्युन्ते*। जाति गायन पद्धति के अनुसार जो श्रुति और ग्रह स्वरादि के समुदाय से उत्पन्न होती है, जो जातियाँ राग जननी होती है उन्हें जाति की संज्ञा दी गई है। जातियाँ वह धुने थी जिनका उद्गम लोक संगीत में हुआ था। आवश्यक संस्कार और परिष्कार के कारण इनको शास्त्रीय संगीत में स्थान प्राप्त था। वैदिक युग में ये प्रचलित थी। जातियों की इस प्राचीनता के आधार पर उनकी गणना मार्ग संगीत में की गई।

आचार्य भरत *षड्ज ग्राम से सात और मध्यम ग्राम से ग्यारह कुल अठारह जातियों के निर्माण का उल्लेख करते है।* **षड्ज ग्राम से उत्पन्न**- *आर्षभी, गांधारी, मध्यमा, नैषादी,*

षडजादीच्यवाती, षड्ज कौशिकी और षडजमध्या। **मध्यम ग्राम से उत्पन्न 11 विकृत जातियाँ**- *गांधारी, मध्यमा, गांधरोदीच्यवा, पंचमी, रक्तागांधारी, गाधार, पंचमी, मध्यमोदीच्यवा, नन्दवती, कार्मारवी, आंधी तथा कैशकी।* षड्ज ग्राम की 7 जातियों में से 4 शुद्ध और 3 विकृत है तथा मध्यम ग्राम की 11 जातियों में से 3 शुद्ध एवं 8 विकृत है। इन 18 जातियों में से सात शुद्ध जातियों का नाम सात स्वरों के नाम से हुआ है।

भरत के अनुसार जातियाँ शुद्ध और विकृत दो भागों में वर्गीकृत की गई हैं- **जातियों द्विवधा, शुद्ध विकृताश्च।** शुद्ध जातियाँ वह है जिसमें विशिष्ट ग्राम के सम्पूर्ण सप्तस्वर विद्यमान हो तथा जाति का नामसूचक स्वर ही उसका अंश ग्रह तथा न्यास हो। परन्तु जब अंश तथा ग्रह स्वर को बदल कर या दो स्वरों को वर्ज्य कर जाति का विस्तार किया जाता है, तो शुद्ध जाति विकृत बन जाती है। 11 जातियों से ही ग्राम राग और रागों का विकास हुआ। **आचार्य भरत** के अनुसार- **जाति सम्भूत्वाद ग्राम रागाणाम।** आचार्य भरत के अनुसार **ग्राम राग सात थे**- *मध्यग्राम, साधारित, पंचम, कौशिक, षाड्य तथा कौशिक मध्यम।*

जाति में नियमों का कठोर बंधन था, जबकि राग में कम था। जाति उच्च संगीत की वस्तु थी तो राग लोक संगीत की। दोनों का उद्देश्य गठन तथा गायन शैली के सैद्धान्तिक दृष्टि से समान होने के कारण लोक संगीत के रागों ने जातियों का स्थान ग्रहण कर लिया। नाट्य शास्त्र में जाति के दस विध लक्षण- *ग्रह, अंश, तार, मन्द्र, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, षाडवत्व तथा औडवत्व बताये गये हैं-*

ग्रहांशै तारमन्द्रों च न्यासोपन्यास एवं च। अल्पत्व च बहुत्व च षाडवौडविते तथा।।

1. **ग्रह स्वर** - समस्त जातियों में ग्रह स्वर उस स्वर को कहते थे, जिससे जाति का गान आरम्भ होता है। **मतंग** ने भी कहा है- **तत्रादौ जात्यादिप्रयोगों गृह्ते येनासौ ग्रहः** अर्थात् जिस स्वर से जात्यादि के प्रयोग का आरम्भ किया जाए उसे ग्रह कहते हैं।[3]

2. अंश स्वर- जाति में अंश का सबसे अधिक महत्व होता है। **अभिनव गुप्त** *अंश के सर्वोत्कृष्ट महत्व की स्वीकार करते हुये उसे पुरूष के सिर के समान मानते हैं-* **"शिरसीव पुरूष स्वरूपम।"** पुरूष की पहचान बिना सिर के सब अंगो के विद्यमान रहते हुए भी नहीं की जा सकती इसी प्रकार अंश स्वर जाति की प्रमुख पहचान का माध्यम है, क्योंकि उसके द्वारा जाति के अनेक नियमों का 'अनुवर्तन' अर्थात आज्ञा पालन रूप नियमन होता है।

3. तार स्वर- अंश स्वर से चौथे, पाँचवे या सातवे स्वर तक तार स्थान में (आरोहात्मक) जाने का नियम है। इससे अधिक ऊँचा जाति में जाना नियमानुसार नहीं है।

4. मन्द्र स्वर- जाति गान में मन्द्र स्थान में स्वर प्रयोग की सीमा अंश तक, न्यास तक या अपन्यास तक है। अवरोहात्मक अवस्था में अंश स्वर से आगे जाति में जाने का नियम नहीं है जैसे षाडजी जाति (शुद्ध) में 'स' अंश स्वर है, तो मन्द्र में मन्द्र स तक ही अधिक से अधिक नीचे उतरा जा सकता है। इसी प्रकार यदि स अंश स्वर है तो तार स्थान में अधिक से अधिक सातवें स्वर तक अर्थात निषाद तक ही जाने का नियम है।

5. न्यास स्वर- संगीत में 'न्यास' एक परिभाषिक स्वर है, जिसका अर्थ है गीत का अन्तिम स्वर। गति प्रबन्ध अथवा वाद्य प्रबन्ध जिस अन्तिम स्वर पर रख दिया जाता है अर्थात जिस अन्तिम स्वर पर उसकी समाप्ति होती है वह 'न्यास' स्वर कहलाता है।

6. अपन्यास स्वर- भरत ने अपन्यास स्वर की परिभाषा इस प्रकार दी है- **"तदवदपन्यासो ह्य मध्ये।"** अर्थात जिस स्वर पर गीत या वाध्य प्रबन्ध के मध्य की समाप्ति होती है वह अपन्यास स्वर है।

7. अल्पत्व- जिस स्वर का अल्प प्रयोग होता है उसे अल्पत्व कहते है। जाति व्यवस्था में लंघन व अनम्यास दो प्रकार का अल्पत्व होता है। स्वर का कम प्रयोग अल्प कहा जाता है और किसी स्वर का अधिक बार न लगाना अनभ्यास कहा जाता है।

8. बहुत्व- अल्पत्व का उल्टा होने से बहुत्व भी दो प्रकार से है। स्वर विशेष का पूर्ण रूप से प्रयोग करते हुए उसकी पुनः-पुनः आवृत्ति 'अभ्यास' और स्वर को वर्जित करना अलंघन कहलाता है। बहुत्व में अन्य प्रबल (बली) स्वरों का भी संचार अर्थात आरोहावरोह में बार-बार प्रयोग होता है। ये बली स्वर अंश व उसके संवादी स्वर होते है।[4]

9. षाडवत्व- छः स्वरों के प्रयोग को षाडव जाति कहते हैं। अट्ठारह जातियों में से केवल 14 जातियाँ षाडव है। जो छः स्वर शुद्ध या विकृत जाति प्रयोग की रक्षा करते हैं, वे षाडव स्वर कहलाते हैं। उन षाडव स्वरों में जो गीत उत्पन्न होता है वह षाडव कहलाता है।

10. औडवत्व- सात स्वरों में से दो स्वरों के लोप हो जाने से अवशिष्ट जिन स्वरों की औडुवी अर्थात पाँच संख्या होती है, वे पाँच स्वर औडव माने जाते हैं।

मतंग कृत वृहद्देशी- यह ग्रन्थ चौथी शताब्दी में लिखा गया। राग का सुस्पष्ट उल्लेख मातंग के बृहद्देशी में ही मिलता है। मतंग के अनुसार विशिष्ट स्वर वर्णों से विभूषित उस ध्वनि विशेष को राग कहते हैं जो सर्वसाधारण के चित का रंजन करता है।

मतंग ने रागों का वर्गीकरण मुख्य रूप से ग्राम राग अथवा भाषाराग और देशीराग के अन्तर्गत किया है। उन्होंने अपने रागों को सप्त गीतियों शुद्धा, भिन्ना, गौडी, राग, साधारणी, भाषा, विभाषा में विभाजित किया है। इनमें से प्रथम पाँच **ग्राम राग** के अन्तर्गत आते हैं और शेष दो **भाषा राग** के अन्तर्गत। मतंग के समय से ही राग गायन का प्रचलन हो गया था। मतंग की राग जातियों के नाम निम्नलिखितत है- *टकी, सावीरा, मालव पंचम, षाड्व, वटराग, हिड़ोलक, टक्ककोशिक।* ये ही मतंग के मुख्य ग्राम राग है जिनकी उत्पत्ति जातियों से हुई है।

नारदीय शिक्षा- यह ग्रन्थ नारद द्वारा 800 ई0 में लिखा गया हैं। इस ग्रन्थ में सामवेदीय स्वरों का विशेष उदाहरण देते हुए 7 ग्राम रागों का वर्णन किया गया है जिसके नाम निम्न है- *षाड्व, पंचम, मध्यम, षड्जग्राम, साधारिता, कौशिक मध्यम, मध्यम राग*

संगीत मकरन्द- नारद बिरचित इस ग्रन्थ में गंधार ग्राम का वर्णन उपलब्ध है। इसमें सर्वप्रथम पुरूष-राग स्त्री-राग आदि का उल्लेख है, जिसके आधार पर आगे राग-रागिनी पद्धति निर्मित हुई। रागों का जाति, प्रकृति तथा समय के अनुसार विभाजन भी किया गया है।

मध्यकाल- प्राचीन काल में मुर्च्छना पद्धति थी। मध्य युग में राग-रागिनियों की पद्धति चल पड़ी किन्तु उसमें मुर्च्छना पद्धति के कुछ अंशों को स्वीकार कर लिया गया। मुर्च्छना पद्धति का शास्त्र दुर्बोध होने का यह कारण था कि उसमें केवल सात शुद्ध स्वर 'स रे ग म प ध नी' और दो विकृत स्वर 'ग-नी', थे, किन्तु मुर्च्छनाओं के परिवर्तन से इनमें अन्य तीन स्वर 'रे म ध' का आभास होता था। इस प्रकार कुल मिलाकर बारह स्वर गोचर होते थे। उस समय बीणा पर परदे नहीं डाले जाते थे बाद में परदों का प्रचलन हुआ और 'रे' म 'ध' स्वर स्वरूप में अंगीकार कर लिया गया। यह होते ही मुर्च्छना पद्धति खत्म हो गई।

मध्यकाल के प्रारम्भ में ही भारतीय संगीत का हिन्दुस्तानी और कर्नाटक प्रणालियों में विभाजन हुआ। इस प्रकार 12वीं-13वीं और 14वीं शताब्दी का काल पुनर्जागरण का काल रहा। इस पुनर्जागरण ने संगीत एवं भारतीय स्वर रचनाओं के वर्गीकरण के सम्बन्ध में नये विचारों को जन्म दिया। ग्राम मुर्च्छना जाति की प्राचीन प्रणाली और उनसे उत्पन्न रागों की पद्धति का प्रचलन कम होने लगा। राग वर्गीकरण की दृष्टि से 'संगीत रत्नाकर' दो मार्गों का

ऐसा मिलन स्थल है जिसके एक ओर भरत की ग्राम, मुर्च्छना और जाति व्यवस्था है तो दूसरी ओर मध्ययुगीन राग रागिनी वर्गीकरण। भरत परम्परा को पूर्णतः और स्थाई रूप से व्यवस्थित करने वाला वह अन्तिम ग्रन्थ है।

शारंग देव के समय तक रागों की संख्या अनगिनत हो चुकी थी, कुछ राग प्राचीन जातियों से सम्बन्ध रखते थे और शेष दोनों की विशेषताओं को लिये हुये थे। उन्होंने अपने समय में प्रचलित रागों को दस भागो में विभाजित किया। *ग्राम राग, राग, उपराग, भाषा, विभाषा, अर्न्तभाषा, रागांग, भाषांग, उपांग, क्रियांग।* इनमें से 6 मार्गी संगीत और शेष 4 देशी संगीत के अन्तर्गत आते हैं।

ग्राम राग वर्गीकरण– ग्राम राग वे राग हैं जिनकी उत्पत्ति ग्रामों से सम्बन्धित गीतियों से हुई है।[5] **ग्राम राग 30 है।** उस काल में 5 गीतियाँ शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, बेसरी और साधारणी प्रचलित थी। अब 30 ग्राम रागों का वर्गीकरण 5 गीतियों में निम्नवत हुआ है–

(क)शुद्धा–यह गीत लालित्य एवं कोमलता के लिये प्रसिद्ध थी। इसमें 6 ग्राम राग आते हैं।

(ख)भिन्ना–यह गीति सूक्ष्मता एवं कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध थी। इसमें 6 ग्राम राग आते हैं।

(ग) गौड़ी– यह गीति अपनी गम्भीर गमकों के लिये प्रसिद्ध थी। इसमें 3 ग्राम राग आते हैं।

(घ) बेसरी– इस गीति के अन्तर्गत 8 ग्राम राग आते हैं।

(ङ) साधारणी – इस गीति के अन्तर्गत 6 ग्राम राग आते हैं।

उपराग– इनकी संख्या आठ थी। जैसे ग्राम राग गीतियों से उत्पन्न है। उसी प्रकार उपराग की उत्पत्ति भी जातियों से हुई हैं इनका पृथक वर्गीकरण हुआ है, शायद इसीलिये कि 30 रागों का नाट्य के अन्तर्गत प्रयोग होता था और 'उपराग' इन्हीं के समकक्ष रहे होंगे परन्तु इन्हे अधिक महत्व उपलब्ध न था।

3. राग– इनकी संख्या 20 मानी गई है। ग्राम रागों और उपरागों की तरह 'राग' भी जातियों से उत्पन्न है लेकिन सम्भवतः उपरागो के भी उपरांत इनका विकास होने के कारण वर्गीकरण पृथक ही हुआ। मध्यकाल के राग-रागिनी के 6 मुख्य राग इन्ही रागों में आते है।

4. भाषा– मतंग के अनुसार भाषा का अर्थ है- *ग्राम रागों को गाने के विभिन्न प्रकार* **ग्राम रागाणायेवालाय-प्रकारा भाषावाच्याः भाषा शब्दोग्त्र प्रकार वाची।"** अर्थात कुछ राग ऐसे होते हैं, जिनके अंग से अन्य राग गाये बजाये जाते हैं जैसे कानड़ा, केदार, विलावल, मल्हार, कल्याण आदि। इन सभी रागों का एक विशिष्ट अंग है जो इनके सभी प्रकारों में दृष्टिगत होता है।

30 ग्राम रागों और 8 उपरागों में से सिर्फ '14' ग्राम राग और '।' उपराग अर्थात '15' को ही हम 'भाषा' के अन्तर्गत मान सकते हैं। मतंग ने '7', कश्यप ने '12' और शादुल ने '4' भाषा रागों का वर्णन किया है, जो रागों के तत्कालीन विकास के सूचक है।

विभाषा– कल्लिनाथ के अनुसार विभाषा को ही भाषा की तरह ग्रामरागों के आलाप-प्रकार कहा जा सकता है। ये भाषा के सूक्ष्म भेद रहे होंगे। लोक में भाषा और बोली में जो अन्तर है, वैसा ही इनमें रहा होगा जैसे हिन्दी भाषा कहलाती है और अवधि, बुन्देलखण्डी आदि बोलियाँ। शारंगदेव के अनुसार विभाषाओ की संख्या 20 है।

अन्तरभाषा– ग्राम रागों के ही ऐसे प्रकार जिनका विकास भाषा और विभाषा के उपरांत हुआ और जो इन दोनों की अपेक्षा ग्राम रागों से और भी अधिक दूर थे वे 'अन्तर भाषा' कहलाये। शारंगदेव के केवल '4' अन्तर भाषाओं का उल्लेख किया गया।

इस वर्ग के रागों की संख्या बढ़ जाने से और नियमों की शिथिलता से 'देशी राग' का वर्ग पृथक बन गया, जिसके अन्तर्गत, रागांग, भाषांग, क्रियांग, उपांग आते है।

देशी राग वर्गीकरण

रागांग– ग्राम रागों की कुछ छाया जिन रागों में दिखाई देती है, उन्हें भरत ने 'रागांग' कहा है, अर्थात ग्राम रागों के भंग मिश्रण अथवा विकार से जो राग उत्पन्न हुये, वे रागांग वर्णित है, जैसे शंकराभरण, दीपक, भैरव इत्यादि।

भाषांग– भाषा रागों की छाया सहित जिन रागों की उत्पत्ति हुई वे मतंग के अनुसार भाषांग कहलाये, अर्थात भाषा रागों में उत्पन्न हुये विकार किन्तु उनकी छाया अर्थात किन्ही अंगों को रखते हुये जिन रागों का विकाश हुआ उसे भाषांग कहते है। संगीत रत्नाकर में बीस भाषाओं का निरूपण किया गया है।

क्रियांग– जिन रागों से चित में करूणा, उत्साह और शोक जैसे भाव उत्पन्न हो वे 'क्रियांग' राग कहलाते है। क्रियाग रागों के नामों के अन्त में कृति पद अवश्य रहता है जैसे– भावक्री, आजेक्री, नागकृति आदि। इनकी संख्या '15' बताई गई है।

उपांग– रागांग, भाषांग और क्रियांग इन तीनों के मिश्रण से निर्मित राग उपांग कहलाते थे। संगीत रत्नाकर में इनकी संख्या '30' बताई गई है।

शुद्ध, छायालग और संकीण वर्गीकरण– शारंगदेव के दस विधि राग वर्गीकरण के बाद रागों का एक अन्य वर्गीकरण प्रचार में आया– जिसके अन्तर्गत रागों को रखा गया वे निम्नवत है– **''शुद्ध सालग संकीर्णा रागावस्तु त्रिविधा स्मृताः।''**

शुद्ध राग– जो राग शास्त्र के नियमानुसार गाया बजाया जाता है, जिसमें अन्य किसी राग की छाया नहीं होती, ऐसे राग को शुद्ध राग माना जाता हैं

छायालग राग– जिस राग में अन्य किसी राग की छाया होती है, उसे छायालग राग कहते है। शुद्ध कल्याण में यमन, परज में बसंत, पूर्वी, जलधर केदार में दुर्गा, मेघमल्हार में सारंग, विलासखानी तोडी में भैरवी की छाया दिखाई देती है।

संकीर्ण राग (मिश्र राग)– छायालग राग में तो केवल अन्य राग की छाया प्रदर्शित होती है, परन्तु जब एक राग में अन्य राग मिलाया जाता है तब वह मिश्र राग कहलाता है।

संर्कीण या मिश्र रागों में शुद्ध और छायालग रागों का मिश्रण होता है। इसमें दो या दो से अधिक राग संयुक्त रहते है। इस प्रकार के वर्गीकरण का महत्व मध्यकाल के कुछ अन्य ग्रन्थकारों ने भी स्वीकार किया है। **पं0 शुभंकर जी** ने रागों के तीन भेद शुद्ध, सालग और संर्कीण कहे है। **फकीरूल्ला जी** ने भी इसी प्रकार का उल्लेख किया है।

मेल राग वर्गीकरण– मध्य युग में ही राग वर्गीकरण की अन्य धारा मेल पद्धति प्रचलित हुई। जिसका उद्गम स्थल दक्षिण भारत है। मेल पद्धति चौदहवी शताब्दी में प्रारम्भ हुई। मेल पद्धति के बारे में बृहद्देशी में वर्णन हुआ है। दक्षिण भारत के विद्वान **पं0 विद्यारण्य** कर्नाटक पद्धति में प्रयुक्त मेल शब्द के जन्मदाता हैं। विद्यारण्य जी ने '50' रागों का वर्गीकरण 15 मेलों जैसे नट, गुर्जरी, वराटी आदि में किया। विद्यारण्य जी द्वारा लिखित **'संगीत सार'** वर्तमान समय में उपलब्ध नहीं है। दक्षिण भारत के मेल पद्धति का सर्वप्रथम वर्णन **पं0 रामामात्य** जी ने किया है। **स्वरमेल कलानिधि** में उन्होंने '19' मेलों में '64' रागों को वर्गीकृत किया है।

प्रचलित सभी रागों के शास्त्रीय वर्गीकरण के लिये यह नया वर्गीकरण था जिन रागों के शुद्ध तथा विकृत स्वरों में समानता थी उन्हें एक वर्ग में रखा गया और उन्हें मेल की संज्ञा दी गई। आरम्भ में '15' मेल माने गये किन्तु बाद में नवीन राग रूपों को ध्यान में रखते हुए नये मेल भी सम्मिलित किये गये। सोमनाथ, लोचन, रामामात्य पुण्डरीक विट्ठल व्यंकटमुखी संगीतज्ञ सभी मेल पद्धति के समर्थक रहे है। कल्लिनाथ जी ने भी मेल शब्द का उल्लेख किया

है ''कही-कही जन्य और जनक के मेलन में भेद हो गया है। कल्लिनाथ के पश्चात दक्षिण के समस्त शास्त्रकारों ने मेल को आधार मानकर रागवर्गीकरण करना प्रारम्भ किया। शास्त्रों में मेल शब्द ही प्रचलित था और भाषा या लोक में इसे थाट कहा जाता है।

पुण्डरीक विट्ठल ने '19' मेलों में '63' रागों का वर्गीकरण किया है। इस सूची में अनेक राग उत्तर भारतीय पद्धति से मिलते है। लोचन ने '12' स्वर संस्थानों के अन्तर्गत रागों का वर्गीकरण किया है। **हृदय नारायण देव** ने लोचन के ही थाटों में एक और थाट **हृदय रामा** मिलाकर '13' थाटो के अन्तर्गत रागों का वर्गीकरण किया है। सत्रहवी शताब्दी में **संगीत परिजात** में **अहोबल** ने अपने राग वर्गीकरण का आधार मेल पद्धति को ही बनाया है।

समय-समय पर शास्त्रकारों ने स्वबुद्धी के अनुसार मेल की संख्या का निर्धारण किया है मेल पद्धति के आधार पर वर्गीकरण करने वालों में हृदय नारायण देव, अहोबल, श्री निवास, पं0 भावभ्र, श्री कंठ आदि ग्रन्थकार है, इनमें से हृदय नारायण तथा भावभ्र ने अपने ग्रन्थों में दोनों ही पद्धतियों से राग-रागिनी तथा मेल पद्धति के आधार पर वर्गीकरण किया है। यद्यपि उत्तर भारत में दोनों ही पद्धतियों से राग वर्गीकरण का प्रचार दृष्टिगत होता है किन्तु दक्षिण भारत में मेल पद्धति की ही प्रधानता रही। **पं0 व्यंकटमुखी** जी ने सप्तक के अन्तर्गत प्रयुक्त किये जाने वाले 12 स्वर स्थानों पर आधारित '72' मेलों की रचना की।

उत्तरी संगीत के दक्षिणात्य नाम तथा मेल संख्या निम्नवत् है-

संख्या	उत्तर हिन्दुस्तानी नाम	दक्षिणात्य नाम	मेल संख्या
1.	कल्याण	मेच कल्याण	65
2.	बिलावल	धीर शंकराभरण	29
3.	खमाज	हरिकम्भोज	28
4.	भैरव	मायामालव गौड	15
5.	पूर्वी	कामवर्धिनी	51
6.	मरवा	गमन प्रिय	53
7.	काफी	रवरहरप्रिय	22
8.	टासावरी	नट भैरवी	20
9.	भैरवी	हनुमततोडी	8
10.	तोड़ी	शुभपंतुवराली	45

'72' मेलों का व्यवहार में प्रयोग नहीं हो सका यह '72' मेल रचना गणिताधारित है, राग वर्गीकरण के लिये '72' में से '19' मेलों को तत्कालीन रागों के लिये आवश्यक मानकर रागों का वर्गीकरण किया गया है।

राग रागिनी- मेल पद्धति के साथ मध्य युग में राग-रागिनी परम्परा का उल्लेख मिलता है, जिसका आधार है, मतंग के ग्राम राग और उनकी भाषा, विभाषा, अर्न्तभाषा आदि। इस परम्परा को कुछ उत्तर भारत के विद्वानों ने स्वीकार करते हुए अपनाया।

8 वीं शताब्दी में नारदमुनि ने 'संगीत मकरन्द' में 6 राग और 32 रागनियों का उल्लेख किया है। नाट्यशास्त्र या बृहद्देशी में राग-रागिनी का कोई उल्लेख नहीं है।

यह पद्धति वैदिक सिद्धान्त पर आधारित है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक इस पद्धति का प्रभाव किसी न किसी रूप में अवश्य दिखाई देता हैं आज भी इस पद्धति की ध्यान परम्परा की ओर गायकों का आकर्षण दिखाई देता है। जिस साम से संगीत की उत्पत्ति हुई है उस साम का रूप ही पति पत्नी के भाव से युक्त है। रागों की जननी जातियों की उत्पत्ति भी सामगान से मानी गई है। भारतीय उपासना पद्धति में सीता-राम, उमा-महेश,

राधा-कृष्ण, लक्ष्मी-नारायण की युगल रूप में उपासना की जाती है। सृष्टि की उत्पत्ति के लिये भी माया-ब्रह्म, शक्ति-शिव, इन दो तत्वों की आवश्यकता होती है। इस सृष्टि से संगीत के विकास एवं उत्पत्ति के लिये भी स्त्री-पुरूष रूप राग-रागिनी सिद्धान्त की मान्यता सदैव रही। इस सिद्धान्त का प्रभाव राग-रागिनी वर्गीकरण पद्धति के ग्रन्थों में दिखाई देता है। **पं0 शिव प्रसाद** की पुस्तक **वंशी मंजरी** के चार भागों में मूल 6 राग-रागनियाँ पुत्रों व पुत्रवधुओं के उल्लेख और स्वर लीपियाँ दी गई है। मध्यकाल में राग-रागिनी वर्गीकरण के प्रमुख ग्रन्थों में शुभंकर का 'संगीत दामोदर' पुड्रीक विटठ्ल की 'राग माला', दामोदर पंडित का 'संगीत दर्पण' आदि ग्रन्थ पद्रहवी से सत्रहवी शताब्दी के काल में प्राप्त होते है।

राग रागिनी वर्गीकरण भारतीय जनमानस लोक जीवन और कल्पना के अनुकूल ही रहा है। इस वर्गीकरण का आधार रागों के स्वरूप के अनुसार निर्मित भावरूप, ध्यान और चित्र है। राग-रागिनी वर्गीकरण के भिन्न प्रकार दिखाई देते हैं **संगीत दर्पण** में **पं0 दामोदर पंडित** ने मुख्यतः चार मतों का वर्णन किया है जो उस समय प्रचलित थे- *शिव मत, हनुमत मत, कृष्णमत, भरतमत* इन चारों मतों में एकरूपता नहीं है। रागों को स्त्री या पुरूष किस आधार पर दिया गया यह सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं है। रागों और रागिनयों के स्वर या भाव में कोई साम्य दिखाई नहीं देता। कुछ रागों को नपुंसक राग भी बताया गया है।

मध्ययुगीन क्रिया कुशल गुणियों में सूरदास, व अन्य अष्टछाप के कवि स्वामी हरिदास व तानसेन राग-रागिनी वर्गीकरण को ही मानते थे। **प्रताप सिंह** देवकृत **संगीतकार** में, आधुनिक काल में **मुहम्मद रजा** ने **नगमाते आसफी** में राग रागिनी वर्गीकरण का समर्थन करते है।

पं0 भातखण्डे जी ने समय की आवश्यकता व सैद्धान्तिक बिखराव को ध्यान में रखते हुये इसकी कमियों को लोगों के सामने रखा व इसके स्थान पर दक्षिण की मेल पद्धति को स्वीकार कर थाट वर्गीकरण का निर्माण किया।

रागांग वर्गीकरण- देशी रागों को रागांग, भाषांग, उपांग इन चार वर्गों में विभाजित करने का उल्लेख आचार्य मतंग के काल से मिलता है। जिन रागों में रागों की छाया मात्र हो वे राग रागांग राग कहे जाते है। रागों की छाया स्वर समूहों में दिखाई देती है। जिसको सुनने से यह पता चलता है कि इस स्वर समूह में यह राग झांक रहा है यही छाया है। राग श्री सामान्य पहचान तो स्वरों के द्वारा हो जाती है परन्तु सूक्ष्म पहचान विशिष्ट स्वर समूहों के माध्यम से ही होती है। यही स्वर समूह प्रधान पहचान रागांग कहलाते हैं। **पं0 दामोदर** ने रागांग की परिभाषा इस प्रकार दी है *रागांग राग वे हैं जिनमें ग्राम राग की कुछ छाया मिले।* अनेक राग ऐसे हैं जिनका समावेश किसी विशिष्ट अंग में करना कठिन होता है। *राग की रचना जब अंग प्रधान न होकर स्वर प्रधान होती है तब ऐसे रागों में किसी अंग विशेष को ढूढ़ना प्रायः निरर्थक होता है।* रागों को प्रधानतः *शुद्ध अंग, प्रधान व स्वर प्रधान* इन तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। शुद्ध, छायालग व संकीर्ण वर्गीकरण इसी दृष्टि से किया गया है।

भारतीय संगीत में रागों के विकास में रागांगों का सर्वाधिक योगदान रहा है। इसका श्रेय बम्बई के श्री नारायण मोरेश्वर खरे को जाता है। उन्होंने अनुभव से 30 स्वर समुदाय चुने जिन्हें रागांग कहा, ये रागांग अर्थात विशिष्ट स्वर समूह राग को विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करते है। इसी अंग के सहारे नये-नये रागों का उद्भव हुआ।

प्रचलित संगीत में कई ऐसे रागांग है जो अनेक संर्कीण या छायालग रागों को जन्म देते है और साथ ही मूल रागों से अपना सम्बन्ध स्थापित करते है। कान्हणा, भैरव, मल्हार, सारंग, नट बिलावल, कल्याण, देश, धनाश्री आदि ऐसे ही रागांगों में से है।

थाट राग वर्गीकरण- संगीत सदैव परिवर्तनशील रहा है। यही कारण है कि मध्ययुगीन राग और उनके वर्गीकरण की प्रणाली अप्रचलित हो गई। राग वर्गीकरण के लिये अनेक साधन अपनाये गये परन्तु वर्तमान समय में थाट पद्धति ही प्रचलित है जिसका श्रेय पं0 भातखण्डे जी को जाता है जिन्होंने संगीत कला की क्षत-विक्षत पद्धतियों के स्थान पर आधुनिक थाट पद्धति का निर्माण किया। पहले राग रागिनी पद्धति प्रचलित थी। संगीतज्ञ उनके नियमों पर ध्यान न देते हुये उन्हे गाते थे। पं0 जी इस निष्कर्ष पर पहुचे कि राग-रागिनी प्रणाली के अन्तर्गत जो वर्गीकरण है वह आज के रागों पर लागू नहीं हो सकता। पं0 जी ने दक्षिण की जनकजन्य मेल प्रणाली को राग वर्गीकरण की अधिक उचित प्रणाली माना। उन्होंने व्यकंटमुखी के ही '72' थाटों मे से केवल 10 प्रसिद्ध थाटों का चयन किया। जिन पर प्रचलित सभी रागों का वर्गीकरण सम्भव हुआ। इस वर्गीकरण का उल्लेख 'राग तरंगिणी', 'राग विबोध', 'हृदय कौतुक' और हृदय प्रकाश जैसे ग्रन्थों में उपलब्ध है। आधुनिक संगीत में राग वर्गीकरण के लिये प्राचीन मुर्च्छनाओं के स्थान पर 'मेल' अथवा 'थाट' शब्द पाये जाते है। जिस प्रकार मूर्च्छनाये प्राचीन जातियों के लिये आवश्यक है, उसी प्रकार मेल अथवा थाट हमारे रागों के लिये आवश्यक है।

मेल स्वरसमूहः स्थाद्रागव्यंजन शक्तिमान्। श्लिष्टच्चरणमेवाल समुदायः प्रकीर्तितः।।[6]

अर्थात मेल उस स्वर समूह को कहते हैं। जिसमें राग उत्पन्न करने की शक्ति हो, यहाँ पर स्वर समूह से अभिप्राय है कि क्रम से एक के बाद दूसरे स्वर उच्चारित किये जाए।

पं0 जी ने समस्त रागों को '10' थाटो में विभाजित किया। थाटों में रागों का वर्गीकरण करने के पश्चात प्रत्येक थाट में आश्रय राग उन्होंने बतलाये जिसके कारण अंशतः राग-रागिनी वर्गीकरण का भी समर्थन होता है। इन्हीं थाटों से रागांग बनते है। जिनके अंगो द्वारा अनेक अन्य रागों की सृष्टि होती है। जैसे कल्याण थाट में राग कल्याण, बिलावल थाट भैरव राग भैरव किसी थाट में अनेक भिन्न-2 अंगों को लेकर राग बनते है तो वह भी पं0 जी ने समझाया है। जैसे खमाज अंग झिझोटी अंग, देश अंग, सोरठ अंग, पूर्वी थाट में पूर्वी अथवा श्री अंग, काफी थाट में काफी अंग, धनाश्री अंग मल्हार अंग, कान्हडा अंग इत्यादि।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा प्रो0 स्वतंत्र, भारतीय सगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, पृ0 253.
2. देवांगन तुलसी राम, भारतीय संगीतशास्त्र, पृ0 137.
3. सिंह डॉ0 ठाकुर जयदेव, भारतीय संगीतशास्त्र, पृ0 391.
4. देवांगन तुलसी राम, भारतीय संगीतशास्त्र, पृ0 144.
5. परांजपे डॉ0 शरतचन्द्र श्रीधर, संगीत बोध, पृ0 62.
6. राग तत्व विबोध, मेल लक्षणम् प्रकरण, श्लोक-9, पृ0 91.

सहायक ग्रन्थ सूची

1. तिवारी डॉ0 शुचि, राग वर्गीकरण पद्धतियों में रागांग पद्धति।
2. शर्मा प्रो0 स्वतंत्र, भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण।
3. देवांगन तुलसी राम, भारतीय संगीत शास्त्र।
4. सिंह डॉ0 ठाकुर जयदेव, भारतीय संगीत का इतिहास।

शुचि तिवारी (शोध निर्देशक)
विनीता बिहारी (शोध छात्रा)
संगीत विभाग, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-103-105
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

The Study of Village: Regarding Non-Physical Parameters

Anshuman Upadhyay

"The Village will perish, India will perish too"[1] Mahatma Gandhi. This was the statement based on empirical study and analysis of Gandhi. Gandhi had covered the whole India in order to aware against the Britishers. This was just like a sociological survey made by Gandhi and He came to know that the development road of India was through the villages of India.

In Indian context the gossip for village had been heard for the first time in 19th century; because of the propensity of Englishmen to extract more from Indian villages as land revenue. The land revenue was fixed by Lord Dalhousie by 60% to 50%[2] and that was the most prominent fact for what villages were coming into focus in mid of 19th century as revolt against East India conpany[3]. Before that villages were not disturbed by Rulars and this institution was declared as "Little Republic" by occident literates. Lot of literature had been written in this context and later plenty of Hindi movies were produced on the topic of rural community. From here a certain kind of 'villageism' or 'villagisation' seems to have marked the sprit of the age[4].

Indian Culture has its deep rooted in Indian village institution. On other words, India lives in its villages. Our village is not fit under the conceptual framework of Country side created by the occident sociologists and even, we can say that definition of rural belt that has been put forward by western thinker, India village are not satisfying it. According to western thinkers the village is a small group of dwellers depending on agriculture for their livelihood. It is very simple but in Indian context, we have very complex scenario. We are having clans, castes. Verna, caste based jajmani tradition, traditional occupations, fragmentation in land holdings, etc in our rural belt. That is to say that we needed a versatile approach to notice the happenings of Indian Villages.

Whole independence era politics has been under influence of Gandhi Jee and even Gandhi has started his triumph against Englishmen with agitation for the cause of peasants. The peasants showed their full swing support in the freedom campaign. Except *Gandhi, Swami Sahajanand, Vinova Bhave, J.P.* was also working among the formers. All these efforts had made impact on government, headed by pt. Nehru, policy after independence. The five year plan was adopted to reconstruct the village infrastructure. With the ideate persuasion of government in 1960s we had 'Harit Kratni' that brought the steep growth in agricultural production especially in Wheat and gradually made better ground for other crops too. After Green revolution tool of agriculture became the machine like plague has been replaced by Tractors. Now we are in very developed state regarding agricultural machinery like pumping set, submersibles, harvesters, etc. hence there is change in agricultural methods.

Today after the completion of twelve five year plans, the ground realities of rural India we notice a plentiful shake ups from where we started. Now we have electricity, educational institutions, health centers, transportation, cable tv is available, etc in our Indian rural areas even we can say that modernization have its reach upto the kitchens as well as bed rooms of rural houses.

This is the story of development of our rural areas, but there are some factors which are abashed, these do not have any change in their frame. In the list the

prominent is the mentality of urban towards rural. For example, Premchand depicted in his novel 'godan' that when Miss Malti reached the hori`s house then whole village brimmed out to hori`s house to notice her[5]. We still find such status in two ends of our society. Urban have the feeling of backwardness for rural people and on the contrary, rural people notices the life style of urban with goggling eyes. Secondly, Urbanians have the feeling of superiority, whereas ruralians assumes them inferior. This complex has not been eventuated by government efforts, whereas deeper trench has rendered with time.

Now we are talking about those facts, which are subject matters of the project,. These facts can't be measured and also not perceptible. These facts are also known as **non-physical parameters** of structures of society. These parameters are collective consciousness, cooperation, co participation, fraternity, affinity, affection, mutual understanding, respect for each-other, lack of all-round development thought, etc. In the swing, these emotional components of rural societal structure are responsible for creating harmonious and homogeneity environment, that is responsible for all-round development of pastoral area. What we do not have today? On National level the efforts has been made to enshrine this evolutionary environment since fifth plane (1974)[6.] Since then a number of programmes & schemes of rural development has been launched by governments. These programmes are multidimensional covering the all hopes for all development like:-

1) For Youth:- PMRY, Youth Leadership and Personality Development Programme organized by Nehru Yuve Kendra Sangathan (NYKS)[7], Technical and Resource Development Programme implemented by Rajiv Gandhi National institute for youth Development (RGNIYD)[8], Skill development programmes run by Ministry of labore and Employment, TRYSEM, MANREGA, etc.

2. For Women:- Beti Bachao Beti Padhao Scheme, Women Helpline Scheme, UJJAWALA , Working Women Hostel, Rajiv Gandhi National Creche Scheme For the Children of Working Mothers, SWADHAR Greh , Indira Gandhi Matritva Sahyog Yojana (IGMSY)[9]

3. For Children :- Kishori Shakti Yojana, Integrated Child Protection Scheme (ICPS), Rashtriya Bal Kosh (National Children Fund), Rajiv Gandhi Scheme for Empowerment of Adolescent Girls (RGSEAG) Sabla**,** Integrated Child Development Services(ICDS).

Many other programmes has been floated by Government but also they have undergone changes in their emphases and orientation[11]. That is to say that we won`t find desired result from these programmes. If we analyses the whole scenario then we get that some facts have been not consider which are very crucial regarding village hinterland and these are- 1. Proper sociological study has not made for ground realities.2. There are some irregularities on part of implementation. 3. Non physical parameters (structural component of society) have been ignored during preparation of programmes.4. Participation of people. 5. Heavy and boring paper work. 6. Bureaucratic orientation of these programmes.

Here we emphasizes on the third point i.e. Non physical parameters (structural component of society). The structural design of Indian village is completely differs from the rest of world regarding some it's unique elements like verna system, caste system, clan system, gotra system, purusharth system, etc. All these elements were induced in societal structure to strengthen social bonds between members of the society as well as between individual and society. Mono verna/gotra/ clan/ caste villages were alluded that all villagers are having blood

relation with each other and there interest was developed their clan. So the participation of all villagers was caused for unified goal, therefore the collective consciousness worked here and that was behind the participation. What we lagged in today? This is the pure Indian formula for society. Same caste/gotra/ verna causes feeling of fraternity or affinity between themselves, that strengthen the feeling of collectiveness among the villagers. That's why, in our whole history before English, we did not find any instance of peasant revolution in our ancient India. Villages were set free for their local happenings as described in Baudha text, Jain Text, Hindu Dharmashastra, Arthashastra, inscriptions of Ashok and others, inscriptions of uttarmeroo and shaktmangalam of cholas[12] . even during the rule of Muslim rulars the village system was not disturbed. Later mughals, when emperor was having less control over their Mansabdars , mansabdars disturbed the harmony of villages to suck in more & more taxes from their respective Jaghirs.

During East India company rule over India, the Britisher took It as their gaint jaghir and their prime goal was to extract wealth of east to glorify The Sun of West. For this they took up Indian villagers as their prime resource. Therefore, they applied lot of methods, tenure systems, to suck in wealth through land Rent. In starting, they raised up to 90% land rent over Indian villagers. For this they had to made lot atrocities over them, in other words they disturbed the system of Indian village that lasted from thousands of years. In their vicious circle they used Indian contractors to make atrocities over peasant for squeezing land taxes. This environment of highhandedness and exploitation had aroused peasant group to come forward and started agitating at the national platform against the happening. So for the first time in Indian History In second half of 19th century Bharteey Kisan and Bharteey Gram had its entry on National Arena. Before and during this era the non physical parameters were noticed in its full swing that can be observed in literatures and films created in pre independence era. There was slight deviation regarding these parameters in post independence. This may be because of our political system or government policies or new social developments. But after the year 1991 the environment of our country side is fully changed. The norms, values (Indian), ethics, emotions etc have great jolt and seems to be like a gas balloon which losses its roots.

1. www.mkgandhi.org/revivalvillage/
2. B.L.Grover; Adhunik bharat ka itihas/
3. Manish Thakur; Indian Village: A conceptual History; Rawat Publication, New Delhi; 2014; page no.- 1
4. Manish Thakur; Indian Village: A conceptual History; Rawat Publication, New Delhi; 2014; page no.-139
5. K.C.Srivastva; Pracheen bhaarat ka itihaas aur sanskriti; page No. 739-740.

Anshuman Upadhyay
Allahabad University, Allahabad.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-106-109
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

The Role of Biological Sciences in Socio-Economic Development

Danish Zaheer & Swatantra Kumar

Socio-economic development is measured with Indicators, such as GDP, life expectancy, literacy and levels of employment. Changes in less-tangible factors are also considered such as the intensification of agriculture in South America and elsewhere has been framed in international environmental science as a potentially land sparing process in public debate and by some scholars as a development issue. Agricultural intensification both permits a decoupling of agricultural production and deforestation and increases profits per unit area of land mechanized agriculture depends on infrastructure and a local land values and returns to labour. Potential include demand for local labour in complementary economic sectors demand for education and higher tax revenues. That familiar agriculture systems yet observations and theories of modern economies show that consolidation of farming into larger operations, which take advantage of economies of scale and verticalize agricultural processing lead to overall economic growth.

Agriculture is major economic source in all over the world Agriculture has major contribution in each country development. Developing nation are more dependent on the agriculture base economy many Asian and South American countries produce the major food for all over the world. Asia has a lot of agriculture resources. In an era of globalization and urbanization, various social, economic and environmental challenges surrounded advances in modern biological sciences. Biological science occupies a very strategic position in the socio-economic advancement and development of the nation in particular and the world at large.

Keywords- *Biological Science, Socio economic development, agriculture and Biotechnology.*

Introduction: Socio-economic development is the process of social and economic development in a society. It is measured with indicators, such as gross domestic product (GDP), life expectancy, literacy and levels of employment. For better understanding of socio-economic development, we must understand the meaning of social and economic development separately.

Social Development is a process which results in the transformation of social institutions in a manner which improves the capacity of the society to fulfill its aspirations. It implies qualitative change in the way the society shapes itself and carries out its activities, there is a close relation among environments, way of living and technology.

Economic development is the development of economic wealth of countries or regions for the well being of their inhabitants. Economic growth is often assumed to indicate the level of economic development. Economic growth refers to the increase of a specific as real national income, gross domestic product or per capita income.

The intensification of agriculture in South America and elsewhere has been framed in international environmental science as a potentially land sparing

process in public debate and by some scholars as a development issue. Agricultural intensification both permits a decoupling of agricultural production and deforestation and increases profits per unit area of land mechanized agriculture depends on infrastructure and a local land values and returns to labour. Potential include demand for local labour in complementary economic sectors demand for education and higher tax revenues.

We quite often read about different concerns of socio-economic development like poverty, unemployment, development of roads and bridges and facilities like hospitals, educational institutions in newspapers, magazines and other periodicals. The action making of intensification of agriculture presents a dilemma for development, with a prior uncertain socio-economic and environmental outcomes with the fundamental premise of agrarian reform in Brazil and throughout Latin America is that familial agriculture systems yet observations and theories of modern economies show that consolidation of farming into larger operations, which take advantage of economies of scale and verticalize agricultural processing lead to overall economic growth. This growth benefits the population through rising incomes and provision of public goods. Such as schools, healthcare and public safety, it has the potential to be dramatically more beneficial than the wealth and food security associated with owning a family farm.

Human Development focuses on expanding and widening of people's choices as well as raising the levels of well-being. It covers aspects of human life and people's choices like economic, social, political, cultural educational. physical, biological mental and emotional. The purpose of human development is to enlarge all human choices, and not just income. It regards economic growth to pay attention to its quality and distribution.

The Human Development Index (HDI) was developed in 1990 by a group of economists including Dr. Mahbub Ul Haq and Professor Amartya Sen. It has been used since then by United Nations Development Programme in its annual Human Development.

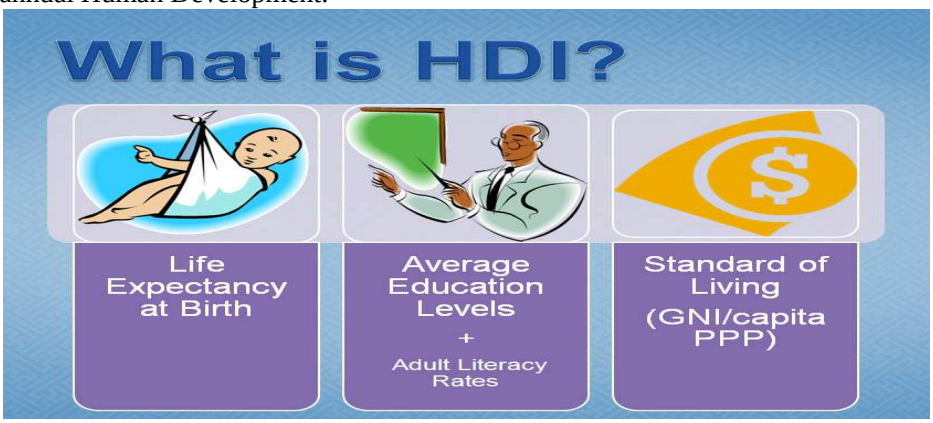

- Life Expectancy at Birth
- Average education level and adult literacy rate
- Standard of living (GDP, PPP)

India's rank was 135 in the year 2014

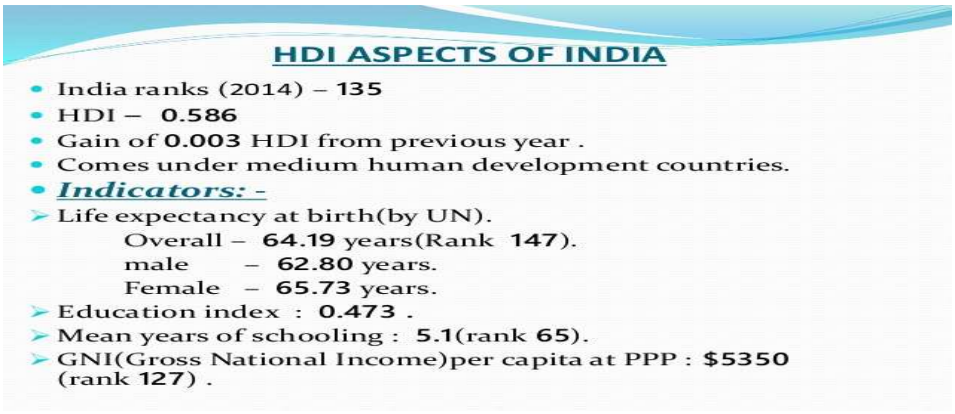

Sustainable Development: Sustainable development has emerged in this context. It is a broad concept that is defined as 'development' that meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. It is relevant only in the environmental does not focus solely on environmental issues. A primary goal of sustainable development is to achieve reasonable and equitably distributed level of economic and social well-being that can be perpetuated continually for many human generation.

Socio-Economic Development in India: The economy of India is the twelth largest in the world by market exchange rates and the fourth in the world by GDP, measured on purchasing power party.

Life expectancy and literacy rates and attainment of food security reduction in poverty, although official figures estimate that 27.5% of Indians still lived below the national poverty line of $ 1 (PPP), around Rs10 in nominal terms a day in 2004-05. India's economic growth has widened economic inequality across the country. 40% of children under the age of three are underweight and a third of all men and women suffer from chronic energy deficiency.

The Role of Biotechnology in the socio-economic advancement and national development overview.Biotechnology is a technique which involves the application of biological organisms or their components, systems or processes to manufacturing and service industries to make or modify products, to improve plants or animals or to develop micro-organisms for special uses. Since 1953, when James Watson and Francis Crick identified the structure of deoxyribonucleic acid (DNA) as the genetic basis of all living organisms, the scientific understanding of biological and genetic processes has dramatically

accelerated. The present molecular techniques such as doing, genetic manipulations using micro-organisms such as bacteriophages & bacterial plasmids as vectors & bacterial cells as hosts. Biotechnology revolution has spawned new industries focused on manipulating human, animal, plant and microbial agents to create unattainable products and services. Biotechnology occupies a very strategic position in the socio- economic advancement and development of the nation in Particular and the world at large.

Biotechnology application in environment: Biotechnology application to microorganisms for environmental purposes includes bioremediation, befouls, etc. Bioremediation is often successful and the most inexpensive method it is only one of many techniques for dealing with hazardous wastes. This biological treatment is desirable because it is inexpensive, can be done at the site of pollution and causes minimal physical disturbance to the surrounding area compared to other methods. The Biological treatment of the contaminated soil and water is increasingly gaining popularly and acceptance though the technological advancement involved favours the industrialized countries due to limited access to these environmental technologies by developing countries which often lack the environmental regulatory framework for the application of biological treatment.

Conclusion: The analysis presented in this article have shown the strong impact on public well being. This case study points- the need to integrator historical and political economic view into our landscape and population wide models. Biotechnology revolution has spawned new industries focuses manipulating human, animal, plant and microbial agents to create unattainable products. They play this vital role because of the simplicity of their genome, their short generation time, case of manipulation, their use of synthetic medium for growth among other factors. This therefore implies that biotechnology occupy a very strategic position in the socio-economic advancement and development of the national in particular and the world at large. This benefits the population through rising incomes and provision of public goods.

References:

1. Agrawal, A.N. Indian Economy: Problems of Development & Planning, Wiley Eastern Limited, New Delhi, 1991.
2. Hornback, Richard. 2012 "The Enduring Impact of the American Dust Bowl: Short & Long-Run Adjustments to Environmental Catastrophe. "American Economic Review 102(4): 1477-1507
3. Lange, Fabian, Alan & Paul, The Impact of the Boll Weevil, 1892-1932, 2009.
4. Sen, A. & Jean Dreze. 1998. India: Economic Development & Social Opportunity United Nation. 1963. Population Bullatin of The United Nation. New York: U. N.
5. VanWey, 2013. Socio economic Development & Agricultural Intensification, Philosophical Transaction of the Royal Society, Biological Science 368(1619): 1-7

Danish Zaheer
Research Scholar (Life Science)
Swatantra Kumar UGC NET (Educationa)
Research Scholar (Social Work)
Nehru Gram Bharati Vishwavidyalaya Allahabad

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-110-113
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Parsi Ethos and Ethnic Anxiety in Rohinton Mistry's *Such A Long Journey*

Jyoti Sharma and Arun Kumar Joshi

The migration of ethnic groups, compelled by various social, economic, political and religious compulsions is generally accompanied by unprecedented pressures and challenges of living in multicultural spaces for the migrant ethnic minorities as they are viewed with suspicion, even antagonism by the host community. They find themselves in a dilemma of selection between identity and assimilation. The Parsis when migrated to India also had to face the same enormous challenge of maintaining their cultural identity on one hand and on the other, merging into the culture of the host country. Despite the complex and formidable challenge, Parsis assimilated themselves with the mainstream and repaid the benevolence shown to them by India. But today theirs is an endangered community, facing physical as well as cultural extinction due to various factors. Rohinton Mistry, a Parsi immigrant writer, is very sensitive towards various anxieties felt by his community and has tried to immortalize this endangered species by capturing its quintessential ethos in his writings. Present paper focuses on the Parsi ethos, community consciousness, ethnic anxiety and problem of survival as presented in his novel Such A Long Journey. He reflects major problems and prejudices, aspirations and ambitions, eccentricities and idiosyncrasies, identity crisis and confusion of the Parsi community in the novel and attempts to familiarize the non-Parsi world with the Parsi faith, values and ways of life.

Key-words: exodus, ethnocentric, ethos, ethnic anxiety

The exodus of Parsis from Persia to India in the 7th century A.D. to escape religious butchering from Islamic invasions is a sort of proof which maintains that the act of migration or transfer of population is not a modern development. The ethnic groups, out of various social, economic, political and religious compulsions, have sought asylum in different parts of the globe from time to time. In most cases such a migration is accompanied by unprecedented pressures and challenges of living in multicultural spaces for the migrant ethnic minorities as they are viewed with suspicion, even antagonism by the host community. In a multiethnic nation, a cultural clash as a result of the reluctance of the dominant culture to absorb the immigrant cultures does not come as a surprising phenomenon.

The Parsis who first settled in the hospitable environs of Gujrat, with the condition of marginally off-loading their cultural baggage, later scattered to Bombay and other western parts of India. They found themselves caught in the dilemma of selection between identity and assimilation. There was a challenge before them of maintaining their cultural identity on one hand and on the other, merging into the culture of the host country. Despite the complex and formidable challenge, Parsis assimilated themselves with the mainstream and repaid the benevolence shown to them by India. In relation to their number (which is less than a hundred thousand in total population of India), their achievements and important roles in every crucial development of life can truly be described as outstanding. Their contribution in *Politics (Dadabhai Naoroji, Sir Pherozeshaw Mehta, Dinshaw Wacha and K.F. Nariman), Industry (Jamshedji Tata), Science (Dr. Homi Bhabha), Law (Nani A. Palkhivala), Army (Field Marshall Sam Maneckshaw) and Music (Zubin Mehta)* is a testimony to the fact that Parsis have a wonderful ability to change with time, adapt in a new environment and assimilate in the wider cultural life of Indian society. Their loyalty to the nation is unquestioned and the assuring words of **"the Grand Old Man of India"** make it very clear: *I have never worked in any other spirit than that I am an*

Indian, and owe my duty to my country and all my countrymen. Whether I am a Hindu, a Mohemdan, a Parsi, a Christian or any other creed, I am above all an Indian. Our country is India, our nationality is Indian." (Dadabhai Naoroji)

In the post-colonial scenario, there is no denying the fact that though Parsis have been living in India for more than one thousand years and are the most urbanized community in the country, yet theirs is an endangered community, facing physical as well as cultural extinction. Speedily falling birth rate, no marriages or high average age of marriage, inter-community marriages, non-acceptance of the children of Parsi women married outside the community, high economic pressure of living and the general social norms-all these factors are the reasons behind the sharp decline in the populace of the community. **Aditi Kapoor** warns in her article, that *unless something is done to augment their fast depleting numbers and to revive their religion, the Parsis after an illustrious past could just fade out in oblivion. (Kapoor)*

Such a perception is shared and represented by many Parsi creative writers. Most of the post Independence Parsi writing in English is ethnocentric. Parsi novelists like *Rohinton Mistry, Firdaus Kanga, Dina Mehta, Bomen Desai and Bapsi Sidhwa* have reflected through their works major problems and prejudices, aspirations and ambitions, eccentricities and idiosyncrasies, identity crisis and confusion, the ethos and ethnic anxiety of the community. These writers express Parsi emotion caught in diasporas. As observed by **A.K.Singh**, …*their works exhibit consciousness of their community in such a way that community emerges as a protagonist from their works though on the surface these works deal with their human protagonists.(Singh 66)*

The novel *Such A Long Journey* is all about the life and times of Gustad Noble, an aging Parsi. Gustad, his wife Dilnavaz, their two sons Sohrab and Darius and a daughter Roshan live in the Parsi residential colony of Khodadad Building in Bombay. He is a devoted family man struggling hard to keep his family out of poverty and shortage. But at a point in the novel Gustad and his family begin to fall apart. His elder son Sohrab shatters Gustad's dreams to the ground by refusing to get admitted in the Indian Institute of Technology, preferring instead to study literature. Various tormenting incidents follow in quick succession in Gustad's life making it a suffering in incarnation: his daughter, Roshan falls mysteriously ill; he struggles hard with the memories of his financially sound and emotionally balanced past, especially at the financially tough and emotionally perturbed time; his intimate friend Major Bilimoria disappears and then passes away in suspicious circumstances; he loses his co-worker and close friend Dinshawji; he himself unwittingly gets involved in illegal activities, laundering money through his bank, purportedly to support the aspirations of East Pakistan, but actually as part of an elaborate embezzlement scheme by Indian government officials. His conflicts with his eccentric neighbours; death of Tehmul, a mentally disabled character, who brings out the tender side of Gustad's personality and finally the destruction of Gustad's sacred wall by municipal authorities, destroy his mental peace. The outside world with its political corruption, conspiracy, treachery, betrayal and impending war add to his suffering. However, Gustad, in the end, *Like Oedipus, bows to the will of Providence. . . and finds in compassion and endurance, a dignity and greatness withstanding all that fortune keeps in store for him (Selvam 37)* He triumphs all the trials of his life by realizing that things may not always be in his control. He limits his expectations, forgives his son and accepts life as it comes with a hope of reaching a suitable destination at the end of his life-journey. Mistry creates Gustad as a devout Parsi, who offers his *orisons to Ahura Mazda and performs his Kusti regularly.*(SALJ 1) Religions for him are *not like garment styles that could be changed at whim or to follow fashion* and he strongly believes that *all religions were equal . . . nevertheless one had to remain true to one's own.* Like all Parsis, he identifies with the Western culture and takes pride in the fact that his children are fluent in English.

Celebrations and ceremonies, festivals and prayers, religious and culinary practices, rites and rituals are accurately captured as they are important elements of Parsi identity. The Zoroastrian customs and rites are described in great graphic detail in the novel as is clear from the account of the ceremonies related to the last rites. The prayers preceding the funeral ceremony, the actual ceremony itself, the Tower of Silence and the body-disposal are presented at length in the novel. Last rituals at the death of Dinshawji are described in detail: *…after the prayers are said the rituals performed at the Tower of Silence, the vultures will do the rest when the bones are picked clean and the clean bones gone to proof that Dinshawji is in peace.(SALJ 223)* Even The Tower of Silence is described geographically: *It had a little verandah in the front leading to the prayer hall and bathroom at the back where the deceased would be given the final bath of ritual purity."(SALJ 246)*

Mistry also points at certain superstitions that Parsis believe in, for example not keeping cats as pets as they never take bath, not killing spiders, eating only female chicken and never a cock etc. There is clear description of rituals or *Jaadu-Mantar* performed by Dilnavaz and Miss Kutpitia with chillies, lemons, nailclippings and tails of lizards as remedies to get rid of the unfortunate happenings in Gustad's house. Dilnavaz has a reflex habit of saying 'touch wood' and touching any wooden item nearby to avoid any untoward miss-happening to her family.

Parsis are known to have a fond obsession for rising to higher intellectual echelons. Their drive towards elitism is what presented by Mistry in Gustad's earnest wish for his son Sohrab to get admitted in the prestigious IIT, and then a sense of something lost at the latter's throwing over a chance of admission in IIT.

The novel is also replete with instances of Parsi ethnic anxiety and their fears of losing identity. The Parsi enclave Khodadad, enclosed by a wall used for defecation and loitering by pedestrians, itself symbolizes the decline of the community. Mistry explains the Parsi anxiety and a sense of being marginalized through Dinshawji when he remembers how their burial rites had been mocked at by Shiv Sena which abused and threatened the community thus: *Parsi crow-eaters, we'll show you who is the boss.(SALJ 39).* As a member of minority community he voices his concern about rising communal forces. Dinshawji considers Shiv Sena a real threat to the Parsi identity.: *No future for minorities, with all these Shiv Sena politics and Marathi language nonsense.(SALJ 55)…we have that bloody Shiv Sena wanting to make the rest of us second class citizens."(SALJ 39)* The growing fundamentalism and political power of the Marathas make the Parsis in the novel feel insecure as they believe it would upset social harmony in Mumbai and create chaos all around: *Wait till the Marathas take over, then we will have real Gandoo Raj. (SALJ 73)*

The ethnic anxiety is also articulated through **Dinshawji's** fear of loss of identity, connection & heritage by the change in the names of roads & localities. He worries, *one fine day the name changes. So what happens to the life I have lived? Was I living the wrong life, with all the wrong names? Will I get a second chance to live it all again, with these new names? Tell me what happens to my life? Rubbed out, just like that? Tell me!(SALJ 74)*

Nationalization of banks by Indira Gandhi was yet another factor considered as impending danger to the community. Banking had always been one of the traditional avenues of occupation for Parsis. Mistry explains how the nationalization of banks came as a jolt to the identity and honesty of the Parsi community who earlier were *the kings of banking…such respect we used to get. Now the whole atmosphere only has been spoilt. Ever since that Indira has nationalized the banks.(SALJ 38)* Anvar Sadath observes: *Gustad identified Shiv Sena and Indira Gandhi's*

authoritarian politics and anti-minority policies as two major threats that his community to deal with. (Sadhath 5)

A sense of insecurity and doubt of the Parsi community is obvious in the discussion of Dilnavaz and Dinshawji about the Parsi Feroze Gandhi. They believe that neither of Pt.Nehru and Indira Gandhi treated him well. Dilnavaz says that Nehru had never liked his son-in-law Feroze Gandhi. In fact she has conspiracy theory about his death. Dinshawji also agrees to it and remarks: *That was tragic. . . Even today, people say Feroze's heart attack was not really a heart attack.(SALJ 197)* Thus the conversation expresses the community's suspicion about the so-called natural death of Feroze Gandhi and implies the sense of insecurity that it feels.

The fictional figure of Jimmy Bilimoria in the novel is based upon a real life story. In a notorious scandal of 1971, the prime accused Sohrab Nagarwala, a State Bank of India cashier explained that he had received a phone call from the Prime Minister's office instructing him to hand over a large sum of money to a messenger. However his explanation was never officially accepted and he was charged with embezzlement and arrested. Later he died mysteriously in imprisonment just as Billimoria in Mistry's novel. Nagarwala's implication in the 'scandal' had terribly shaken the Parsi community, *since it was not very often that a Parsi made the newspapers for a crime.(SALJ 207).* The community refuses to accept a Parsi's indulgence in the scandal. Mistry presents fictional rendering of Bilimoria's story through a Parsi perspective and questions the nature of the hasty trial, the general ambiguity of the case and suspicion arousing death of Bilimoria during imprisonment. The entire Gustad-Bilimoria plot is an expression of ethnic anxiety and sense of insecurity of the Parsi community during the reign of Indira Gandhi government when innocent Parsis like Jimmy Bilimoria and Gustad Noble were made scapegoats for political ends.

Thus Rohinton Mistry faithfully captures ethnic anxiety and Parsi ethos in *Such A Long Journey*. The novel attempts to familiarize the non-Parsi world with the Parsi faith, values and ways of life by providing information about the myths, legends, beliefs, customs, ceremonies, rites and rituals of the community. Mistry's sensitivity of impending dangers to his community is expressed by his Parsi characters. He represents his community's ethnic anxiety and community consciousness in the novel through different narratives of his characters. They throw light on the existing and changing social, political, moral and religious milieu and express their views on the changes that affect their already dwindling community.

Bibliography :

- Kapoor, Aditi. The Parsis: Fire on Ice. Times of India. 14 May, 1989.
- Mistry, Rohinton. Such A Long Journey. Faber and Faber. 1995.
- Sadath, Anvar. The Agony of a Cultural Outsider: Rohinton Mistry's Such A Long Journey. The Criterion 12 (2013): 1-8 print
- Selvam, P. Humanism in the Novels of Rohinton Mistry, Creative Books, Delhi 2009.
- Singh, Avdhesh, Community in the Parsi novels in English, New Delhi: Creative. 1997

Web Sources:

- Dadabhai Naoroji, From the Presidential Address—I.N.C. Session, 1893, Lahore, http://www.inc.in/In-focus/263/Dadabhai-Naoroji-modern-India)

Jyoti Sharma
Lecturer in English, R.N.Ruia Govt.College,
Ramgarh-Shekhawati(Sikar).
Dr.Arun Kumar Joshi
Ex. Vice Principal, Govt.College, Bikaner.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-114-118
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

The effect of meditation on mental health and emotional intelligence
A Study on the students of the Jain diwakar college Indore (M.P.)

Shyam Sunder Pal

Background: It has been often claimed that mediation practice enhances mental health and emotional intelligence and decreases anxiety, depression, stress. The present study makes an attempt to empirically examine and verify the effect of meditation practice on mental health and emotional intelligence.

Objective: *The aim of the present study was to assess the effect of meditation on the mental health and emotional intelligence of adolescent students. Method: The study was conducted on a sample of 36 students (experimental group) who were chosen through purposive sampling method in a 12-week mediation intervention before and after the programme 36 demographically match (control group) subjects completed the same questionnaire at two time points with a 12 week interval period. Tools: As a tools Depression scale (karim 1998), Frustration scale (Chauhan), Ego Strength Scale (Hassan,1974) and Emotional Intelligence Scale Dr. Yashvisingh Agra, Dr. Mahesh Bhargawa Agra (1971) were used. Statistical analysis: statistical analysis was done with SPSS version 17, mean, SD, and t-test were used. Result: The findings revealed thatthe subjects who were regularly practicing meditation showed significantly better mental health and emotional intelligence as compared to those not practicing meditation conclusion: By way of conclusion it can be said that meditation training enhancesmental health and emotional intelligence as compared to those not practicing meditation training enhances mental health and emotional intelligence.*

Key Words: Meditation Mental health, Emotional intelligence.

Introduction -The concepts and methods of meditation have become an integral part of indianphilosophico-religious thought soon after their formulation and systemization (Eliade 1963, Werner 1977), meditation originated in India several thousand years ago as a system of physical and spiritual practices. It was formalized in the second century B.C. in the form of meditation sutras attributed to The scholar patanjali, Yoga is defined by the union of mind and body

Meditation was a method for joining regular important human bring with the divine principle of God you could taken it to a form of prayer which serves a similar purpose only praper tends to be verbal, while meditation tends to involve action.

Although originated in India. It has grown increasingly popular in the west. The mainstream medical community is beginning to recognizes yoga and meditation as an effective way to maintain good physical and mental health WHO defined health not merely as an absence of disease or infirmity but a state of complete physical, Social & mental well-being recently spiritual wellbeing has been added as the fourth facet of health.

Yoga includes several techniques physical postures (asanas), voluntarily regulatedbreathing (pranayama), Meditation and philosophical concepts (Nagarathna, R &Nagandra H. R. 1985), Asans are physical exercises. These reach deep into the yogis body, massaging important internal organs. Asans help cleanse & maintain the nervous and circulatory system, which automatically result in a healthier body and mind. Pranayama are breathing exercises. They can also help in keeping a person healthy by supplying a fixed amount of oxygen to the muscles and internal organs. Meditation is mental exercise.

Mental health is a concept that refers to the psychological & emotional well-being of a person, Being mentally healthy generally means that you are able to use your empirical capabilities to function well in society and go through everyday life with little or no difficulty. WHO (2001) defined mental health as-mental health is the capacity of the individual, the group and the environment to interact with one another in ways that promote subjective well-being the optimal development and the use of mental abilities (cognitive, affective and relational), the achievement of individual and collective goals consistent with justice and the attainment and preservation of conditions of fundamental equality. It is an index which shows the extent to which the person has been able to meet his environmental demands be it social, emotional, physical or psychological.

Anxiety and depression have been found to be a factor of paramount importance for general mental health and adjustment to life (Ciarrochi, Chan &Bajgar 2002, Kalafat 1997) Chronic exposure to anxiety, depression may have even very serious consequences such as cancer heart disease respiratory illness, strokes, authors and high blood pressure (Auick, Nelson & Quick 1990) A range of somatic & mental aments such as tension, headaches, allergies back problem, cold and flu, depression (Amoeba & Jan. 1990) anxiety imitation, tension, sleeplessness and may lead to health compromising coping strategies such as increased consumption of cigarettes alcohol and drugs (Quick, Nelson & Quick 1990). Studies on breath regulation denote the positive effects of pranayama like decreased respiration rate reduction in the practitioners Few longitudinal studies reported improved mental health among high & school students who practiced yoga training (Schechter H. 1978) and also among graduate students (Aron A, Orme-Johnson, D. &brubaker. P. 1981). Researchers have explored the association of the different yogic practices with several factors. The power of various yogic practices to influence the physiological functioning of the practitioners has been well established. The positive changes that occur in and other organic system during and after the yoga practice have been documented (e.g. Arpita, 1982, Bhole 1972, Uduca and Singh & Yadav 1973). Wulliemier(1996) integrated and applied the principles of a spiritual psychology to daily life by adopting pranayama which teaches to lead a balanced life and brings positive changes for the welfare of society and its citizens. Austin, E, Saklofiske, D & Egan V (2005) found a positive relationship between emotional intelligence and stress management cooper, C.L. (1994) studies tat employees who learned the yoga program showed improved job performance in comparison to control participants. It can be tool for self-aporaisal and self enhancement as suggest by Duran, A. N., & Ray, L (2004) who found that yoga is an effective measure for self-development and self-management. In the light of above discussion it is reasonable to presume that the general training in yoga may influence mental health and emotional intelligence.

Objective- The major objective of the present study was to examine the effect of practicing yoga on the mental health and emotional intelligence of adolescent students.

Hypothesis- It was hypothesized that the experimental group would differ significantly on better mental health & emotional intelligence as compared group not practicing yoga.

2. Meditation training increases the subjects mental health.

3. Meditation training increases the subjects emotional intelligence.,

Method- The method of study was semi experimental withpretest and post – test and control group design.

Participants- The participants for the study were drawn purposely from jaindiwakar college in Indore M.P. of one co- educational college of B.com and 1st

year students aged between 18 to 21 year. Out of 72 participants, 36 participants of the experimental group and 36 control group and were matched for age, gender and education. Experimental group of 36 participants completed the yoga intervention (40%female, 60% male, age range 16-20 years, mean 18.06 ± 2.61yrs. SD 4.02± 1.26 and also completed questionnaires before and after the course period. Among the 36 control group participants (60% female, 40% male age range 15-21 yes, Mean 18.01±2.82yrs. SD3.16±1.81 yrs completed both sets of questionnaires in sessions. In this sample experimental group were practicing meditation for 12 weeks and control group were not practicing any yogic technique. The yoga group was practicing meditation in the morning time regularly whereas the other control group or non-yoga group went on with their routine college work.

Tools- Following tools were used to measure mental health and emotional intelligence. ***1.*** *Personal data sheet made by researcher.* ***2.*** *Depression scale (Karim 1998).* ***3.*** *Frustration scale (Chauhan).* ***4.*** *Ego strength scale (Hassan 1974)* ***5.*** *Emotional intelligence scale (EIS). Dr. Yashvisingh Agra, Dr. Mahesh Bhargawa Agra (1971)*

Procedure- A proper rapport was established with subjects and they were exposed to above mentioned tools. The yoga group was practicing the morning time regular where as the other control group of non-yoga group went on with their routine college work, both groups were administered questionnaires before and after twelve week yoga programme. Data were obtained and the response sheets were scored individually for each subject. Statistical analysis was done with the help of mean, SD and t ratio.

Result and discussion- After necessary statistical analysis results were obtained.

Table 1- Descriptive Statistics of adolescent children on ego strength variable

Group	Pre – test			Post - test			'T'	P value
	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
Experimental Group	36	19.2	2.23	36	11.4	2.12	10.07	0.01
Control group	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
	36	18.2	2.56	36	16.2	3.14	1.48	N.S

The obtained t value is 10.07 (Experimental group) which was significant at 0.01 level of confidence. It means that both condition (Pre and Post) differ significantly on ego strength variable. On the contrary in control group both condition (Pre and post) do not differ significantly on ego strength variable

Table 2- Descriptive Statistics of adolescent children on ego strength variable

Group	Pre – test			Post – test			'T'	P value
	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
Experimental Group	36	26.12	2.12	36	14.84	3.12	9.82	0.01
Control group	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
	36	25.84	3.12	36	23.91	2.62	1.82	N.S

The obtained t value is 9.82 (Experimental group) which was significant at 0.01 level of confidence. It means that both condition (Pre and Post) differ significantly on ego strength variable. On the contrary in control group both condition (Pre and post) do not differ significantly on ego strength variable

Table : 3- Descriptive Statistics of adolescent children on ego strength variable

Group	Pre – test			Post - test			'T'	P value
	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
Experimental Group	36	14.2	2.84	36	16.7	3.12	8.12	0.01
Control group	N	Mean	SD	N	Mean	SD		
	36	16.2	3.12	36	17.4	3.84	1.92	N.S

The obtained t value is 8.12 (Experimental group) which was significant at 0.01 level of confidence. It means that both condition (Pre and Post) differ significantly on ego strength variable. On the contrary in control group both condition (Pre and post) do not differ significantly on ego strength variable

Table : 4- Descriptive Statistics of adolescent children on emotional intelligence variable in experimental group.

S. No	Factors of emotional intelligence	Pre-test mean value	Post-test mean value	't' test
1	Self-awareness	14.74	17.89	3.42**
2	Empathy	16.93	20.94	5.84**
3	Self-Motivation	21.82	24.74	2.22*
4	Emotional stability	16.3	18.23	3.78**
5	Managing relation	16.17	19.21	3.89**
6	Integrity	12.4	14.8	7.8**
7	Self-development	8.12	10.42	4.9**
8	Value orientation	8.45	10.7	6.2**
9	Commitment	8.15	10.89	6.95**
10	Altruistic behaviour	7.37	9.42	5.2**
Aggregate		**130.45**	**157.24**	**8.35****

* Significant at 0.05 level. ** Significant at 0.01 level

Discussion- As table 1 showed that in the yoga group in pretest condition the mean is 19.2 and meditation intervention in posttest measure mean is 11.4 Here low score indicates less depression and it does mean that after meditation practice recovery rate of depression is very high. Where as in non-yoga group difference from 18.4 t 16.02 only since meditation practice was not. Introduced in this group. This marginal difference many be attributed to rest or some daily activities.

As Table 2 showed the adolescent children felt more frustration in pretest but after meditation practice frustration have been reduced to some extent. Here low score indicates less frustration and it does mean that after mutation practices recovery rate of frustration is very high. Whereas in non- yoga group difference in mean score in pre & posttest measure is very less. It reduces form 25.84 to 23.91 only since mutation practice was not introduced in this group.

As table 3 showed that adolescent children felt more ego strength in posttest condition in comparison to pretest condition since meditation training was introduced in experimental group.

Table 4 indicated that the posttest mean value for all the participants was higher than the pretest mean value on all the factors of emotional intelligence and this difference was found significant, which means that the practice of meditation program enchanced their emotional intelligence. This fact is further supported by the aggregates significant t-test score of 8.35 which was significant at 0.01 level. As supported by the study carried over by Itliong- Maximo (2006), who found positive relationship between spiritual intelligence and stress management, between religious commitment and spiritual intelligence, between emotions- focused coping and SQ. This stresses the significant and positive relationship between emotional intelligence and spiritual intelligence. As far as control group is concerned analysis intelligence. As far as control group is concerned analysis of raw data showed some improvement in such variable (Self- Motivation, Altruistic behavior and Self-awareness) but this is not on the level of statistical significance. So it is not displayed here as a table.

All the participants exhibited higher emotional intelligence after the practice of mediation program. All mental tensions, anxieties, negative traits, attitude, attachment, aversions, pride and prejudice, anger, etc. got dissolved in the inner

world though regular meditation practice as Murthy (1988) found difference in the form of better functioning of neural physiological aspects of the participants following meditation teaching in comparison to the participants not following meditation practice. The higher emotional intelligence mean in the post test for all the factors showed that the participants were self-aware, empathic, self-motivated, emotionally stable, committed, able to manage relationships had integrity scope for self development value orientation and altruistic behavior.

With the practice of meditation training these students fet tremendous change in their perception towards their problems and were happier even when living with such odds. There was an enhancement in their coping skills. This study also showed that people who regularly engage in meditation practice are healthier and happier than those who donot. These practitioners faced or are still facing many odds in their life but they are happier with good mental health and her emotional stability than before.Their mental health and emotional intelligence were enhanced with regular practice of meditation. The practice of meditation could be helpful for the welfare of the ones suffering from poor mental health and emotional problems.

Conclusion: The findings of the present study clearly showed significant effect of practicing meditation on mental health and emotional intelligence. The positive effect of practicing meditation evident in the observed group andshowed better mental health recovery and enhanced emotional intelligence of yoga group as compared to those not practicing meditation. Overall the findings of the resent study extend the hypothesis that meditation practice improves mental health and emotional intelligence.

References

- Arpita (1982) The role of breaths in current clinical intervention Research. Bulletn, Himalayan International institute 4, 22-31
- Bhole, M.V. (1972) Pulse control and yoga practices yoga Mimamsa, 15, 39-43.
- Ciarrocih, j;Chan, A.Y. &Baigar, J. (2002): Measuring mental health in adolescents personally and individual differences, 32(2).
- Eltade, M. (1909) yoga immortality and freedom, princeton University press. Goldberg, D.P. (1979): Manual of general health questionnaire London, NFER.
- Kalafat J : R.P. weissberg : T.P. Gullotta; B.A. Ryan & G.R. Adama (1997) The prevention of youth suicide. Healthy children 2010 : Enhancing children's Wellness (vol 8) pp 175-180 Thousand Oakes CA: Sage.
- Nagarathna R. & Nagendra H.R. (1985) : Yoga for bronchial asthma : a controlled study, British Medical journal, 291.1077.1079.
- Murthy, V.S.R. (1988): Neurophysiologic basis of Raja Yoga in the light of sahajmarg, India, Microform Book.
- Quick, J.C. : Nelson, D.J. & Quick, J.D. (1990) : stress and challenge at the top The paradox of the healthy executive, Chichester Willey.
- Schectar, H. (1978) :A psychological investigation in to the source of the effect of the transcendental meditation technique Dissertation abstract international 38(7-b): 3372-3373.
- Werner, K. (1977) : Yoga and Indian philosophy. Delhi MotilalBanarsidas.
- W.H.O. (2001): The world health report, mental health. New understanding, New hope (WHR 2001) Geneva, WHO.
- Wulliemier, F. (1996) : Psychology & its role in spirituality, Meditation-Sahaj Marg Educational Series, 1, 190-203.

Dr. Shyam Sunder Pal
Asst. Prof. (Guest Faculty)
Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak (M.P)

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-119-120
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397,UGC-47966

Terrorism versus Tourism

Suman Rai

Introduction:-Terrorism is the systemic use or threatened use of violence to intimidate a population or government for political, religious or ideological goals. according to the Home Ministry, poses a significant threat to the people of India. Terrorism found in India includes ethno nationalist terrorism religious terrorism left wing terrorism and narcoterrorism[1].

Definition:-*The 8th report* on terrorism in India published in 2008 define terrorism peacetime equivalent of war crime[2]. According to Indian Government, Terrorism is an anxiety inspiring method of repeated violent action, employed by (semi) clandestine, individual group are state actors for idiosyncraticcriminal or political reasons, whereby the direct targets of violence are not the main targets. The immediate human victims of violence are generally chosen randomly or selectively from a target population, and serve as message generates. Threat and violence-based communication processes between terrorist organization, victims, and main targets are used to manipulate the main target turning it into a target of demands or a target of attention, depending on whether intimidation, coercion, or propaganda is primarily sought.

Kinds of terrorism:-

1. **Narco–terrorism :–**Narco terrorism is term coined by former president Fernando BelaundeTercy of Peru in 1983 when describing terrorist-type attacks against his nations anti-narcotics police.
2. **Cyber Terrorism: -** Cyber- terrorism is the leveraging of a target's computers and information technology, particularly via the internet. to cause physical, real-world harm or severe disruption with the aim of advancing the attacker's own political or religious goals. As the Internet continues to expand and computer systems continue to be assigned more responsibility while becoming more and more complete and interdependent, sabotage or terrorism via cyberspace may become a more serious threat.
3. **Eco-terrorism: -** The eco-terrorism is a neologism used to describe threats and or acts of violence (Both against people and against property) sabotage vandalism property damage and intimidation committed in the name environmentalism.
4. **Bio Terrorism: -** Bio terrorism is terrorism by intentional release or dissemination of biological agents (bacteria, visues or toxins) these may be in naturally-occurring or in a human-modified form.
5. **Nuclear – terrorism: -** Nuclear terrorism can be used to describe any of the following terrorist assaults.
   a. Use of nuclear weapons against targets.
   b. Use of radiological weapons or dirty bomb- against a target.
   c. An attack against a nuclear power plant.
6. **Agro Terrorism :-** Responses to terrorism are broad in scope. they can include re-alignments of fundamental values; The term counter-terrorism has a narrower connotation implying that it is directed at terrorist actors. the response should be two pronged, one by the state the other by the public.

"You can not begin to help the world" Said Confucius, "unless you begin to call things by their right names"

According to the home ministry, poses a significant threat to the people of India. terrorism found in India includes ethno nationalist terrorism religious terrorism left wing terrorism and narco terrorism..

The 8th report on terrorism in India published in 2008 defined terrorism as the peace time equivalent of war crime. An act of terror includes any intentional act of violence that causes death, injury or property damage, includes fear and is targated against any group of people identified by their political, philosophical, ideological racial, ethnic, religious or any other nature. This description is similar to one provided by the united Nations in 2000.

Terror Group in India:- SATP (South Asian Terror Portal) has listed 130 terrorist groups that have operated within India over the last 20 years; many of them co-listed as transnational terror networks operating in or from neighboring. South Asian countries such as Bangladesh, Nepal and Pakistan. Of these 38 are on the current list of terrorist organisations banned by India under its first Schedule of the UA (P) Act 1967. As of 2012 many of these were also listed and banned by the united states and European union.***How terrorism Affects Tourism:-*** After an attack, travelers may change destinations temporarily, but they won't stop exploring the world. In the past year, suicide bombers and terrorist groups have targeted specific areas and arenas that gave them a world stage and a chance to strike travel at its heart. these were the attacks in a commercial area of Jakarta frequented by tourist and expast, on tourists in Tunisia, and tragedies in Turkey, Pakistan, Burkina Faso, Paris, Brussels, and the Ivory Coast But in the wake of such public assaults, how is tourism affected. One of the reactions we see from travelers is that they change destinations, but they do not tend to stop travelling as a whole.

A very good way of getting people to go to destinations which have suffered at the hands of terrorist is to cut prices, overall the figures suggest that the tourism industry in countries enduring long term strife, such as Egypt suffers more thenthose affected by individual terror attacks. So to tackle it, the best method is to see to it that conditions that breed terrorism are not allowed to carry on unabated in this, the general public of the country will also have significant role to play.

Endnote

1. Floppnom B, inside terrorism, Columbia University Press, 2006, ISBN 978-0231126984,
2. Combating Terrorism Protecting by Righteourness, Administrative Reform Commission, Government of India (June 2008).
3. The Sunday times February 1996.
4. www.library.cornell.edu/colldev/mideast/terror/2htm.
5. 1988.Anti-shipping activity Messages (Assam)
6. "operation Cactus" www. bharat-rakshsk.com/CONFLICTS/operation cacts.html.

Dr. Suman Rai (Principal)
C.B. Singh Law College, Holagarh, Allahabad.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-121-127
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Corporate Social Responsibility in Coal Mining Region and Rural Development in Dhanbad Region

Randhir Kumar

CSR has become an important attribute of business in the present times. With the Government and the civil society emphasizing the need for the companies to be socially and environmentally responsible. Mining in India deserves due credit as it has supported the industrial growth in India but fact also remains that it has led to impacting the environment and social life of the community located nearby. The corporate social responsibility of mining industries has not been satisfactory. Although there are laws and regulations, amended time to time, effectively they have failed to protect from manipulation and exploitation of environment and social laws by mining industries. Enforcement of laws has of course led to compliance in certain areas but Corporate Social Responsibility is beyond compliance and seeks mining industries to undertake voluntary endeavors in order to minimize the adverse impacts on the environment and society. The biggest issue in the the coal mining region is the Rural Development. The mining areas people are required a better development and rehabilitated in a participative manner. More so far the coal industry which is seen as a spoil sport to the environment. The present paper attempts to discuss about Rural Development through CSR in the area of Dhanbad, coal mining region.

Keywords: *Corporate Social Responsibility, Rural Development, Rehabilitation program and Environmental challenges etc.*

Introduction: Mining is one of the oldest industries of India and the coal industry is a major component of the mining sector which is largely under the government control today with public sector Coal India Limited (CIL) being the major player having control over more than 80% of production. There was a time when coal sector was under private ownership but in the early seventies, Union Government nationalized the Indian coal industry leading to formation of CIL.

Corporate Social Responsibility(CSR) is a concept whereby organizations serve the interests of society by taking responsibility for the impact of their activities on customers, employees, shareholders, communities and the environment in all aspects of their operations. Corporate Social Responsibility is a Company's commitment to operate in an economically, socially and environmentally sustainable manner, while recognizing the interests of its stakeholders. This commitment is beyond statutory requirements. Corporate Social Responsibility is, therefore, closely linked with the practice of Sustainable Development. Responsible Business is the core of CSR and sustainability and it refers to the commitment of an enterprise to operate in an economically, socially and environmentally sustainable manner while balancing the interests of diverse stakeholders. Stakeholders include employees, investors, shareholders, customers, clients, Government and non-government organizations, local communities, environment and society at large. CSR has to be viewed as a way of conducting business, which enables the creation and distribution of wealth for the betterment of its stakeholders, through the implementation and integration of ethical systems and sustainable management practices.

Rural development in developing countries like India revolves around issues related to agriculture, social-economic standards and infrastructure. The term ‘Rural

Development' is of focal interest in India. Rural Development is a process of developing and utilizing natural and human resources, technologies, infrastructure facilities, institutions and organizations and government policies and programs to encourage and speed up economic growth in rural areas, to provide jobs and to improve the quality of rural life towards self sustenance. The process of Rural Development may be compared with a train in which each coach pushes the one ahead of it and is in turn pushed by the one behind but it takes a powerful engine to make the whole train more.

CSR in Coal Mining and the Environmental challenges: Coal mining particularly the surface mining, requires large hectares of land to be temporarily disturbed. This leads to a number of environmental challenges such as soil erosion, dust, noise and water pollution, and impacts on local biodiversity. Coal India Ltd is aware of these challenges and actively initiates step to minimize impacts on all aspects of the environment. By carefully pre- planning projects, implementing pollution control measures, monitoring the effects of mining and rehabilitating mined areas, the company tries to minimize the impact of its activities on the neighboring community, the immediate environment and on long-term land capability. Coal mining impacts the environment and ecology to an unacceptable degree, unless carefully planned and controlled. We know that some environmental impacts are felt immediately, while others have longer gestation period.

Corporate Environment Responsibility: (a) The Company shall have a well laid down Environment Policy approved by the Board of Directors. (b) The Environment Policy shall prescribe for standard operating process/procedures to bring into focus any infringements/deviation/violation of the environmental or forest norms/conditions. (c) The hierarchical system or Administrative Order of the company to deal with environmental issues and for ensuring compliance with the environmental clearance conditions shall be furnished. (d) To have proper checks and balances, the company shall have a well laid down system of reporting of non-compliances/violations of environmental norms to the Board of Directors of the company and/or shareholders or stakeholders at large.

More than half of coal resources in India are located in forest areas. Most coal blocks allocated, have been in or adjoining forest areas. It is anticipated that there will be a tremendous increase in demand for coal. As coal blocks are found in areas inhabited by people, it is quintessential to look after their rehabilitation of project affected families. Also, the problem of loss of forest cover will accentuate as the need to access forest resources will also increase. Loss of forest cover has, as we know, a whole gamut of consequences. It adversely affects the biodiversity and natural ecosystems also compounding the problem of climate change, by reducing the number of sinks for carbon sequestration. Forest areas in many coal producing states are sources of non-timber forest products such *as mahua, tendu, chironji, bamboo, mushrooms, etc.* and hence are a major source of income for the people inhabiting those forests. With the loss of forests for coal mining, communities' dependent on these forest resources can possibly lose their traditional sources of livelihood.

Land Disturbance: Degradation of land is one of the most serious concerns arising from coal mining operations. Mining operations lead to disturbance of land and result in changes in topography and drainage pattern. As India has to ramp up its coal production, there will be large requirement of land for carrying out mining activities. Given the growing unavailability of land in India, there will be problems of land disturbance and also dumping of the waste created. Lack of proper land

reclamation and mine closure further compounds the problem of land degradation. To address the above mentioned concerns, Central Mine Planning and Design Institute (CMPDI) carries out studies of the immediate environment several years before a coal mine actually opens, in order to define the existing conditions and to identify potential problems. The studies look at the impact of mining on surface and ground water, soils, local land use, native vegetation and wildlife populations.

Mine Subsidence: Mine subsidence can be a problem with underground coal mining, whereby the ground level lowers as a result of coal having been mined beneath. A thorough understanding of subsistence patterns in a particular region allows the effects of underground mining on the surface to be quantified. Coal India Limited uses a range of engineering techniques to design the layout and dimensions of its underground mine workings so that surface subsidence can be anticipated and controlled. This ensures the safe, maximum recovery of a coal resource, while providing protection to other land uses.

Water Pollution: Effluents from coal mine workshops cause contamination and reduce dissolved oxygen level thereby disturbing the ecosystem of nearby small water bodies which in turn pollutes drinking water supply of rural people. Coal India Limited being the leading company in coal industry, incessantly strives to improve its water management in mine operation, aiming to reduce demand through efficiency, technology and the use of lower quality and recycled water. Water pollution is controlled by carefully separating the water runoff from undisturbed areas from polluted water coming from mine works. Clean runoff is discharged into surrounding water courses, while other water is treated and can be reused for dust suppression and in coal preparation plants.

Dust & Noise Pollution: Dust at mining operations can be caused by trucks being driven on unsealed roads, coal crushing operations, drilling operations and wind blowing over areas disturbed by mining. CMPDI suggests mining companies to reduce the dust level by spraying water on roads, stockpiles and conveyors. They told them to plant trees in buffer zones which also help in minimizing the impact of dust particles and create a positive impact on psyche of people living in those areas. Also, noise can be controlled through the careful selection of equipment and insulation and sound enclosures around machinery.

Rehabilitation of Displaced Community: Coal India Limited has introduced a liberalized new Resettlement and Rehabilitation Policy, 2012. The objective of the new policy is to provide greater flexibility in resettlement and rehabilitation of people affected by coal mining projects. It attempts to consolidate the different resettlement and rehabilitation practices to determine the rehabilitation packages best suited to local needs. CMPDI prepares mine plans and keep the need of the displaced people in mind during the planning process. Its try to address the apparent increase in air and noise pollution due to mining operations. Coal mining is only a temporary use of land, so it is vital that rehabilitation of land takes place once mining operations have stopped. CMPDI prepares a detailed rehabilitation or reclamation plan which is designed and approved for each coal mine, covering the period from the start of operations until after mining has finished. Mine reclamation activities are undertaken gradually with the shaping and contouring of spoil piles, replacement of topsoil, seeding with grasses and planting of trees taking place on the mined out areas. Care is taken to relocate streams, wildlife, and other valuable resources. As mining operations cease in one section of a surface mine, bulldozers and scrapers are used to reshape the disturbed area. Drainage within and off the site is carefully

designed to make the new land surface as stable and resistant to soil erosion as the local environment allows. Based on the soil requirements, the land is suitably fertilized and re-vegetated. Reclaimed land can have many uses, including agriculture, forestry, wildlife habitation and recreation. Central Mine Planning and Design Institute (CMPDI) carefully monitor the progress of rehabilitation and usually prohibit the use of the land until the vegetation is self-supporting. The cost of the rehabilitation of the mined land is factored into the mine's operating costs.

Health and Safety of Workforce: It is popular belief that coal mine workers lead a difficult life. But due to the dedicated efforts of Coal India Limited this popular dictum no longer holds true. CIL is committed to the safety of the workforce in their mines. Over the years, safety performance of CIL has improved significantly. CIL determined to improve the quality of life of all our workers and take every possible step for their well being. Regular health and safety checks are conducted for the workforce.

** CMPDI (Central Mine Planning & Design Institute Limited), an ISO-9001 company, was established in the year 1975 as a subsidiary of Coal India Limited (A Government of India Public Sector Undertaking) for rendering total consultancy services (i.e. from concept to commissioning) to Coal India Limited and its seven subsidiaries.

CSRand Rural Development Program: Coal India Limited has a well-defined CSR policy introduced w.e.f. 29.6.2010 based on the guidelines issued by Department of Public Enterprise for Central PSUs on CSR in April, 2010 which is also applicable to CMPDI. Improving the living condition of the poor and needy people of the society living in and around coalfields/mining areas in different parts of Dhanbad is the major objectives of the CSR activities. The CSR policy is operational within the radius of 15 Km of the project site and areas including Headquarters. Further CSR activities are also undertaken beyond mining areas within the respective State with the approval as per norms.

The CSR activities shall be need based.The CSR plan for each financial year is prepared by TSRDS (Tata Steel Rural Development Society) only after proper discussions to assess the needs have been held with the elected/ senior members of the communities where CSR activities are to be undertaken.

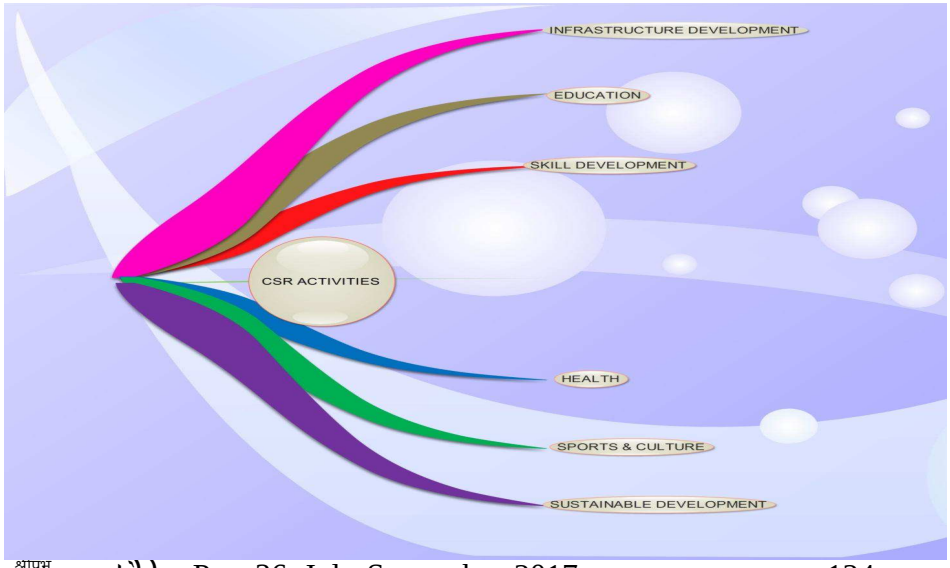

Tata Steel is also providing free clean drinking water as well as mine water to the villages located in the leasehold as part of its CSR activities. In financial year 2015, about 16200 meters of raw water pipeline and 23 water tanks (each having capacity of 4500 liters) were provided for domestic usage in villages with approx. expenditure of RS 52 lakhs). In financial year 2016, 5500 meters of pipeline connection & 10 water tanks covering 11 villages is proposed to be provided with an estimated expenditure of RS 62 lakhs. Besides carrying out regular periodic health checkup of their workers, 10% of the workers identified from workforce engaged in active mining operations shall be subjected to health checkup for occupational diseases and hearing impairment.The periodic health checkup of the workers is done regularly by the Occupational Health Department, Tata Central Hospital, Jamadoba. A PME (Periodic Medical Examination) center approved by DGMS where 20 % of the workers identified from workforce engaged in active mining operations are subjected to full medical checkup including hearing impairment checkup, etc. These results are regularly submitted to DGMS as per mines rules.

The Company already has an Environment Policy approved by the Managing Director and it addresses all the issues mentioned. Every month, the environmental legal compliance is submitted by Jharia Division to VP (Raw Materials) for onward submission and further review to MD and Head Office, Mumbai. Therefore, the status of adherence to the policy and compliance to Environmental laws and regulations is regularly discussed at higher levels. Any non- compliance noticed is corrected at divisional level. If any issue is beyond control, it is brought to the notice of higher management through the above channel. The Environment Cell has a separate fund for Environmental protection measures and for complying with legal requirements. The annual environmental expenditure for the financial year 2013-14 of Jharia division (comprises of 5 underground collieries, 1 open cast coal mine, 2 washer's projects & 1 Power plant) was 35.27 crores. The Project authorities shall advertise at least in two local newspapers widely circulated around the project, one of which shall be in the vernacular language of the locality concerned within seven days of the clearance letter informing that the project has been accorded environmental clearance.

Four ambient air quality monitoring stations shall be established in the core zone as well as in the buffer zone for monitoring PM10, PM2.5, SO2 and NOx. Location of the stations shall be decided based on the meteorological data, topographical features and environmentally and ecologically sensitive targets in consultation with the State Pollution Control Board. Monitoring of heavy metals such as Hg, As, Ni, Cd, Cr, in Respirable Suspended Particulate Matter (RSPM) etc. shall be carried out at least once in six months.

The Air quality monitoring stations are: ***1.*** *New Village Colony, Jamadoba* ***2.*** *Jamadoba Office Area 3.* ***Digwadih 12 No. Colony*** ***4.*** *6&7 Pits Kalimandir area*

Data on ambient air quality (PM10, PM2.5, SO2 and NOx and heavy metals such as Hg, As, Ni, Cr, etc.) and other monitoring data shall be regularly submitted to the Ministry including its Regional Office at Bhubaneswar once in six months. Random verification of samples through analysis from independent laboratories recognized shall be furnished as part of the compliance report.

Training & skill development of mining affected people: In order to provide maximum benefits to mining affected people, it is proposed to provide them training and develop their skills in multi areas as detailed below.

Training for educated youth

- Educated youth from displaced families who qualify for ITI admission in the District will be provided financial assistance by way of meeting the expenses of the course fee by the company, for two years of issue of Notification for Land acquisition for the mining Project. This facility can be extended, if necessary, with or without some modification in the scheme.
- Educated wards from displaced family who qualify for admission in Diploma in Engineering will be provided financial assistance by way of meeting course fee by the company for two years of issue of Notification for Land acquisition for the Project. This facility can be extended, if necessary, with or without some modification in the scheme.

Training for self employment: The villagers in the socio-economic survey expressing willingness to be trained, will be trained in differed skills so that they either are self-employed or can be absorbed in other occupations. The company will encourage self employment of the displaced families through training. The company will arrange for training of interested persons for increasing their skills through government agencies like ITI or any other institution of the State Government. The fields most viable and feasible for self employment these are:Dairy, Poultry, Mushroom Growing, Medicinal Plants growing, Fruit Planting, Vegetable Farming, Silviculture (Resham keet Paalan), Bee keeping, Achar, Jam, Jelly, Murabba, Paapar making, Growing & processing of spices, Rope, Basket, Chatai making, Bamboo crafting, Wood crafting, Agarbatti making, Horticulture, etc.Training in other areas are also being coordinated through the State Departments, Government, wherein the company shall provide financial assistance to the Project Affected People required for the training. Project Affected Persons shall also be provided training either in the Company's training center or in any other organization in the technical field, wherever necessary, to provide and develop their technical skill.

Self employment opportunities: Several of the rural people are trained in activities such as basket making, small businesses, tailoring, etc. It is thus important that these people are able to re-establish their economic activities. Besides, a lot of self-employment opportunities will be available to mining affected Persons, as given below. These are: Supply of milk in Mines canteen & new residents in township, Supply of vegetables in Mines canteen & new residents in township, Supply of food materials to Mines Canteen & new residents in township, Supply of confectionary items, e.g. Bread, biscuits, eggs etc. to Mines Canteen & new residents in township, Hotel & Restaurant, General Store, Sweets Shop, Flour mill, Supply and transporting of sand, Tailoring shop, Operating of Taxies/Autos, Small Workshop for repairing of machines parts, Herbal medicinal plants & Jetropha plantation, Poultry farming, Mushroom farming, Basket & rope making, Processing of medicinal & herbal plants, e.g. Alo-vera, Fruit growing, Processing of Fruits, e.g. Jam, Jelly, Achar etc., Plantation & marketing of Flowers, Supply of stationary items, Sheep, pigs, Bee keeping, Sale & repair shop for electrical items, Manufacturing of Bakery items, Supply of saplings for plantation, Supply of manures for plants & garden, Auto Repair shop etc.

Conclusion: In today's context, CSR can be seen as a means of helping companies to re-assess their role in society and their accountability to new stakeholders. Business can also play a role in creating new types of values such as social or environmental.In order to ensure better functioning of the coal mining industry ecological and social aspects are becoming increasingly significant. It is important for mines to consciously incorporate CSR into activities both in the

external and internal environment.

It is time that companies should take CSR as a means of transforming the society for sustainable development. The following changes in socio-economic status are expected to take place after the Rural Development program i.e., (i) The mining project would have a strong positive employment and income effect, both direct as well as indirect. Migrant and non-migrant ratio shall shift towards migrant side. This would happen because of better employment opportunities due to this project. (ii) The project would have positive impact on consumption behavior by way of raising average consumption and income through multiplier effect.

Reference:

- Annual report on CSR and sustainability, central mine planning and design institute limited. http://www.cmpdi.co.in/csr.php
- Pathak, P. (2007). Dhanbad - A historical perspective, Fifty Years of Dhanbad, Sandhan - A publication of Dhanbad District Journalists Association.
- Times of India. (2014). Rel Foundation spends Rs. 712 crore nm CSR in FY14.
- www.coalindia.in/Corporte_Social_ Responsibility_Final_Report_IV. pdf.
- Yakovleva, N. (2009). Corporate Social Responsibility in the mining industries, Ashgate.
- Half-yearly compliance report of the conditions of environment clearance issued by Ministry of Environment and Forest, New Delhi, for Digwadih colliery, Tata steel ltd., Dhanbad for the period October 2014 to March 2015. http://envfor.nic.in
- Jenkins, H. and Yakovleva, N. (2006). Corporate social responsibility in the mining industry: Exploring trends in social and environmental disclosure, Journal of Cleaner Production, Vol.14, pp.271-284.
- Hartman, A.& Howard, L. (1992). SME Mining Engineering Handbook, 2nd ed. Littleton, CO: Society for Mining, Metallurgy, and Exploration, Inc.
- Crickmer W, Douglas F, and Zegeer, D. A. (1981). Elements of Practical Coal Mining, 2d ed. New York, NY: Society of Mining Engineers, American Inst. of Mining, Metallurgical and Petroleum Engineers, Inc.
- Merritt, R. D. (1986).Coal Exploration, Mine Planning, and Development. Park Ridge, NJ: Noyes Data Corp.
- Bhattacharya, B. C. (2004). Proceedings of the Fifth Asia Pacific Industrial Engineering and Management Systems Conference.

Randhir Kumar
Research scholar (Ph.D) Dept. of African studies
University of Delhi.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-128-134
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Innovative Rural Marketing in Present Global Scenario

Subarna Sarkar

The Indian rural market has now emerged as the most appealing market providing endless opportunities to the marketers for market expansion and continuous growth. Two-third of country's consumers live in rural areas and almost half of the national income is generated here. The rural marketing is an integrated part of the rural development process.

First Phase-It is characterized by the concentrated effects of government to buildup the social infrastructure through development of project as well as to adopt promotional measures to affect economic charge through the perpetration of modern method of cavitations. This also includes the programmers of rural un justification as a supplementary source of income for the discoursed one employment. The objective of the first phase is to general income in terms of purchasing power.

Second Phase-The surplus income in the rural areas is used to improve the population standard of living and quality of life.

Rustic India, because of its many natural credentials, has become the largest hub in the world for domestic and global business houses, to market their different kinds of products and services. A small increase in rural income results in an exponential increase in buying power. They key to success in this market is to understand the nature of the rural consumers which is completely different from their urban counterparts. Marketers can reap the benefits of untapped rural markets. Seeing the market potentials of India rural markets, many MNCs such as HLL, P&G, and Colgate-Palmolive etc. have ventured their marketing activities. The huge number of rural consumers, change in capabilities, attitude, tastes and preferences of rural household, brought by economic reforms, offer great opportunities to the marketers. But It is not easy to enter the market and take a sizeable share of the market due to the: *LOW LEVEL OF LITERACY *ECONOMIC DISPARITIES *TRADITIONAL LIFE STYLE *LINGUISTIC
*RELIGIOUS AND CULTURAL DIVERSITIES *POOR INFRASTURUCTURE FACILITIES IN RURAL INDIA So a market requires suitable product, pricing, distribution and promotion strategies for overcoming these problems of cut-throat competition in rural market.

This paper emphasized the various strategies of rural market-in particular related to the rural consumers.

Rural marketing strategies: Considering the environment in which the rural market operates and its associated problems, and the experience of the manufacturing and marketing men who operates in rural market, it is possible to evolve certain strategies specifically for rural marketing. The strategies are not universally applicable; much will depend upon the product characteristics, the targeted segment of the rural market, the choice of rural area and its economic condition, and the specific environment. However, the study does provide a framework for the adoption of a mix marketing strategies like product, pricing, distribution and promotional strategies pertinent for rural marketing.

Rural market segmentation: Like in urban markets, it is possible to segment the rural market also on the basis of demographic profile, socio-economic

characteristics, exposure to modernization, and income levels. There are certain specific characteristics, which have to be taken into account. Some of the characteristics include: *Land holding pattern (size of holding) *Irrigation facilities (irrigated/unirrigated) *Progressiveness of the farmers (progressive/semi-progressive/traditional) * Cropping pattern (predominantly commercial crops/food crops farmer) *Mix of enterprises (monoculture/diversified) *Education level (educated/literate/illiterate) *Proximity to cities/towns (population in village near cities/towns and mandi centre's/remote villages) *Sociological factors (landlord/small farmers/tenants) *Occupation categories (farmer/craftsmen and artisans/salaried employees) Since income is the deciding factor of the level of consumption, an income-based segmentation will be very appropriate in the case of rural market also. Where nearly 75 % of the income generation is from land in rural areas, land holding can be used in proxy as a basis for segmentation.

Gaikwad (1973) adopted a sociological basis to study rural market by dividing it into six segments. These are:

(a) Proprietors of Land: which include feudal tribute gatherers like ZAMINDARS, rich money lenders and traders who acquired large tracts of land and companies or persons who own large plantations.
(b) Rich farmers who being to the dominant caste of the area
(c) Small peasants or marginal farmers owning uneconomic land holding.
(d) Tenant farmers operating on rented lands belonging to the large landholders and working on small uneconomic land holdings.
(e) Agricultural laborers' who work on the lands of landlords and rich farmers.
(f) Artisans and others including the unemployed.

Strategies: Rural marketing strategies require an appropriate segmentation of the highly heterogeneous rural market, and identification of the needs and wants of the various segments. From the marketing point of view, these strategies based on the four Ps: product, price, place, promotion.

Product strategies: Product strategies depend on rural market and rural consumer. It has been experienced by Indian & MNCs that the marketing of their product into the rural market is only acceptable when their size and price with design is considered as per rural culture.

(a) Small unit packaging: Acceptance of small unit package in the rural market is due to low per capital income. The small pack of daily used consumable item like washing powder, biscuit, pickles, soap, shampoo and toothpaste are good examples for rural markets. The cooking gas (LPG) In a small five kg. Cylinders are very useful in these markets for their easy refilling and transport. The advantage of small packaging is their low price and easy affordability which appears to be an effective in the rural areas as per low per capital income. The reduced pack size attracts a large number of consumers to at least try and taste the product. The Indian companies packing their product in the sachets have become a important steps in 2000 to entered into the rural market. Shampoo sachets contribute around 85-95 % of sales in the rural areas compare to urban market.

(b) New product design: New product design for the rural market is an important research for manufacturing and marketing units. While designing new product for rural household consumers they kept rural requirement and their habits regularly. Shoes and chappal with PVC sole are considered an important product for rural consumers because it works in adverse rural conditions. Similarly Chula and

lantern used for cooking and lightning with small LPG cylinders are quite acceptable among rural consumer.

(c) Low priced packaging: A good example is tea blend sold by Hindustan Lever .It is a premium branded product, which is also available in sachets in rural areas. To keep the price of the tea within the reach of rural buyers, they marked a brand of tea which contained 70 % tea,20% chicory and 10% tapioca flour. When tea prices increase, blending the tea with low cost fillers like chicory and tapioca makes sense, if one is interested in rural market. Similar is the case of cigarettes where brands like Blue Bird, Honey Dew, and Taj Chap etc. are thriving. The basic objective of keeping the price low is to entice rural consumers to try the product.

(d) Sturdy products: The products should be sturdy enough to withstand rough handling and storage. The product should also give an appearance of being tough. The experience of torchlight dry cell battery manufactures supports this hypothesis. Rural consumers preferred dry cell batteries, which were heavier because more weight was seen to mean more power and durability.[2] Sturdiness of a product is an important factor for rural consumers. In addition, generally the rural consumers feel that bright, fast colures like red, blue, green etc. indicate sturdiness of the product. This is also borne out by the fact that they paint their bullock carts and the horns of their animals in very bright colures. Philips India Ltd. adopted this strategy in making their radios and two-in-ones bigger and louder for the rural market.

(e) Utility-oriented products: Rural consumers are more concerned with the utility of the product than its appearance and sophistication. This is again borne out by the experience of Philips radio. During the late sixties, Philips India Ltd. developed and introduced a low cost medium wave receiver named 'Bahadur'. This was test marked in the four regions in the country. Initially, the sales were good, but declined subsequently. On investigation it was found that the broadcasting network did not support the aggressive selling efforts. Not only did the sales drop, but it was concentrated only around Vividh Bharati transmission zones. Later Philips introduced a 2-band (medium & short wave) radio at almost the same price to stay in the market. Then rural consumers brought radios for information and news as well as for entertainment.[3]

(f) Brand Names: The brand awareness in the rural areas is fairly high. For identification, the rural consumers do give a local name to the product or compare it to an icon. Fertilizer companies normally use a 'logo' on the fertilizer bag, even though the fertilizers have to be sold only on generic name. For example, Mangalore Chemicals and Fertilizer Ltd. Use a Poorna-Kumbha with a coconut as its logo and call their fertilizers Mangala. The word Mangala means 'good future'. Mahindra, the tractor manufacturer, named their tractors Arjun and Sarpanch. The strength of the mythological character, Arjun is well known and the rural consumer identifies the tractor as being full of strength and sturdiness. Similarly, the Sarpanch or the village headman is a man of power and clout. A brand name and/or a logo which can be easily remembered are very essential for rural consumers. Rural consumers often ask for Peela powder (Nirma) or Neela powder (Surf) in the case of washing powder.

To summarize, for evolving product strategies, the manufacturers and marketing personnel should think in terms of low unit price and low volume packing which convey a perception of sturdiness and utility in the minds of rural consumers. Wherever necessary, redesigning of the product can also be thought of depending on the customs, traditions, habits or rural consumers. A rural consumer, probably

illiterate or semi-literate, identifies the product from its color and logo on the packaging and also from its low purchase price.

Pricing Strategies: ricing strategies are quite related to product strategies. The product packaging and its presentation for keeping the price low in the rural market depends upon purchasing power of rural consumer. These strategies include:

(a) **Low cost and chief product**: Manufacturing and marketing company adopted strategies, where they present small unit package of a product in a low cost which is acceptable to rural market.

(b) **Refill pack and Reusable packing**: Low density polyethylene or high density polyethylene

are being used for fertilizer packaging. This polyethylene pack can be reused after washing with water and also avoid the strong smell. Plastic container of vanaspati ghee can also reused and refill in the rural houses.

(c)**Avoid sophisticated packaging**: Rural consumers mainly interested in sturdiness and utility of product. Manufacturing companies packed their product in simple packaging and avoid sophisticated packaging, which attract rural consumers, Like Polythene packaging of biscuit which preserved its quality and its freshness, thus cutting the price.

(d) **Value Engineering**: Evolving a cheaper product with application of value engineering by replacing costly raw material with the cheaper one. Costly galvanized steel pipe for water supply are now replaced by PVC pipes and fitting. These are widely used in the case of irrigation system in rural areas. They have light weight and non corrosive. In food industries milk protein can be replaced by soya protein which is cheaper in cost, however the nutrition value of both is quite same. It is the aim to reduce the value of the product to an affordable price so the rural population can purchased it and companies can expand their market by application of simple engineering techniques or design of product.

DISTRIBUTION STRATEGIES:

It is necessary to formulate specific strategies for distribution in rural areas, the characteristics of the product, whether it is a consumable or a durable, its shelf life and other factors have to be kept in mind. The following strategies specifically formulated for rural areas, may be considered for adoption.

(a)Coverage of village based on the population strata: With increase in connectivity due to programmes like, Pradhan Mantri's Gram Yojna, it will be possible to run distribution vans to the villages. The frequency of visit may be fixed depending upon the off-take or sales realization, so that the distribution costs can be minimized, but not at the cost of cutting down on rural population. The villages, which are beyond the limit chosen for distribution, have to depend on the local small shopkeepers and the last member in the distribution channel.

(b) Use of co-operative societies: There are many co-operatives societies operate in rural areas for different purposes. Some such co-operatives are: marketing co-operatives, dairy co-operatives, credit co-operatives, farmer's co-operatives, consumer co-operatives and other multi-purpose co-operatives. These societies are linked with higher-level societies at tehsil, district and state level. Thus, these co-operatives always have an arrangement for centralized procurement and distribution through their respective state level federations.

Such state level federations can be motivated to procure and distribute consumable items and low-value durable items to the members. Many of the societies extend credit to their members for purchases. This not only strengthens the

societies in terms of sales and turnover but also in earning profits for viability. The members are allowed to purchase their requirements from the society on the strength of the prefixed credit limits, which are adjusted at the time of sale of crops harvested. The FSCSs function like a mini super market stocking products such as controlled cloth, soaps, detergents, fertilizers, pesticides, seeds, and other items, and sell them at reasonable prices. Involving co-operatives is a good idea, since they have the necessary infrastructure for bulk purchases and distribution to their member's societies, even in remote rural areas. Further, Kisan Credit Card Scheme is also in operation. The statistics indicate that about 670 lakh credit cards have already been distributed to farmers in rural areas.

(c)**Utilization of public distribution system:** The purpose of the public distribution system (PDS) is to make available essential commodities like food grains, sugars, edible oils, kerosene and others to the consumers at a reasonable price through the Fair Price Shops(FPS).In 2000, the Ministry of Consumer Affairs and Civil Supplies took a decision to initiate a scheme christened SARVAPRIYA, under which the PDS system was to be enlarged to include soaps, edible oils, salt and other manufactured items, in addition to controlled items. The objective of the scheme is to keep the prices low, because of economies of scale. The National Consumer Co-operative Federation (NCCF) was given the responsibility of implementing the system. Such schemes will benefit the rural consumer immensely in terms of availability and lower prices.

(d) **Distribution up to feeder markets/mandi towns:** Keeping in view the hierarchy of markets for the rural consumers, the feeder markets and mandi towns offer excellent scope for distribution. The rural consumers visit these towns at regular intervals not only for selling the agricultural produce but also for purchase of items like cloth, jewellery, hardware, radios, torch cell, and other durables, and consumer products. Hence, a good distribution network should touch the identified feeder markets and mandi towns.

(e) Haats/Melas: There are many Haats and Melas held regularly that can be used for distribution and promotion of products. While haats are held on a particular day every week, but melas are held once or twice a year for longer duration and are normally timed to coincide with religious festivals. Temporary shops selling all kind of goods are set up at such place; it will be beneficial for the companies to exhibit and organize sales of products in such places like Kumbha Mela, Pushkar Mela.

(f) Agricultural input dealers: As per the Essential Commodities Act, fertilizer should be made available to the farmers with a range of four to five kilometers from their place of residence. This is one of the reasons why there are about two and half lakh fertilizer dealers in the country, in both co-operative and private sector. In fact, during off-season most of them do not transact much business. The possibility of motivating them to deal in consumer products is worth trying as many of them have a clout in these areas and they also extend credit to the farmers. This would probably keep them engaged during the off-season, and also increase their income.

Promotion Strategies: Due to the low literacy rate and poor distribution networks in rural market, the promotion strategies chosen should be cost effective. While, consumable products may warrant the use of mass media since the target consumers are sizable, durable products will require personal selling efforts because of smaller size of the target. Due to the low level of literacy, a buying decision process not only takes a longer time, but also involves outside influences.' Word of

mouth' is an important message carrier in rural area and 'opinion leaders' do play a very significant role in influencing the prospective rural consumers about accepting or rejecting a product or a brand. Social marketing and corporate social responsibility play an important role in promoting the image of a company. The following strategies specifically formulated promotion for rural area:

(a**) Mass Media**: Mass media like television, cinema, and radio are the powerful medium for communication. It is necessary to examine the suitability of each for promotion and communication purposes in the rural scenario.

(b) **Television:** Now a days Doordarshan network covers practically the entire country. In addition, there are a number of satellite channels in operation, telecasting programmes in regional languages, which can be received any where in the country with the help of dish antennae and cables. While this medium is already very popular in urban areas, it is catching on in rural area also. Television has proved very advantageous in communicating with low lit racy rural people.

(c) **Cinema**: Like television, cinema is a powerful visual medium as well. While rural areas do have cinema theaters, they are few in number and most of them are temporary structures in the sense that they shift from one place to another at periodic intervals. The cinema viewing habit is very pronounced in southern region of the country. Cinema viewership ranges from 55 to 68 per cent in Andhra Pradesh, Karnataka, Kerala, and Tamil Nadu. Almost three-fourths of the rural adult population, views cinema in the southern region and also accounts for nearly half of the cinema viewers in the country. Advertising in cinemas either through slides or lines is less expensive as compared to television.

(d**) Radio:** It has yielded significant results as one of the oldest media used for communication with farmers and for diffusion of agricultural technology. In addition, other social message on immunization, health, education etc. are aired on this medium extensively. There are specific programmes for farmers like 'Krishi Darshan' in all the regional languages which are broadcast on the primary channel. The basic advantage of this medium is the fact that most of the rural households own and can afford to own a radio, since it is very cheap. It is likely that the listenership may increase in future due to the introduction of FM broadcast in all regional languages.

(e) **Print Media**: Print media consists of a wide variety of literature like newspapers (daily), periodicals (weekly, monthly) and also others like pamphlets, and booklets produced by manufacturers. However, the reading habit in rural areas appears to be very poor. Reading habits varies from state to state. The highest readership is in Kerala with 52 % while lowest readership of about 3 to 4% noticed in Bihar.

(f) **Non-Price Competition**: Several fertilizer companies have successfully adopted this technique as a promotion measure. They do free soil testing through their mobile vans and educate the farmers on agro-techniques. Soil testing helps the farmers in knowing the nutrient content in the soil, so that they can decide upon the quantity of nutrients to be applied externally. Similarly knowledge of agro-techniques educates them on various operations to be undertaken for a crop at proper time.

(g) **Special Campaigns**: During crop harvest and marketing seasons, it is beneficial to take up special promotion campaigns in rural areas. Brooke Bond carried out marches in rural areas with band, music and caparisoned elephants to promote their brands of tea. As such processions go through the villages; the people

are made aware of the product. Colgate Palmolive's rural promotion campaign on 'oral hygiene' is another such example. Appropriate timing of these campaigns is more important, since the promotion should not only result in awareness but also in adoption and purchases. Therefore, the appropriate timing would be the peak harvest seasons when the farmers would have sole the produce and consequently have sufficient disposable incomes.

(h) **Others Mass Media**: Many agricultural input manufacturers have adopted several innovative promotional measures that have proved extremely effective. These include ***Handbills and Booklets,*Posters *Stickers,*Banners, *Training programmes for farmers,*Organizing farmer's clubs and meetings, *Gift schemes,*Village Adoption Programmes,*Agro-techniques for crop cultivation.**

Once this innovation of reaching through alternative cost effective media starts then the rural consumption will go high making it potentially more attractive than the urban market. At last going rural is not a mere fashion it is a for-fetching business proposition. It concludes that Indian rural market is large and scattered. On the basis of customers, rural marketers offer great opportunity to marketer. But nowadays due to transportation and information technology the condition of rural market has changed. Thus, rural market is very challenging and has to adopt these strategies for it globalization and new horizon of rural market potential.

References:

1.Gopalaswamy,T.P., 'Rural Marketing Environment, Problems and Strategies', Vikas Publishing House,2010 p.159-189

2.Kotler,P, 'Principles of Marketing', Prentice Hall of India, New Delhi, 2014

3.'Rural Retailing Undergoing Fast Changes', The Economic Times, Sep, 9, 2002.

4. H.S.Grewal, S.N. Mahapatra and Sanjay Pandey. " Organizational Management,Vol. XXII,." Role of Rural Melas and Haats in Modern Marketing, No.1. April-June 2006

5.R.G. Suri, A.S. Sudan. " Rural Marketing-Some issues." Indian Journal of Marketing,Vol:XXXIII No. (10 October 2003):Pg.23.

6. Majumder, I. ""SHAKTI": A Strategic Marketing Approach of FMCG Giant, HUL-Enabling A Journey Towards Business Excellence In The Era of Globalization." Indian Journal of Marketing, Vol: XXXIX No.9, September, 2009: Pg.5

7. Annapurna M Y Marketing to the Indian Rural Consumers, Marketing Mastermind, May2009,Pg.35

8.. Kotler, P. Marketing Management . New Delhi: Pearson Prentice Hall, 2009.

9. Namakumari, V S Ramaswamy and S. Marketing Management. New Delhi: Macmillan, India,Ltd.2006.

10. Panwar, J. S. Beyond Consumer Marketing. New Delhi: Response Books A division of Sage publications, 2004.

Dr Subarna Sarkar,
Associate Professor, H.N.B. Govt. P.G. College,
Naini, Allahabad, U.P.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-135-141
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

The rallies of Seemanchal in Bihar election: through my own eyes

Ashish Vats & Pankaj Kumar Jha

Election provides the platform of politics where the rallies and jansabhas become every political parties' and their top notch leaders' chance to have a war of words. And, in the same hand, it also provides opportunities to the parties' to showcase their strength to the voters. Interesting fact is that this is like a war zone where every effort is done to comment and attack the opposition through provoking speeches, aggressive gestures and spicy proverbs. With the Bihar election, the phase of election rallies and jansabhas had begun. In order to win over the election against Nitish Kumar & Lalu Prasad Yadav, PM Narendra Modi did the *'parivartan rallies'* in Muzaffarpur, Sharsha, and Bhagalpur to make the huge audience aware about the 'jungleraj part 2. There, in the same way, at the Historical Gandhi Maidan, Patna, Nitish – Lalu along with Sonia Gandhi did the *'swabhimaan rally'* to give a tough fight to BJP where issues about the Bihari identity and DNA related questions. After it, immediately Congress party organized a separate rally in Champaran under the leadership of Rahul Gandhi.

Between all these, on the aspect of development in Bihar election, Seemanchal remained the most challenging where these rallies and jansabhas remained very significant. Through this paper, I had tried to analyze the political language, issues and the various strategies that had been used in the rallies and their influence on the people. For this I had analyzed the rally of ITI field, Katihar of PM Narendra Modi, Ruighasha Field rally of Rahul Gandhi, Osauddin Obasi's rally of Karbala Maidan, Kishanganj and one independent candidate Prahlad Sarkar's nukkad sabha.

Narendra Modi's rally in Seemanchal region[1] On 2nd of November, 2015 a rally of PM Narendra Modi has been organized in the ITI field of hridyanagar, katihar[3] which is in the Seemanchal region. The main points of the strategies which have been followed by BJP and Narendra Modi through these rallies in Seemanchal are as follows.

First, using a ***political language*** the way Narendra Modi has started his speech in ITI field was very interesting and highly strategized and localized. In order to get into the nerves of the local people, Narendra Modi said in local 'anggika' language that *'Ki ho..Ki hal cho..thora sab ke pranam karaye cheo'* (*hello, how are you all? My pranam to u all).* Hearing this, whole ITI field was echoing with whistles and clapping. Upon hearing this greeting from Modi, Ishwar Kamat of Baniya Tola said *"oh God, Modi is talking in our language. Jaisa desh waisa bhesh"*. It was very clear that such sort of political language Narendra Modi has used in the fifth phase of election in Kosi region as well. In Madhepura based Singheshwar assembly seat, PM Narendra Modi took blessings of B.P Mandal and thus used maithaili language to address people. He said *Samajik nyaye ke praneta B.P Mandal ke dharti ke naman karey chee, Singheskwar Baba ke dharti ke naman kareye chi* (my pranam to the land of B.P Mandal, the inspiration of the social justice. I bow my head infront of the land of Singheswar baba). Important fact is this that important fact is that the Modi's political rally has the significant strategy of beginning the rally with the local language, dialects and proverbs[4]. By doing this he had tried to

relate with the voters more. Second, in these rallies strategically PM issued those ***local issues*** which are very important for these areas. Like, in the rally of Katihar, PM Modi said *'the aura and youth of Bihar will change the future of the nation'*. It was clear that through medium he was trying to highlight the flood management in these areas and trying to reflect on the situation of the migration of the youth and their labour. In his rally, PM reflected on the Padhai, Kaami and Dawai (study, work & medicine) as three most important priorities of his government.[5] One of the significant aspect about the backward areas of Seemnachal that there is no proper system of education. Unemployment is rampant and health facilities are in deplorable condition. Subhan Aalm who belongs to Balrampur vidhan sabha area said that *"Modi ji knows the problems correctly. Everybody knows that these are the problems of this region. But will only the slogan resolve the issues"?* This way, highlighting the local problems and issues, PM asked for the explanation from Lalu-Nitish governance which was there for the last 25 years respectively.

Third, **in the rally of Narendra Modi, there was huge number of people.** Aged person, women and children were wearing caps and batches of BJP. The stage was huge and in the background there was a huge poster of PM Narendra Modi. And, slogans like 'tez vikas ki yehi pukar, abki baar BJP sarkar'. On the stage too, all the seven candidates of BJP contesting from the seven vidhan sabha seats were present in colourful kurta pajama and giving tough competition to each other. Narendra Modi was also trying to cash on the stylish look by wearing a Maroon Kurta and Pajama. Before and after the PM's speech, the way songs filled with national pride like *Vande Matram, Vande Matram sujalm, suflam shasya shyamlam matram* is played on the dice in ITI field, people were dancing. This also clearly indicates the curiosity towards the BJP election strategy and its national ideology. Bamboos were put to stop the crowd and special arrangements had been done in-front of the stage for the media persons. In this rally, drinking water has been arranged for everyone. Party workers were arranging all these.

Fourth, *management strategy* of Modi's rallies were of high standards. Huge rush, people carrying Flags of BJP, caps were visible. The people coming to ITI field were mostly the villagers. While talking to them, it was getting reflected that these people have been brought here through excellent management. One auto driver Kisan kamat from kadwa, whom we met outside of the field, said that *'almost 80 autos were full of people brought here from kadwa'*. When I asked a group ladies standing in the field that *'whom did they come to listen'?* After a little silence one said out of them *'Nitish Kumar'* then one another women slowly tapped her hand and said *'no no she just came here with us. We came here to listen to Modi'*. In ITI field where Modi's rally was going on, we saw a group of santhals who were dancing and beating drums. After bit investigation we got to know that in katihar district one seat Manihari vidhan sabha has been reserved for scheduled tribe and these santhals were representing the group. In the last phase of the election in Seemanchal, PM Modi strategically used the issues of polarization on the basis of caste and religion in his rallies.[6] On the issue of reservation and on the statement of Bhagwat, in katihar Modi through explanation said that from the beginning BJP was in favour of maintain the reservation. No political party has the power to end the reservation. Through this where BJP is eyeing on the seats of backward, most backward, Mahadalit and Manihari reserved seat of scheduled tribe. Similarly, in the Muslim populated area after the heated beef politics, BJP is trying to target Congress for sikh riots. Modi while targeting the Congress said that *'Congress should not give the speech on*

tolerance. U all should be drowned. This does not suit you. Still Sikhs have not got the right justice. How can we forget the tears and pain of the riot victims'.

Impact: The reaction of Modi's rally was mixed. After Modi's rally, roads were blocked for almost one and half hours. One aged person was there in this crowd. He started to say *"how this crowd will disperse?"* Suddenly someone said *"don't do anything. Take a side. This crowd will itself push you and you will reach home"*. In middle of all this, one person named Ashok Gupta said *"oh my god, I had never seen such a crowd in my life. Modi is really a god-like. Only he can develop Bihar"*.

Interesting fact is that out of total seven seats only on two seats BJP candidates won and one seat is the Katihar Vidhan Sabha. In this region, along with the upper caste votes, BJP got the votes of baniyas (business class) as well. And, Muslims, Koeri-Kurmi voters who remained silent during BJP rallies, they were inclined to JD (U)-RJD. One youth was saying during the BJP rally that *"nothing will happen by wearing caps only. Whom we will cast our votes, it is in our hearts"*. After hearing all these we felt that may be in these people hearts, they have a strong support for RJD-JD (U).

Rahul's rally in Kishanganj- On 28th October, 2015, Rahul's rally was organized in Ruighasa maidan in Kishanganj. In this rally, with Rahul Gandhi, Lok Sabha speaker Meera Kumar, Gulam Nabi Azad and C.P.Joshi were present. From the scheduled time, Rahul Gandhi reached the venue almost two and half hours late. The significant points of this rally are as follows. *First,* Rahul Gandhi's speech was very short almost for fifteen minutes only. Anyway Rahul was not that skilled like Modi in oratory. But, in his short speech too, he used the language of politics quite smartly. On the escalating prices of pulses, he caught the government by using ***Political language*** *"the BJP person say- 'har har modi, ghar ghar Modi'. I am asking that 'arhar Modi, phir kyun ghar ghar Modi'?"* That's why leaders like Mira Kumar, Gulam Nabi Azad were there with Rahul so that programme could be extended. They attacked the various schemes of Modi government like Jan Dhan Yojna and also blamed the government for rising prices of dals (pulses). Doing this, Rahul tried to present himself as a skilled politician. in this muslim populated region, Rahul Gandhi asked questions regarding the communal tension of caste- religion to Modi using the beef issues In aggression, he left no stone unturned to even said that it seems that even there is some problem in Modi's DNA. *Second,* during these rallies, Rahul Gandhi tried to ***re-establish the developmentalist image*** of Congress Party once again. And, very strategically they came with Nitish Kumar and emphasized to work more on development issues. Interesting fact is that the RJD under the leadership of Lalu too is in alliance with Congress and Janta Dal (U). Still Rahul Gandhi didn't even once used RJD's name in his speech. This clearly showed that Rahul Gandhi had more confidence in the Nitish Kumar and his vision on good governance which he tried to put as the alternative to Narendra Modi. in Rahul Gandhi's rallies full efforts were made to ensure the presence of Nitish Kumar. Where in one side in full volume songs were playing like *'phir se ek baar ho Bihar me bahar, Phir se ek baar ho Nitish e Kumar'* (Once again Bihar should florish, once again Nitish should come), on the other side Nitish Kumar's cycle was doing the rounds of the ground. This cycle has in it's back the posters of Nitish Kumar, Lalu Prasad Yadav, Rabari Devi, Sonia Gandhi and Rahul Gandhi. And, on the banner, the red line with slogans like *'jhaanse me na aayenge, Nitish ko jeetayenge'* (will not come into the foolish talks, will ensure Nitish wins) seven targets of Nitish

has been highlighted. This includes slogans like economic solution, power of youth, reserved employment, rights of women, consistent electricity to every home, regular tap water supply to every home, proper drainage system and road to every home, facility of toilets, the more opportunities, the more ways ahead etc. In order to ensure Nitish Kumar's presence, one member of JD (U) was wearing the batch and always in the field. His name was Naibuddin and he was wearing a i-card tagged Nitish's volunteer. When we asked him *"what you are taking care of"?* He said, *"we came here yesterday only. We are ensuring that in Rahul Gandhi's rally too, the works of the Nitish Kumar's government, the slogans, manifesto all these are advertised and used in proper way"*.

Third**,** it is true that Rahul rally in Ruighasa was less organized in comparison to Narendra Modi's rallies. But in comparison to his own rallies of last year's Jharkhand election this time the rally was big and well decorated.[7] The dice and field was full of posters of not only Congress but of JD (U) and RJD as well. This shows the unity and uniformity of this alliance**.** Separate entries were made for ladies and gents. Gents were more in numbers. They were mostly in lungi and Kurta and few of them were more dressed up with embroidered kurta pajama and stylish caps. It was a sunny hot day so shops of nariyal pani, sugarcane juice, ice-cream, water bottles were doing good business. Whole ground has been decorated with posters of alliances. One poster of Rahul Gandhi was too attractive for the Seemanchal people. With a picture of Rahul, it was written 'tere dard ke saathi hum, aaye hai tere chowkhat tak. Hum larenge tere khaatir, Sansan se sadak tak. (We had come here to your doorstep to be with u in your problems. Starting from the road to the Sansad, we will fight for you).***Fourth,*** this time efforts were made to manage the rally well. It was visible that this huge public gathering has been managed well. Good arrangements were made to bring people to the rallies. Most of the people have come from other vidhan sabha regions like Kochadhaman, Thakurganj, Bhahadurganj etc. Responsibilities were distributed to every local leader to ensure people are coming from their area to the rally. One thing was clear by seeing the rally's arrangement is that Congress is still going strong in Seemanchal. Impact, The audience turnout was good in Rahul's rally. Majority was of muslims. Even burkha clad women were there. We asked one woman, who belongs to ramzaan patti, that *"do you come here to listen to Rahul"?* With smile she said *"he is young. I had never seen him. But I had heard so much about him. That's why I had come here to listen to him"*. In the same hand, Yunus, from kochadhaman, had pasted posters of Congress all over his body. We asked him*,"how is this rally"?* He said *"Seemanchal people were proud of Sonia and Rahul in past and People have the support with them even in now"*. People had come from very far places and the responsibility of fetching the people from their place to the rally ground lies with the party workers.

Aassuddin Owaisi's jan-shaba in Kishanganj- Aasuddin Owaisi's janshabha has been scheduled at 6pm, Karbala Maidan, kishanganj. As the parliamentarian and party supreme of , Aassuddin Obasi reached the maidan, All India Majlis-e-Ittehadul Muslimeen (AIMIM) people and especially youth became more excited. As he entered, he was showered with garlands and slogans were echoing all over of *'Barrister Obasi zindabad, Patang chhap zindabad, Sher - e – Hindustan zindabad'*.

This rally of Owaisi was very different from the other two rallies and significant aspects of the rally are as follows.

First, Owaisi used a complete different **political language** to attract the Muslims populations of Kishanganj. He began his speech as *"Sadar e jalsa*

(organizers of jalsa), Mohtaram (Ladies), janab and my friends". Using the political language, Owaisi repeatedly conveyed to the people of Kishanganj that *"I am not your leader. I am your chowkidaar (watchman) who will protect the rights of the akhliyats (minorities) and the Hukuk (right) of the people of Kishanganj"*. This way he tried to make a mark for himself in the midst of the people in Kishanganj by presenting himself as the protector of the *jamhuriyat (democracy*). Noticeable fact is that this is rally and jalsa strategy of the MIM and Owaisi to make a mark for themselves amongst the Muslims of Kishanganj. Interesting fact is that Modi too begins his rallies using the local language. Rahul never used this and he directly started his speech. **Secondly,** In the rally of D.S. field, in comparison to Narendra Modi and Rahul Gandhi, Owaisi reflected on the *issue of development* much more analytically. For under-development and backwardness, he attacked the Congress government at the center and Lalu-Nitish governance in Bihar for last 25 years. On the issues of health, he compared the M.B.B.S. doctors of Kishanganj to the doctors who are working in other parts of Bihar. He presented the data of the primary schools and on this basis he asked for the people's support for the justice and development in Kishanganj. In order to make his statements and manifesto much more strong, similar to Nitish Kumar, Owaisi too did campaigning on cycle. It was clear that like Nitish, Owasi also tried to use to cycle to campaign for his development related issues for the people. Rahmat Ali of Kochadhaman vidhansabha seat was heavily excited and said*"Owaisi said the true things. The leaders as the well wishers have actually looted the people of Kishanganj. The leaders can only do bakwani (gossips). They don't do anything. Everybody can see the reality. There is no hospital in KIshanganj, no doctor, no school, master, No trade and neither and neither any industry. If we will not go to Delhi, Punjab and Saudi then what we will do? No development is there. Everything is getting ruined"*.

Third, Very strategically, during the aazan Owaisi stopped the speech and read the kalmas of aazan. By doing this he tried to project themselves as an alternative to Congress in the region. Similar to Nitish, He also campaigned using a cycle. And, with slogans like *'Ab milega sabko Insaaf, Badlega Seemanchal Majlis ke saath'* (Now everybody will get the justice. Seemanchal will change with Majlis), he also focused on the important issues of economic development, health facility, education and minorities' rights. When we asked the person that *"what is your job here? How much u get from this"?* He said *"my main work is to do the door to door step campaigning for the party. Daily I am getting 300 rs and after winning the election they will give me this cycle"*. Owaisi sometime became tough, sometime soft throughout his speech. Initially he was bit softer while comparing the development parameters of Bihar with others. As part of his strategy, he advised to stop the Lalu comedy night and insisted to start Owaisi night, criticized Modi for saying friends and asked him to say sorry for Dadri issues. Clearly, Rahul was much softer in his approach whereas Modi showed aggressiveness which reflected on the similarities in fluency of Modi and Owaisi. **Fourth,** in Owaisi's rally chairs has been arranged for leaders in the stage and 50-100 chairs has also been arranged for the spectators. Whole ground has been decorated with the pamphlets of party election symbol ***'patang'*** (Kite). There is lamp shade like a kite. Most of the audience were youth and they were smart and repeating the speech of Obasi. During our conversation with 20 years old Shahrukh we got to know that he is a student of B.Sc. in Katihar. He told us that *"he is big fan of Obasi and he is the rising leader of the minorities. Obasi is a Sher-e - Hindustan. Owaisi did not have any rally in Katihar. So I thought how would I get to listen to him. That is why I came here from Katihar 150 kms to listen to him"*

Impact- Owaisi's influence was of mixed kind. Clearly, more impact was there on youth. After the jansabha ended, we were having a conversation with the 26years old Churipatti resident Aurangzeb Khan. We asked him *"how did you find the Owaisi's speech? Does he have any chance here"?* He said *"after Obasi's entry, the atmosphere has changed here. 75% population is Muslim here. Congress had not done any work here. The representatives of congress used to sleep and Muslims are afraid even in the name of BJP. In today's circumstances, Kishanganj has only on option which was not the case earlier. And now in these conditions, people of Kishanganj- Pothia region will going to support Owaisi sahib and MIM"*. Interestingly, still the Congress

- Prahlad Sarkar's nukkad sabha- Independent candidate has able to maintain an image in the hearts of aged persons. According to Haji Saheb who lives near Karbala Maidan, *"it is good Owaisi is trying. But we are Congress supporter from the old days. We know that last Congress candidate did not do much. Still we will support Congress so that BJP cannot come to power. We still rely on Congress"*.

Independent Candidatefrom the Kishanganj Vidhan Sabha region Prahlad Sarkar's *nukkad sabha* was organized on 28th October in evening at 6pm at Chandani chowk, kishanganj. In his short speech, he requested voters to vote for him and said that his election symbol is *pearl necklace*.

Important facts of Prahlad Sarkar's *nukkad sabha* are as follows: **Political language-** Very beautifully Prahlad Sarkar used the language of politics in his nukkad sabha. He formed an analogy of *sword* (talwar) with *Suraksha* (security) and said that *"vote is like a talwar. If u will give this power to a responsible person. He will protect you. If you will give this power to a wrong person. He will ruin everything. You all will lose everything"*. The point which should be noted here that the way he, as an independent candidate, drew the analogy of a talwar with responsibilities and directly challenged the election scenario where always an independent candidate has given less importance in comparison to the to a party candidate.

Management-strategy- As compare to the rallies of big parties, audiences were very less in the sabha of this independent candidate. The group, with around 20 people on 10 motor cycles, reached to chandani chowk from pothia. All supporters were wearing pearls. Nukkad sabha was very simply and with a local touch. Very simple arrangements were done and mike was also very simple. Most of the people were youth. People, who came to listen to him, were also whispering that *Ekra kono kam nahi hey ho, e jityee…jhote ke paisa pani mei barbad ker rahal che* (*he doesn't have any other work. He will not win. He is just wasting money).*

Prahlad Sarkar highlighted on the increasing bureaucracy, corruption, broker ship, and atrocities at the local level. Along with that, issues of farmers, laborers, poor tribal people, maha dalits, Shershawadi and bhudaan and sealing etc were also discussed. Not only this, different from the other big parties, he raised concerns regarding the game of lotteries and said that *"youth of Kishanganj are caught in the habit of gambling"*. He said that *"he will help youth to get out of this"*[8]

It is true that it is ***impact*** was too less. When Parhlad Sarkar was giving speech that time too people were not listening to him carefully. Prahlad Sarkar was in the 7th position in the election results. But this is also true that he raised many local, basic issues of the region in his *nukkad sabha* which many parties didn't even pay attention.

Conclusion- Finally we can say that the election rallies in seemanchal region during Bihar state assembly was not more but continuations of all phases. If one compares the preparation of election rallies at the macro level, Narendra Modi's rally was best and successful. But at micro level, clear effect of Mahagadbandhan

and Owaisi's rally (especially at kishandganj rally) can be easily felt. Mahagadbandhan had prepared especially its rallies at the micro level like in Rahul's rally of kishanganj the campaigning were done for Nitish kumar's cycle and his governance. Similarly, Nitish's volunteer were continuously remained on ground and campaigned for Nitish's governance through the cycle even in Congress rallies were the part of the preparedness and strategies of mahagadbandhan at the micro level. It is true that Owaisi had presented the question of development in the region of Seemanchal in a very radical manner but he cannot attract the voters that much and could not able to convert them in positive election result in his own favour.

Reference-

1. I am thankful to EECURI network for giving me the grant for study of Bihar state assembly election, 2015. I am also grateful for insightful comments and guidance of Prof. Madhulika Banerjee from department of political science, Prof. Manisha Priyam of NUEPA and Prof. Mukulika Banerjee from London school of Economics and Political Science.
2. In seemanchal, PM significantly did rallies in Katihar, Purnea, and Forbesganj.
3. Initially, this rally was planned for Rajendra Stadium. But speculating the number of people comig for this rally, it was later shifted to ITI field.
4. Last year during the Vidhan Sabha election we covered the the PM Modi's rally inchaibasa, West Singhbhoom. There at the beginning of the speech, he used proverbs Aap chaiwasa wale, mein chaiwala' (you all chaibas people, I am also a chaiwala). After that to attract the adivasi people, he said in santhali language 'boyha aar mishiko jeeto koge johar (pranam to all my brothers and sisters)
5. Clearly, in the fifth phase of election in the areas of kosi, observing the local challenges, PM in his rallies gave the slogan '2019 tak sabko Bijli-2022 tak sabko aawas' (electricity for all by 2019- home for all by 2022).
6. Fact is in whole Bihar Modi did 30 rallies & in Seemanchal He did only three. On the basis of calculations, he didn't do any rally in Kishanganj area which is a Muslim majority area comprising around 60% Muslims. After the beef politics, may be it was the strategic move.
7. Last year, during the Jharkhand election, we had covered Rahul' rally. That time situations were very bad in the rallies. The numbers of audience was very less. The mikes and loudspeakers were not properly functioning. In comparison to that, the people were huge in numbers and the rally was very well managed.
8. During my field visit, I saw that with the network of local administration, the business of lottery is going on smoothly and mostly youth are getting involved in this in large number.

Ashish kumar Vats
Holds doctorate from CCS University
Pankaj Kumar Jha
Holds a doctorate from the Department of Political Science,
Delhi University, Delhi.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-142-148
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Modernisation of Tourism in Jaipur

Pankaj Oswal & Jeetendra Singh Meena

Every year, around 20 lakhs tourists visit India. One third of them come to Rajasthan to invariably visit Jaipur, the Pink City. It is a preferred tourist destination in the map of tourism not only in India but across the world. It has several attractive spots for domestic and foreign tourists. Some of the major attractions of Rajasthan like – royal trains (Palace on Wheels and Rajasthan Royals on Wheels), forts, palaces and havelies, festivals, handicraft, heritage hotels, adventure tourism, rural and eco tourism, architecture of religious places and temples, classical & folk dance and music etc. arouse the interest and admiration in the visitors. These not only invite tourists from all over the world but also generate employment and revenue for the state government. Statistics on number of tourists visited in the year 2011 indicates that most favoured cities like Jaipur, Jodhpur, Pushkar, Ajmer, Jaisalmer , Mount Abu etc. are well developed to cater to the needs of tourism (Pinku,S 2013). In this presentation Jaipur, the Pink City has been identified as the study region with the hypothesis that there has been a steady growth of number of tourists – domestic and international pouring in over the years. Changing pattern in area of tourism, appearing for quite some time now, is also a part of this research paper. For testing the hypothesis, ***Chi-Square Method*** *has been employed. Jaipur, not only in Rajasthan but in whole of India, has been a unique place and centre of attraction for domestic and foreign tourists because of the fact that it has a royal & graceful art and cultural traditions with rich heritage and history.*

Key words: Tourist, Handicraft, Heritage Hotel, Adventure Tourism, Rural & Eco Tourism.

Introduction- Rajasthan is well placed in the map of tourism not only in India but throughout the world. Rajasthan is appreciated for glorious history of its forts and palaces, art and culture, festivals, religious places and temples, natural scenic beauty, bird & animal sanctuaries and historical places for centuries. Because of its grandeur, travelling through India by tourists is half complete without visiting Rajasthan. Tourism has come up as a big business all over the world. Unlike other business sectors, investment in tourism creates large bulk of direct and indirect employment and generates invaluable foreign exchange. Government has initiated several steps to promote tourism so as to improve its financial health. It has provided various facilities at cheaper rates to promote tourism in the last few years. Government & non-government agencies are making creative efforts to develop it further.

Statistics on tourism for the year 2011 reveals that Jaipur, Jodhpur, Pushkar, Ajmer, Jaisalmer, Mount Abu cities are well developed and have major share of tourists (Pinku,S 2013). Department of tourism was established in the year 1956 as an independent identity in Rajasthan. In the present research paper Jaipur, the pink city has been earmarked as the study area with the hypothesis that there are definite indications of steady rise in the number of domestic and foreign tourists in the past few years. Changing pattern in area of tourism, appearing for quite some time now, is also a part of this research paper. Jaipur, not only in Rajasthan but in whole of India, is centre of attraction for tourists -national as well as international because of the fact that it has a royal & graceful art and cultural background with rich heritage.

Jaipur is situated in the north-eastern part of Arawali hills. It is situated on 26˚ 55'' north latitude and 75' 49'' east longitude. Average height is 425 meters from mean sea level. It is well connected by rail, road and air with other parts of the

country. In addition to domestic flights international flights are also operative from Jaipur. On the north-east side Delhi is 308 km, in the east Agra is 242km, in the west Ajmer is 136km and in south Kota is 250 km away from Jaipur. On the road network side, NH 8 (Delhi-Mumbai) and NH 11 (Agra-Bikaner) pass through the city. Besides NH 12 connect Jaipur and Kota and NH 11C connect Jaipur and Chandwaji.

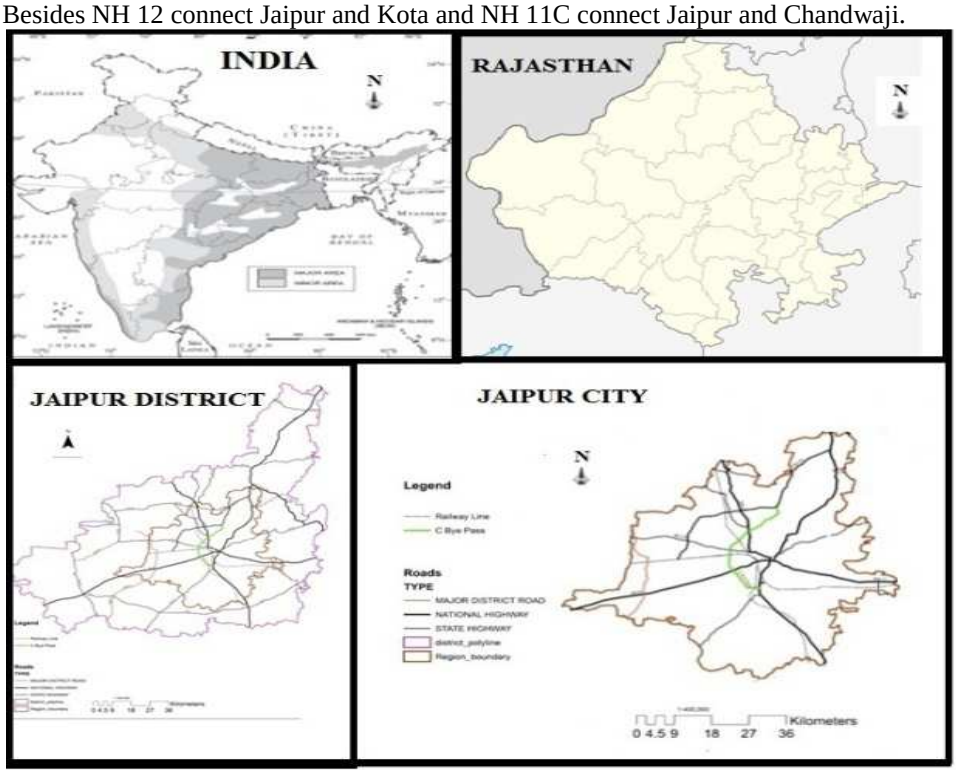

Fig:-1 Study Area

Presently this city is well connected to other big cities through broad and narrow gauge railway tracks. It is connected to Mumbai (1200 km) through broad - gauge railway via Sawai-Madhopur.

As per the census the city had a population of 2374000 in 2001 which rose to 3073350 by 2011. Its distribution is not uniform in the city because it depends upon various factors like Relief, Climate, Soil, Surface, Water Supply, Financial Resources, Transportation, Social and Cultural Environment etc.

Table 1. Growth in Population in Jaipur City

Year	Population	Growth in Population (%)
1931	150000	&
1941	175810	17.21
1951	291130	65.59
1961	403444	38.58
1971	615258	52.5
1981	977165	58.82
1991	1458438	49.26
2001	2374000	62.77
2011	3073350	29.49

Fig-2 Growth in Population in Jaipur City

There are many tourist places of historical importance in Jaipur city. Historical buildings, museum, forts & palaces and natural scenic beauty & landscape leave ever lasting impact on tourists. Religious places with related history also create the same effect. UNSCO has included Jantar-Mantar of Jaipur in the list of world heritage. This has made the place come up well in the tourist map all over the world.

Details of tourists visiting major tourist places of Jaipur city: Tourists do not go back home without visiting Rajasthan & once they in the state they visit the Pink city essentially. This why there is a continuous inflow of tourists round the year.

Table2. Tourists visiting major Tourist Places in Jaipur City during 2010 – 2014

Year	Domestic Tourists	Foreign Tourists
2010	1133543	368512
2011	1035885	416824
2012	998703	534256
2013	1104905	566429
2014	1170152	568234

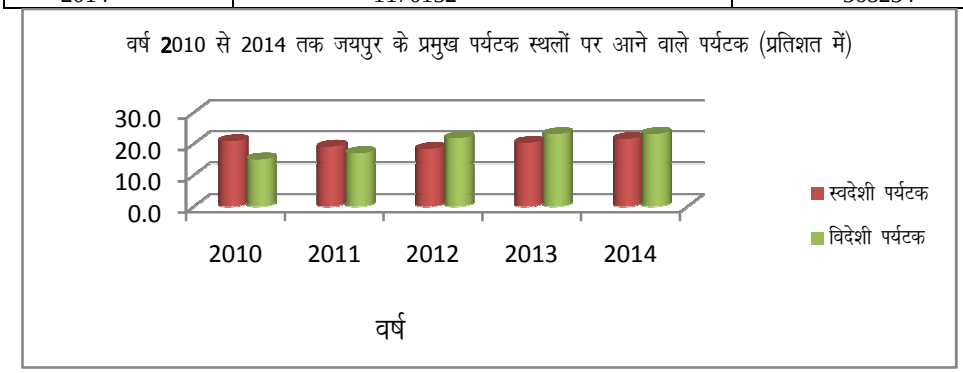

Fig3. Tourists visiting major Tourist Places in Jaipur City during 2010 – 2014

In five years from 2010-14, number of tourists, who visited Jaipur, was 7897443, out of which 68.9% were domestic and 31.1% foreign tourists. In the year 2010-11 Indian tourists happen to be more compared to as in 2012, however, there appears to be an upward trend in the number of foreign tourists visiting Jaipur since 2012.

Table3. No of tourists visited **Jantar- Mantar** during April – October, 2015

Month & Year	Domestic Tourists	Foreign Tourists	Domestic Students	Foreign Students

	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite
April, 2015	39773	3106	5271	3237	2570	609	285	164
May, 2015	31090	1270	2325	1444	2090	183	141	98
June, 2015	36811	1473	1168	834	2735	206	156	106
July, 2015	39593	1613	2606	1483	1956	175		325
August, 2015	39326	2029	3576	2155	2581	198		394
Sept, 2015	33983	1477	3092	2676	5454	235		206
Oct, 2015	69195	1068	25282	538	19031	1288		171

Table4. Tourists visiting **Jantar –Mantar** during April to October, 2015

Type of Tourist	Tourists		Foreign Tourists		Domestic Students	Foreign Students	Total		
	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	
Actual No. of Tourists	289771	12036	43320	12367	36417	2894	2100	1464	400369
EstimatedNo. of Tourists	290140	11596	43511	12650	36806	2460	2145	1061	400369
Difference	369	440	191	283	389	434	45	403	
Deviation Squared **$(O - E)^2$**	136161	193600	36481	80089	151321	188356	2025	162409	
$(O- E)^2 /E$	0.46	16.69	0.83	6.33	4.11	76.56	0.94	153.07	**X^2=259.02**

Table5. No. of Tourists visited Albert Hall during April – Oct. 2015

Month & Year	Domestic Tourists		Foreign Tourists		Domestic Students		Foreign Students	
	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite
April, 2015	34018	4871	393	463	1524	269	31	18
May, 2015	43910	5287	179	156	1420	237	35	15
June, 2015	49190	4832	200	74	1915	385	40	31
July, 2015	45831	4796	302	152	1735	312		
August, 2015	45207	5669	397	229	2635	375		86
Sept, 2015	31842	6225	331	247	4628	319		35
Oct, 2015	41568	7352	494	298	5265	399		56

Table6. Tourists visiting Albert Hall during April- Oct. 2015

Type of Tourist	Tourists		Foreign Tourists		Domestic Students		Foreign Students		Total
T	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	
Actual No. of Tourists	291566	39032	2296	1619	19122	2296	545	303	356779
EstimatedNo. of Tourists	291520	38925	2321	1601	19251	2314	550	297	356779
Difference	46	107	25	18	129	18	5	6	
Deviation Squared**$(O-E)^2$**	2116	11449	625	324	16641	324	25	36	
$(O – E)^2/E$	0.007	0.294	0.296	0.202	0.864	0.140	0.045	0.121	**X^2 = 1- 94**

Table7. No. of Tourists visited Amer during April – Oct. 2015

Month & Year	Domestic Tourists		Foreign Tourists		Domestic Students		Foreign Students	
	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite
April, 2015	97864	1620	10110	12177	5924	235	452	291
May, 2015	86150	882	5364	5499	3355	63	359	131
June, 2015	105263	975	3261	2915	4672	100	316	271
July, 2015	114778	1607	6455	5360	4761	94		334
August, 2015	115315	1977	8790	10408	5261	142		438
Sept, 2015	87993	1533	7801	10900	9956	161		205
Oct, 2015	112513	1025	34105	1052	31037	1158		181

Table 8.Tourists visiting Amer during April – Oct. 2015

Type of Tourist	Tourists		Foreign Tourists		Domestic Students		Foreign Students		Total
	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	Single	Composite	
Actual No. of Tourists	719876	9619	75886	48311	64966	1953	4277	1851	926739
Estimated No. of Tourists	719850	9723	75950	48500	64616	2000	4300	1800	926739
Difference	26	104	64	189	350	47	23	51	
Deviation Squared $(O-E)^2$	676	10816	4096	35721	122500	2209	529	2601	
$(O-E)^2/E$	0.001	1.112	0.054	0.737	1.896	1.105	0.123	1.445	X^2=6-47

There has been an inflow of tourists in large numbers in Jaipur for many years. Attraction to visit the city could be its rich historical, religious, social or cultural background. Figures show that number of domestic tourists has gone up every year as they have always kept Jaipur as a preferred tourist destination. Influx into the pink city comprises of single tourist as well as tourists in mixed groups. Most of them are domestic visitors, however, foreign visitors are also seen in plenty.

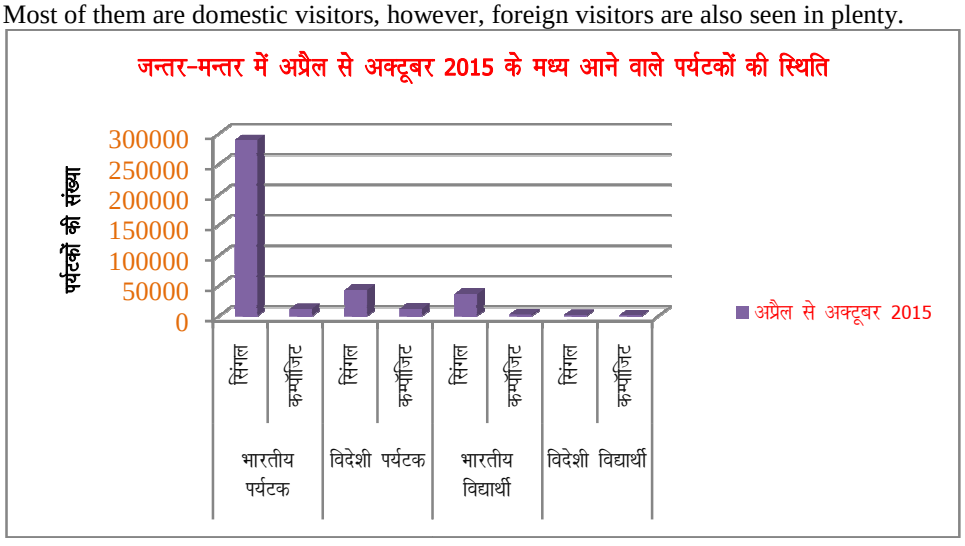

Fig:- 4 No of tourists visited **Jantar- Mantar** during April – October, 2015

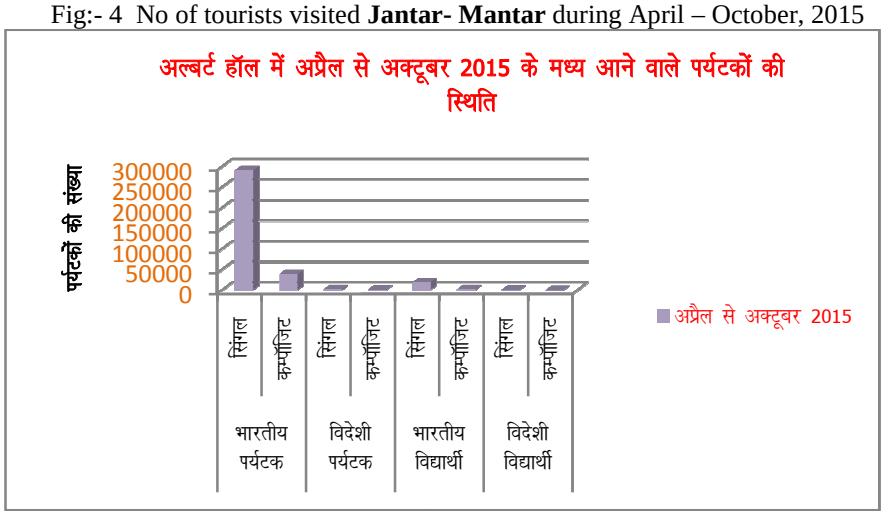

Fig:- 5 Tourists visiting Albert Hall during April- Oct. 2015

Jantar- Mantar, being in the list of world heritage, is a unique centre of attraction not only for the tourists in general but to students from India and abroad and they make it as an educational tour. Most of domestic and foreign tourists, who had come to enjoy major tourist places in Jaipur in 2015, were single tourists. However, domestic tourists have outnumbered the foreign tourists. Amongst others Albert Hall has also attracted these visitors.

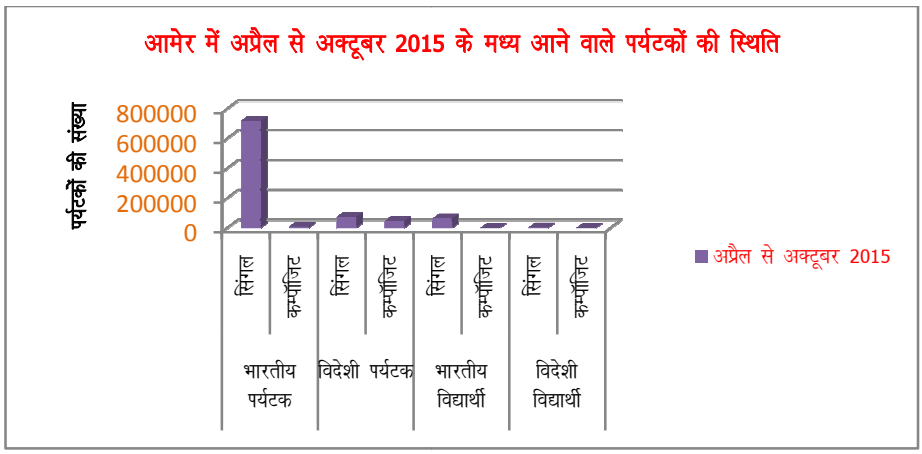

Fig:-6 Tourists visiting Amer during April – Oct. 2015

Composition of tourists, who visited **Jantar-Mantar** during April-October 2015, had 75.38% Indian, 13.9% foreigner, 9.81% students from India & 0.89 from abroad. Similarly, tourists, comprising of 78.71% Indian, 13.4% foreigner, 7.2% student from India & 0.6% from abroad visited **Amer** in the period from April to October 2015. Like-wise during the same period **Albert Hall** had a share of visitors as 92.6% Indian, 1.09% foreigner, 6.0% students from India and 0.23% from abroad.

It has been observed that tourists have greater inclination towards visiting Amer covering 55.03% visitors followed by Jantar Mantar 23.77% & Albert Hall 21.18 %.

Status of tourists visiting important tourist places in Jaipur during April till October 2015(By Chi-Square Method): Testing Hypothesis: Any

logical suggestion, defining an event or many events appearing as separate ones, is **Hypothesis**. There are two types of hypothesis. One is **Null Hypothesis** which is such a concept in which observed data for the purpose of verification can be proved wrong. The other one **Alternative Hypothesis** implies statistical importance amongst the two variables. In order to examine the above hypothesis, **Chi- Square Method** has been employed. It is one of the methods for testing Hypothesis on numerical as their sample distribution is Chi-Square distribution.

Chi Square Method: Where, **O=** Actual no. Of Tourists, **E=** Estimated no. Of Tourists, **Df=** Degree of Frequency (n– 1) $\mathbf{X^2}$ **=** Chi Square Method

Table9. Chi-Square Method

Major Tourist Destination	Jantar- Mantar	Albert Hall	Amer	Total
Actual No. of Tourist	400369	356779	926739	1683887
Estimated No. of Tourist	400487	356500	926900	1683887
Difference	118	279	161	
Deviation Squared **(O – E)2**	13924	77841	25921	
(O – E)2 / E	0.034768	0.218348	0.027965	X2 = 0.2810808

From the above table the scholar has tried to prove that the hypothesis based on earlier estimated number of tourist and then the actual who visited major tourist places in Jaipur. Here, degree of freedom is (3-1) 2 and probability is 2+0.05 = 2.05 i.e. level of significance is 2.05. Since, the value of Chi Square is less than the above; hypothesis made by the scholar is very near to actual.

Conclusion: Every year, around 20 lakhs tourists visit India. One third of them come to Rajasthan to invariably visit Jaipur, the Pink City. It has a special place in the tourist map not only in India but across the world. It has several attractive spots for domestic and foreign tourists. Some major attractions of Rajasthan are- Royal trains (Palace on Wheels & Rajasthan Royals on Wheels), Forts, Palaces & Havelies, Festivals, Handicraft, Heritage Hotels, Adventure Tourism, Rural & Eco Tourism, Architecture of religious places and temples, Classical & Folk dance and music. These invite tourists from all over the world and also generate employment and revenue for the state.

In five years from 2010 till 2014, visitors, who visited important tourist places in Jaipur, 68.9% were Indian and 31.1% foreigner. It has been observed that tourists have greater inclination towards visiting Amer covering 55.03% visitors followed by Jantar Mantar 23.77% and Albert Hall 21.18%. Researcher has established the relevance of the hypothesis made in this presentation by **Chi-Square Method**. Having included in the category of Smart City, it is being planned to develop old hotels, havelies and forts into heritage hotels in the city of Jaipur. This will have a boosting effect on tourism and facilitate further growth in this sector.

References:

Ader, H. J., Mellenbergh, G. J. and Hand, D. J. 2007. Advising on research methods: A consultant's companion, Huizen, The Netherlands: Johannes van Kessel Publishing.

Chhipa, O.P. 2004. Environmental and Socio-economic Impact of International Tourism in Rajasthan: A Study of Pushkar Valley. Proceedings of RGA XXXII conference, pp. 30-34.

Sharma, A.K., Sharma, M. 2011. Geo-Heritage Resources of Jodhpur (Tourism Impact and Assessment), P, XXXIX conf., pp. 57-63

(Referring to Jantar- Mantar, Albert Hall and Amer)

Dr. Pankaj Oswal (Lecturer)
Jeetendra Singh Meena (Scholars)
Department of Geography, Rajasthan University, Jaipur.

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-149-152
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Environmental Values & Ethics and the Gandhian Philosophy of Resource Management

Akhilesh Kumar Pandey

Humans have an inborn desire to explore nature and to unravel its mysteries. However modern society and educational processes have invariably suppressed these innate sentiments. Once exposed to the wonders of the wilderness, people tend to bond closely to nature. They begin to appreciate its complexity and fragility and this awakens a new desire to want to protect our natural heritage. This feeling for nature is a part of our constitution [*Article 48A and Article 51A (g)*], which strongly emphasizes this value. The western, modern approach values the resources of nature for their utilitarian importance alone. However, true environmental values go beyond valuing a river for its water, a forest for its timber or the sea for its fishes. Environmental values are inherent in feelings that bring about sensitivity for preserving nature as a whole. This is a more spiritual, Eastern, traditional value. There are several writings and saying in Indian thought that support the concept of the oneness of all creation, of respecting and valuing all the different components of nature.[1] Our environmental values and ethics must also translate into pro-conservation actions in all our day-to-day activities. Most of our actions have adverse environmental impacts unless we consciously avoid them. The sentiment that attempts to reverse these trends is enshrined in our environmental values.

Environmental ethics deal[2] with issues related to the rights of individuals that are fundamental to live and well being. These concern not only the needs of each person today, but also those who will come after us. It also deals with the rights of other living creatures that inhabit the earth. These issues are strongly related to how we utilize and distribute resources.

Resource consumption patterns and the need for equitable utilization - The just distribution of resources has global, national and local concerns that we need to address. There are rich and poor nations, communities and families. In this era of modern economic development, the disparity between the haves and have-nots is widening. Man in the urban, rural and wilderness sectors largely consumes natural resources that sift from the wilderness (forests, grasslands, wet lands etc.) to the rural sectors and from there to the urban sectors. Wealth also sifts in the some directions. Can individuals justifiably use resources so differently that are individual uses resources many times more lavishly than other individuals who have barely enough to survive? The unequal distribution of wealth and access to land and its resources is a serious environmental concern and it leads to inequalities and a subsequent loss of sustainability in resource management at the different level. This unbalanced (unsustainable) development is a part of economic growth of the powerful while it makes the poor poorer and consumerism is one aspect of this process. As the consumption of resources has till recently been an index of development, consumerism has thrived.[3] It is only recently that the world has come to realize that there are other more important environmental values that are essential to bring about a better way of life. In a just world, there has to be a more equitable sharing of resources than exists at present.

Equity-Disparity issues- Issues are concerned with who owns resources and how they are distributed. This can be looked at different levels. Humanity is facing these problems at global, regional and local levels; as well as rural- urban and gender levels also. At the global level it deals with the great North-South division between the rich industrialized nations of North America and Europe, as against the needs of developing countries of the South such as in South and South-East Asia, South America and Africa. People living in the economically advanced nations use greater amounts of resources and energy per individual and also waste more resources. This is at the cost of poor people who are resource- dependent and live in developing nations. These economically advanced communities have exploited their own natural resources to such an extent that they have exhausted them nearly everywhere else. They now buy their resources from resource rich but economically and politically deprived nations at a low cost. Such, this type of consumption pattern of resources is a question of morality.

Another example of disparity is found in developing and rural societies. Agricultural land, forests, ponds etc. were once held as a common resources of villages are being taken over by the urban and industrial sectors as they expand. As a result the common lands of the rural sector are being depleted of their resources. Thus while the cities get richer, the rural sector, especially the landless get poorer. This begs the question of who should control the environmental resources of a rural community. Unfortunately, women, poor and rural persons have not been given an equal opportunity in managing the village commons and their resources. It will be better to give them chances in decision-making bodies at the local level to develop and better their lot.

Social Justice and resource consumption- As the gulf widens between the haves and the have-nots, it is the duty of the former to protect the rights of the latter. If this is not respected, the poor will eventually rebel, anarchy and terrorism will spread and the people who are impoverished will eventually form a desperate seething revolution to better their own lot. Surely, we will face a crisis unless we protect the rights of poor people.

In ***1985, Anil Aggarwal*** published the first report on the ***status of India's Environment.*** It emphasized that India's environmental problems were caused by the excessive consumption patterns of the rich that left the poor poorer. It was appreciated for the first time that tribal, especially women and other marginalized sectors of our society, were being left out of economic development. There are multiple stakeholders in Indian society who are dependent on different natural resources, which cater directly or indirectly to their survival needs. He found out some points of great relevance to the ethical issues that are related to resource management[4] :-

(i) Environmental destruction is largely caused by the consumption of the rich.
(ii) The worst sufferers of environmental destruction are the poor.
(iii) Every where nature is being recreated as in aforestation, it is being transformed away from the needs of the poor and towards those of the rich.
(iv) Even among the poor, the worst sufferers are the marginalized cultures and occupations and most of all, women.
(v) There cannot be proper economic and social development without a holistic understanding of society and nature.

Equitable use of resources- In spite of the great number of people in the densely populated developing countries, the smaller numbers of the people in the

developed countries use more resources and energy than those in the developing world. This is equally true of the small number of rich people in poor countries whose per capita use of energy and resources, and the generation of waste based on the one time use of disposable products, leads to great pressures on the environment. As we begin to appreciate that we need more sustainable lifestyles, we also begin to realize that this cannot be brought about without a more equitable use of resources. Thus, it may be illustrated that the equitable use of resources is now seen as an essential aspect of human well-being and must become a shared point of view among all socially and environmentally conscious individuals.

Preserving resources for future generations- Until two and half decades ago, the world looked at economic status and highly industrialized infrastructures as the measures of human development. But after that the developed world has began to realize that their lives were being seriously affected by the environmental consequences of development and these economic indicators alone could not bring about a better way of life for people unless environmental conditions were improved. The modern development strategy makers have now approached the concept of sustainable development; an '*eco-friendly criteria of development'*. In Indian history and tradition, this concept of resource use has been already discussed; previously in Vedas and Puranas and latterly in Gandhian literatures.

Many decades ago, Mahatma Gandhi has designed a sustainable lifestyle for himself when these concepts were not a part of general thinking. He envisioned a reformed village community based on sound resource management. He believed in simplistic living to save our Earth's resources. Once he said that if India were to become an industrial nation on the lines of England, the world would be stripped bare of its resources by India's people alone. So, he stressed on the need for sanitation based on recycling human and animal manure and well-ventilated cottages built of recyclable material. His main objective was to use village made goods instead of industrial products. Gandhiji had deep insights into the need to conserve resources. This is based on his concept that *the world could support people's needs but not their greed*. He assumed that human being were not masters of the other forms of life; they were 'trustees of the lower animal kingdom'. All these principles are now considered part of sound long-term development. Experts on development now accept this strategy of development suggested by Gandhiji across the world.[5]

It has become obvious that the quality of human life has worsened as economies grew. The world now appears to be at a crossroads. It has taken the path of short-term economic growth and now suffers the consequences of environmental degradation at the cost of loss of quality of human life. The Earth cannot supply the amount of resources used and wasted by the economically well-off sectors of society as well the day-to-day needs of the ever-growing population in less developed countries. Society must thus change its unsustainable development strategy to a new form where development will not destroy the environment. This form of sustainable development can only be brought about if each individual practices a sustainable life style based on caring for the Earth. So, it has become obvious that development must begin to change from aiming at short-term economic gains to a long-term sustainable growth that would not only support the well-being and quality of life of all people living in the world today but that of future generations as well. The Gandhian philosophy of resource management is now can be equally called 'sustainable development of resources'. It is defined, as development that meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own

needs. It also considers the equity between countries and continents, races and classes, gender and ages. It includes social development and economic opportunity on the one hand, and the requirements of the environments on the other. It is based on improving the quality of life for all, especially the poor and deprived within the carrying capacity of the supporting ecosystems. It is a process that leads to a better quality of life while reducing the impact on the environment. It is an ethical issue that must be considered when we use resources unsustainably. If we overuse and misuse resources as well as energy from fossil fuels, our future generations' survival will be very difficult. A critical concern is to preserve species and natural resources that are linked with bioresources, which must be protected for the use of future generations. Just as our ancestors have left resources for us, it is our duty to leave them behind for our future generations. These unborn people have a right to these resources. We only hold the world as trustees for the future generations.

The conservation ethic and traditional value systems of India- In ancient Indian tradition, people have always valued mountains, rivers, forests, trees and several animals. Thus much of nature was venerated and protected both in the Hindu and tribal cultures. Certain species of trees and animals have been protected, as they are values for their mythological and religious importance. Many plants, shrubs and herbs are used in Indian medicines, which were one available in the wild in plenty. These are now rapidly vanishing.[6]

We, as citizens of our nation, and increasingly as citizens of one common future at the global level, must constantly monitor the pattern of development. If we see that a development project or an industry is leading to serious environmental problems, it is our duty to bring this to the attention of authorities such as the local administration, the Forest Department or the Pollution Control Board, to look into the issue. Further, if new development projects are being planned in and around the place where we live, it is our duty to see that this is brought about in accordance with environmental safeguards. While we all need to think globally, we need to act locally. We have to ensure that we change development from its present mandate of rapid economic growth without a thought for future ecological integrity, to a move sustainable ecologically appropriate strategy.

References:

1. Bharucha, Erach, Biodiversity of India, the Mapin Publishing, 2003.
2. Jadhav, H & Bhosale, V M Environmental Protection & Laws, Himalaya Publishing House, 1995.
3. Speth, James Gustave, Global Environmental Challenges: Transitions to a Sustainable World, Orient Longman, 2007.
4. Bharucha, Erach, Environmental Studies, University Press (India) 2006.
5. Gadgil, Mahadev, Ecological Journey, the Science and Politics of Conservation in India, Permanent Black, 2001.
6. Mayr, E. This is Biology: The Science of the Living World, University Press (India), 1999.

Dr. Akhilesh Kumar Pandey
Associate Prof. Dept. of Geography,
M. D. P. G. College, Pratapgarh, **U.P.**

श्रीप्रभु pratibha Part-36, July -September-2017, pg.-153-160
R.N.I–UPHIN/2008/30056, ISSN-0974-522X, JIF-2.397, UGC-47966

Army Deployed in Operational Areas

Abhishek Tripathi & Guljar Singh Rana

Depression is not a character flaw, nor is it simply feeling blue for a few days. Most importantly, depression is not your fault. It is a serious mood disorder that affects a person's ability to function in everyday activities. It affects one's work, one's family, and one's social life.

Today, much more is known about the causes and treatment of this mental health problem. We know that there are biological and psychological components to every depression and that the best form of treatment is a combination of medication and psychotherapy. Contrary to the popular misconceptions about depression today, it is not a purely biochemical or medical disorder.

Suicide is the tenth leading cause of death in the United States (US), with nearly 100 suicides occurring each day and over 36,000 dying by suicide each year. The rate is higher among 25 to 34 year-olds, for whom suicide is the second leading cause of death .While many die by suicide, each suicide represents approximately 25 suicide attempts; the lifetime risk of attempt for the general US population is estimated to be between 1.9 and 8.7 percent. Among Veterans and current military, suicide is a national public health concern. Recent estimates suggest current or former military represent 20 percent of all known suicides in the US, and the rate of suicides among Veterans utilizing Veterans Health Administration (VHA) services is estimated to be higher than the general population. The impact suicide has on family, friends, and community can be overwhelming. Furthermore, suicide attempts may leave the individual severely injured, requiring extensive medical treatment and rehabilitation. The lifetime cost of medical treatment resulting from self-inflicted injuries in 2000 was estimated to be $1 billion. The enormity of the problem has led to several major public health initiatives and a growth in research funding for suicide prevention.[1]

Similar to other public health concerns, two main approaches to suicide prevention have taken shape: 1) the identification of individual-level risk factors, with the goal of developing targeted interventions; and 2) the development of population-level prevention strategies. Prior research has identified several risk factors, most notably older age, male sex, physical and mental health disorders (including depression and substance use disorders [SUD]), familial and genetic influences, impulsivity, poor psychosocial support, and access to and knowledge of firearms. Unique to the Veteran population are additional risk factors, such as traumatic brain injury (TBI),habituation to violence, and deployment-related issues (strained relationships, stressful events, and post-deployment adjustment).several autopsy studies of the events leading up to suicide have suggested the

majority of individuals who die by suicide exhibit symptoms of depression or other mental health issues prior to death. Additionally, approximately 32% of individuals make contact with a mental health care provider and 77% make contact with a primary care provider during the year prior to suicide. In one study of Veterans who died by suicide in Oregon, 22% made contact with Veteran Affairs (VA) healthcare providers during the year prior to suicide, a rate similar to the estimated one-quarter of Veterans who access VA care annually[2]. As such, targeted interventions have been primarily developed for use in healthcare to treat individuals who present with suicidal thoughts, attempts, or other risk factors, or who are otherwise identified at risk (e.g., as a result of a suicide risk assessment).Population-level approaches do not require prior identification of individuals at risk but are designed to reduce suicide using strategies such as providing help-seeking resources (e.g., hotlines, community health centers), environment modification of possible triggers or available means (e.g., media guidelines on suicide reporting, bridge barriers), education and awareness (e.g., public service announcements [PSAs] on the warning signs of suicide), or population-wide screening (e.g., screening all school children)[3].

Despite these and other suicide prevention efforts, the suicide rate in the US has changed relatively little over the past 100 years. The methodological difficulties in studying suicide are similar to those inherent in studying any natural phenomenon (e.g., lack of condition assignment), yet is made more difficult by suicide's relatively low base rate[4] .The paucity of high-quality studies available to offer evidence for effective intervention approaches is not surprising. Furthermore, many suicide risk factors often fail to predict suicide at the individual level, producing numerous false positives. These difficulties highlight the importance of increased focus on research and the continued synthesis of evidence as it is made available, especially with regard to individual-level intervention approaches.

Meaning and definition of suicide- Suicide (Latin suicidium, from Sui caedere, "to kill oneself") is the act of intentionally causing one's own death. Suicide is often carried out as a result of despair, the cause of which is frequently attributed to a mental disorder such as depression, bipolar disorder , schizophrenia , borderline personality disorder, alcoholism, or drug abuse .Stress factors such as financial difficulties or troubles with interpersonal relationships often play a role. Efforts to prevent suicide include limiting access to method of suicide such as firearms and poisons, treating mental illness and drug misuse, and improving economic circumstances. Although crisis hotlines are common, there is little evidence for their effectiveness.

The most commonly used method of suicide varies by country and is partly related to availability. Common methods include: hanging, pesticide poisoning, and firearms. Suicide resulted in 842,000 deaths in 2013 up from 712,000 deaths in 1990. This makes it the 10th leading cause of death worldwide. Rates of successful suicides are higher in men than in women,

with males three to four times more likely to kill themselves than females. There are an estimated 10 to 20 million non-fatal attempted suicides every year. Non-fatal suicide attempts may lead to injury and long term disabilities. Attempts are more common in young people and females[5].

Views on suicide have been influenced by broad existential themes such as religion, honor, and the meaning of life. The Abrahamic religions traditionally consider suicide an offense towards God due to the belief in the sanctity of life. During the samurai era in Japan, seppuku was respected as a means of atonement for failure or as a form of protest. Sati, a now outlawed practice, expected the widow to immolate herself on her husband's funeral pyre, either willingly or under pressure from the family and society.

Suicide and attempted suicide, while previously illegal, are no longer in most Western countries. It remains a criminal offense in many countries. In the 20th and 21st centuries, suicide in the form of self-immolation has been used on rare occasions as a medium of protest, and kamikaze and suicide bombings have been used as a military or terrorist tactic.

Causes of Suicide- Suicide is defined as the act of intentionally causing one's own death. There are many factors that play a role in influencing whether someone decides to commit suicide. Nearly everyone experiences suicidal thoughts at one point or another throughout their existence. Everyone deals with tough times, but some people have been dealt a tougher hand when it comes to life circumstances, past trauma, mental and/or physical illness, social standing, and ability to cope with depressive emotions.

People are most driven to suicide when they view their current situation as being completely hopeless and feel as if they have no way to change things for the better. Common causes of suicide include: depression, drug abuse, financial problems, as well as difficulties with relationships. Although there are crisis hotlines that have been developed to help people feeling suicidal, the jury is out as to whether they even help.

Some ideas for preventing suicide include things like: banning firearms, developing better treatment for mental illness, and economic improvement. Most people that commit suicide do so because they are in some sort of pain and cannot seem to find a way out. Much work still needs to be done on coming up with more effective ways to help individuals that struggle with suicidal thinking as up to 1,000,000 people die every year from suicide.

Suicide among Soldiers- Operating in a tension-ridden counter-insurgency environment does lead to certain stress among the jawans, but that is only one of the factors. The main worry are the problems back home-land disputes, tensions within the family- rising aspirations, lack of good pay, allowances & also the falling standards of supervision from some officers, and all these factors have led to major stress.

For the ordinary soldier, the smallest patch of land back home is the most precious property. Again, I have frequently come across a common thread where soldiers say there is no tension in actual work of counter-insurgency. The main problem for the *fauji* comes from his domestic situation.

Add to it the fact that society no longer respects the soldier and his work in protecting the nation. A local politician, a *thanedar*, seems to command more clout in society today. This has often led to loss of self-esteem among ordinary soldiers. A recent movie, *Paan Singh Tomar*, depicted, in some measure, the humiliation that a soldier faces in the civilian environment, both while serving and after retirement from the armed forces.

As a former army commander had once pointed out, "You see he (the soldier) comes from a society where he compares himself with others and when he realizes that he is at a disadvantage -- the kind of respect that his predecessors had is no longer there".[6]

Senior officers point out that most suicide and fratricide cases take place after soldiers return from leave. It is precisely this concern that had prompted previous Defense Minister Mr. A.K Antony to write to all chief ministers some years ago asking them to sensitize district administrations in their states to the needs of the soldiers. State governments were asked to set up a mechanism at district and state levels to address soldiers' grievances.

As the armed forces are in themselves a microcosm of India, the rising education and awareness levels in recruits are easily perceived. A sea change from yesteryear is now visible in the hordes of young men who crowd recruitment rallies across the country. Most hopefuls are the educated unemployed youth who turn towards military for acquiring early financial and social security. Educational qualification is Std XII on an average, many being graduates too. The stereotype of an innocent, less educated but hardy soldier is now a thing of the past. The officer base has also shifted predominantly to the middle class. This has further narrowed the gap between the ‘leaders’ and ‘followers’.

Very often young officers with less than two years of service are commanding companies, even in the battalion headquarters, one officer ends up doing the job of three given the shortage. There is no time to interact with soldiers. In the old days, a game of football or hockey was the best way to get to know each other. Not any longer.

The average Indian soldier remains as hardy as before but he is certainly confused with the pace of change occurring all around him. It is here that the leaders -- the officers -- will have to adapt themselves to the new reality. The age-old system of regimental traditions and values is robust and serves to develop camaraderie and loyalty between the led and the leader even now. The new fashion to dismiss them as outdated ideas must be arrested. Military ethos are not developed overnight and are certainly not imbibed by pandering blindly to the changes in society.

What, however, must be done is to eliminate the overwhelming trend to be a ‘careerist'. The desire to advance career at any cost, to strive for promotion even by cutting corners, and craving for awards as a means to boost chances of attaining the next rank has become a rampant practice among the officer class. Preservation of self has exaggerated that protection and advancement of career at all levels seem to have become a *sine qua non* for most officers.

The Indian military, despite its recent problems, remains a very fine institution. To remain relevant and effective, it must however embrace change with discretion. Therein lies the trick in meeting the increasing challenge posed to the military leadership.

Studies in abroad related to suicide in army- Suicide rates soared among soldiers who went to war in Iraq and Afghanistan and those who never left the United States, according to the largest study ever conducted on suicide in the military.

Scientists have long speculated that the fast-paced tempo the Army was under at home and abroad during the war years was an overall strain that contributed to suicides and that deaths were not just a factor of combat duty. The research by the National Institute of Mental Health appears to bear this out. The research tracked soldier records through the end of 2009. But suicides in the Army continued to rise thereafter, reaching a record high in 2012 before dipping last year[7].

• Researchers debunked theories that suicides were the result of two Army trends designed to recruit or retain people. One trend was the use of waivers for recruits with poor education or conduct records. The other was the practice of forcing soldiers to remain in the service beyond their enlistment, something known as "stop-loss." Neither practice contributed to the rise in suicides, researchers found.

• Some of the same risk factors that predict suicide - such as a history of mental health problems, a demotion in rank or a disciplinary action - also were found to predict fatal accidents among soldiers.

• About one in four soldiers in the Army appear to suffer from at least one psychiatric disorder and one in 10 has multiple disorders.

• Women have lower suicide rates than men in the Army except during deployments.

• About a third of soldiers who attempted suicide are associated with mental disorders developed before they joined the Army, an indication that the service could do a better job of screening recruits[8].

Studies in India related to suicide in army- A string of incidents involving indiscipline and insubordination in the Indian armed forces has set off alarm bells in India’s defense establishment. Since May last year, there have been at least four violent clashes between officers and jawans (soldiers) of the Indian army. Two of these occurred over a span of five days last month.

In an incident, jawans of an infantry battalion in Meerut near New Delhi beat up officers after an altercation over a boxing match. The officers had reportedly "roughed up" a jawan for losing the match. Four days later, the commanding officer (CO) of a battalion in Batala in Punjab was assaulted when he took disciplinary action against a jawan for reporting late to work.

In fact, the army seems to be losing more men to suicide and fratricide than to enemy bullets. The number of soldiers who die "battling their internal demons" is said to be four times the number killed in counter-insurgency operations in India's conflict-wracked Kashmir and the Northeast.[9]

Given the nature of their job, stress is inevitable among soldiers the world over. The problem has deepened in India as soldiers are deployed to deal with insurgencies over prolonged periods. Because of operational requirements and a shortage of personnel, they are rarely given time off to visit their families or to deal with problems back home.

And problems at home seem to be a major source of stress. According to Col K C Dixit, a former research fellow in the New Delhi-based Institute of Defense Studies and Analyses and author of the book, Warfare," The most common stress factor among defense personnel, especially those who hail from rural India, is land disputes back home."

Vacation time to go home is primarily meant for jawans to rest and recoup. However, when they go home, they are preoccupied with "tackling land disputes, without any fruitful results." When they return to work with the "enhanced burden" of unresolved domestic issues on their minds, he said, their motivation at work and emotional and mental well-being suffers.

Analysts have attributed officer-jawan tensions to class conflict in the armed forces. Not only do officers look down on the lower ranks but also officers whose fathers were jawans are *subjects of condescension&worse; senior officers in the military have gone to lengths to conceal the fact that their fathers served as enlisted men."*

And increasingly, the rank and file is unwilling to endure quietly humiliating treatment meted out to them by the officers. An official in the Ministry of Defence (MoD) attributed growing insubordination in the army to increasing awareness among jawans. "Unlike in the past, when there was a big gap in their socioeconomic backgrounds, jawans today, especially those from urban areas, are educated. "They do not consider themselves as inferior to the officers." In addition, corruption scandals involving officers have contributed to undermining the stature of the officer class in the eyes of the lower ranks.

Rationale of the study- The longest paper written for the Institute of Defence Studies and Analyses in March 2014, 'Although from disaster relief in floods, tsunami, and earthquakes to rescuing infant Prince from a deep tube well and from quelling rioters in communal strife to being the last resort in internal counter-insurgency operations, the Indian Army is omnipresent; as an instrument of the State the Army's effectiveness is being blunted through a series of ill-advised and ill-thought-out decisions. 'The Army remains

rooted in an outdated, British-inherited system that is struggling to cope with the combination of challenges posed by demands of modern warfare and a society that is undergoing a great churn.

This has posed a great challenge to the famous officer-men relationship in the Indian armed forces. In the past decade, the armed forces are faced with a new problem: increasing incidents of indiscipline, suicides and fratricide. Are these incidents happening because the traditional bond between officers and men, the bedrock on which the military functions, is fraying at the edges? Are there other external factors that are impinging upon the armed forces' functioning and eroding some of its admirable values?

Some studies have been initiated to get to the root of the problem after it was noticed that more than 90 soldiers were committing suicide every year since 2003, the figure going up to an alarming 150 in 2008. Adding to the worry is the growing cases of indiscipline and intolerance. In 2012 alone, there were at least three cases of showdown between men and officers. At least 50 to 60 soldiers of an artillery unit clashed with a group of officers after a young officer allegedly beat up a jawan, leading to near-mutiny among the soldiers.[10]

There were a couple of other instances where tension between jawans and officers boiled over, both the incidents happening in two different armoured regiments, one following suicide by a soldier. This set the alarm bells ringing in the army headquarters and although the top brass publicly maintained the issue wasn't as serious as made out to be, Defence Minister A K Antony in a written answer to the Lok Sabha, said, "The incident of suicide by an army personnel on August 8, 2012, in the Samba sector of Jammu and Kashmir led to unrest."

A former Vice-Chief of the Army Staff, Lieutenant General Vijay Oberoi, also said it's a matter of concern and it's time to take note. In a recent article General Oberoi said, 'Three incidents of collective indiscipline by jawans in the last few months, reflecting a breakdown in the traditionally close officer-man relationship, are a cause for concern, especially as all three of them are related to combat units, where a stable and healthy officer-man relationship is an article of faith.'

Some others, however, maintain that these are isolated incidents and they should not be taken as an indication of a trend in as large an army as India's with 1.1 million soldiers. But for a force that prides itself on its standards of training and discipline, these incidents should certainly serve as timely warnings. As it was written in the immediate aftermath of these acts of indiscipline: It's time to ask the question -- Is the Indian Army feeling the heat of being in perpetual operations? Are our soldiers' stress levels peaking dangerously? Making them prone to acts of indiscriminate violence?

A psychiatric study by army doctors a couple of years ago on 'Evolving Medical Strategies for Low Intensity Conflicts' revealed the huge range of issues soldiers in such situations have to confront, contradictions

between war and low-intensity conflict situations and particularly the concepts of 'enemy', 'objective' and ‘minimum force’.[11]

Some other findings with previous researches;

• In general war the nation looks upon the soldier as a savior, but here he is at the receiving end of public hostility.

• A hostile vernacular press keeps badgering the security forces, projecting them as perpetrators of oppression.

• Continuous operations affect rest, sleep and body clocks, leading to mental and physical exhaustion.

• Monotony, the lure of the numbers game, and low manning strength of units lead to overuse and fast burnout.

Refrences:

1. Beautrais AL (2011). Suicide in Asia. Crisis 27:55-57.
2. Asnani V, Pandey UD, Chaudhary PN, Singhal SNP, Tripathi RK, Stress & job satisfaction among soldiers operating in counterinsurgency areas. DIPR Note No. 562. 2001:3–33.
3. Bhat PS, Mehta VK, Chaudhurys S. Evaluation of psychological effects of service in counter insurgency operations on soldiers. AFMRC Project No. 3164/2003.
4. Paykel ES. Scaling of life events. Arch Gen Psychiatry 1991;25: 340–347.
5. Vijayakumar L, John S, Pirkis J, Whiteford H (2005b). Suicide in developing countries (2): Risk factors. Crisis 26:112-119.
6. Chaudhury S, Chakraborty PK, Pande V, John TR, Saini R, Rathee SP. Impact of low intensity conflict operations on service personnel. Ind Psychiatry J 2005;14:69–75.
7. **www.bbc.com**
8. Raju MSVK, Srivastava K, Chaudhury S, Saluja SK. Quantification of stressful life events in service personal. Ind J Psychiatry 2001; 43:213–218.
9. Annual Health Report for the Armed Forces India. Published by the Director General Armed Forces, 2009.
10. WHO (2009) Meeting on Suicide in the Western Pacific Region. (Report on meeting held in Manila, Philippines in 2009).
11. Singh G, Kaur D, Kaur H. Presumptive stressful life events scale (PSLE). a new stressful life events scale for use in India. Ind J Psychiatry 1984; 26:107–114.

Dr. Abhishek Tripathi (Asst. Professor)
Guljar Singh Rana (Research Scholar)
Dept. of Sociology, NGBV Allahabad.